चार्ली चैप्लिन ने कहा था

कहानी-संग्रह

चार्ली चैप्लिन ने कहा था

कहानी-संग्रह

लेखक
अरुण अर्णव खरे

इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड
नोएडा-201301

इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड
मुख्यालय : सी-122, सेक्टर 19, नोएडा, 201301
गौतमबुद्ध नगर (एन. सी. आर. दिल्ली)
फोनः +91 120437693, मोबाइल +91 9873561826
ई–मेलः indianetbooks@gmail.com
website: www.indianetbooks.com

© स्वत्त्वाधिकार : अरुण अर्णव खरे

प्रथम संस्करण : 2021

ISBN : 978–93–89856–72–9
(आई एस बी एन प्रायोजक : ओसियन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-110053 **)**

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा, किसी भी रूप में या किसी भी प्रकार से इलेक्ट्रॉनिक, मशीन, या फोटोकॉपी या रिकॉर्डिंग द्वारा प्रतिलिपित या प्रेषित नहीं किया जा सकता।

विशेष सूचना

इस पुस्तक में लिखित साम्रगी लेखक/लेखिका के अपने विचार है, जिसके लिए प्रकाशक उत्तरदायी नही होगा।

मूल्यः रुः 300/– (पेपर बैक)

आवरण : सुनील कुमार

मुद्रितः बालाजी ऑफसेट, दिल्ली- 110032

इस संग्रह की कहानियाँ

लोकजीवन से अनुभूत काल्पनिक कहानियाँ हैं

जिनका किसी व्यक्ति या घटना विशेष से कोई सरोकार नहीं है।

समर्पित है उन्हें

जिनके आशीर्वाद और स्नेह ने

मुझे इस काबिल बनाया कि मेरी लेखनी

सर्व समभाव की अनुगामी बनकर

लोकमंगल की दिशा में कुछ सार्थक रच सके ..

स्व० गया प्रसाद खरे एवं स्व० शांति देवी खरे

अपनी बात

"वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान। निकलकर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।" सुमित्रानंदन पंत की लिखी इन पंक्तियों का प्रतिपाद्य यह है कि वियोग और आह की अनुभूति से कविता जन्म लेती है। मुझे लगता है कि कहानियों के मामले में भी उक्त कथन सही है। पिछले एक वर्ष की घटनाएँ और मेरा नवीन कहानी संग्रह मेरी इस मान्यता को सही ठहराता है। इस कालावधि में हमने मानव की विवशताओं, लाचारी, पीड़ा, आपाधापी, संघर्ष, जिजीविषा, अवसाद, डर, आँसू और संवेदनाओं के इतने रूप देखे हैं कि उन पर लिखने बैठो तो कलम तक विह्वल होने लगती है। इस दौर ने जिंदगी का समूचा मिजाज बदल कर रख दिया है। जिंदगी जीने के मायने और तौर–तरीके बदल गए हैं। लोगों से मिलना–जुलना बंद हो गया, काम–धंधे चौपट हो गए, खाने–कमाने के रास्ते संकुचित हो गए, दुख–दर्द बाँटने का जज्बा तंग हो गया और तो और अपनों की अंतिम यात्रा तक में जाने से डर लगने लगा। कुछ चीजें अच्छी भी हुईं। घरों में कैद रह कर लोगों ने परिवार के महत्व को समझा, जिंदगी के दूर होते लम्हों को सहेज कर रखना सीखा, जीवन–यापन के नए तरीके खोजे, नफरत के बीच प्रेम और संवेदनाओं की नई इबारत लिखते हुए लोगों को देखा, पर्यावरण में सुधार हुआ और चुनौतियों से जूझने का हौसला पनपा।

अपने पहले कहानी संग्रह "भास्करराव इंजीनियर" की "अपनी बात" में मैंने लिखा था कि हर व्यक्ति एक कहानी है और हर घटना किसी न किसी कहानी का प्लेटफॉर्म होती है। चूँकि साहित्य समय सापेक्ष होता है अतः समय की अनदेखी कर साहित्य लेखन नहीं किया जा सकता। कहानी भी इस बंधन से अछूती नहीं है। कहानी लिखी नहीं जाती बल्कि लिख जाती है। परिवेश, पात्र और परिस्थितियाँ कहानीकार को मजबूर करती हैं कि उनपर लिखा जाए। यदि पात्र आम जिंदगी के हों तो कहानी स्वयमेव अपने उद्देश्य और गंतव्य तक पहुँच जाती है। पिछले एक साल की घटनाओं ने इस बात को और पुख्ता किया है कि हर व्यक्ति न केवल एक कहानी है अपितु हर घटना में कहानी की अपार संभावनाएँ निहित होती हैं।

यह संग्रह "चार्ली चैप्लिन ने कहा था" इस त्रासद समय की अनुभूतियों से उपजा कहानी–संग्रह है। इस संग्रह की कहानियों को पिछले दिनों घटी कुछ त्रासद और सुखद घटनाओं को केंद्र में रखकर लिखा गया है, जिनमें वर्तमान द्वारा छोड़े गए पदचिन्हों को देखा जा सकता है, जिंदगी की साँसों और आहों की

उष्णता को महसूस किया जा सकता है, समय द्वारा नए सिरे से परिभाषित किए गए जीवन–मूल्यों को पढ़ा जा सकता है। संग्रह की अनेक कहानियों में भूतकाल में घटित घटनाओं को कोरोना–काल की त्रासदी से जोड़कर कुछ नया कहने की कोशिश की गई है। यहाँ यह उल्लेख करना भी मैं जरूरी समझता हूँ कि कहानियों में किसी घटना विशेष का जिक्र केवल सांकेतिक और सामयिकता के लिहाज से किया गया है। कथा तत्व पूरी तरह लेखकीय कल्पना और जीवन के अनुभवों से उपजा सार है। कोई भी कहानी किसी व्यक्ति विशेष से सम्बंधित नहीं है, केवल मानव–प्रवृत्ति को उद्घाटित करने के लिए पिछली कुछ घटनाओं का केंद्रीय भाव लिया गया है। कहानियों में वर्णित सारे पात्र काल्पनिक हैं।

संग्रह की कुछ कहानियाँ अतीत में घटी घटनाओं से शुरु होकर कोरोना काल की त्रासदी पर आकर अपना मुकाम हासिल करती हैं। ऐसी कहानियों में जॉटर रिफिल पेन, विश्वासघात, साझा संस्कार, उदास क्यों रहती है जोजो और सद्‌गति जैसी कहानियों को रखा जा सकता है। "जॉटर रिफिल पेन" कहानी में स्कूली दिनों को याद करते हुए कोरोना काल में नौकरियों पर आए संकट को रेखांकित करने की कोशिश की गई है। "विश्वासघात" ओलिम्पिक खेलों के एक साल टल जाने से उपजी हताशा की कहानी है जिसमें कोच एक होनहार खिलाड़ी को राह से हटाने के लिए रची गई साजिश और अपनाए गए तमाम हथकंडों को यादकर आत्मावलोकन करता है। "साझा संस्कार" प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी पंच परमेश्वर से अभिप्रेरित कहानी है तो "उदास क्यों रहती है जोजो" समाज में बढ़ रही दरिंदगी और दूषित मानसिकता की सच्चाई से रूबरू कराने की कहानी है। "सद्‌गति" में नायक के एकाकीपन और मानसिक ऊहापोह को आधार बनाया गया है।

संग्रह की शेष कहानियों में इस त्रासद काल की विसंगतियों, विडम्बनाओं और विरोधाभासों के साथ ही अच्छाइयों को भी अभिव्यक्त करने की कोशिश की गई है। शीर्षक कहानी "पहला पॉजिटिव" त्रासद समय के प्रारंभिक दौर की याद दिलाती रचना है जब लोग अपने आसपास रहने वाले या किसी परिचित व्यक्ति के कोरोना पॉजिटिव होने की खबर सुनते ही एक अजीब सी बेचैनी, एक अनचीन्हे डर और एक निःसहाय भाव से भर जाते थे। इसी दौर में धार्मिक–संकीर्णता को भी हवा दी जा रही थी। इसी भावभूमि पर लिखी इस कहानी में नायक की संकीर्णता, चालाकी, स्वार्थपरता के साथ ही उसकी विवशता को भी उभारने का प्रयास किया गया है। "चार्ली चैप्लिन ने कहा था" कोचिंग के लिए कोटा गए बच्चों के मानसिक द्वंद्व, मित्रता, प्रेम और जीवटता की कहानी तो है ही, साथ ही लोकसेवकों की स्वार्थपरता और ओछी मानसिकता की भी कहानी है। "यात्रा" सड़कों पर उतरे हजारों मजदूरों के सैलाब को देखकर एक बाप–बेटी के भी अपने घर की

ओर पैदल चल पड़ने की संघर्ष गाथा है। घरों में काम करने वाली मेड–सर्वेंट्स की विवशता को "उपकार" कहानी में उठाया गया है तो दूसरी ओर "लॉकडाउन : वरदान कथा" में एक परिवार ने लॉकडाउन की विवशता को किस तरह वरदान में रूपांतरित किया, उसकी बानगी है। "ऋण" कहानी में बहिन, भाई की निर्ममता के शिकार नौकर को शरण देकर भाई को अत्याचार से ऋण मुक्त करना चाहती है वहीं कालांतर में नौकर मालकिन के उपकार का ऋण चुकाने में समर्थ होता है।

इस संग्रह की कुछ कहानियाँ समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं तथा चर्चित भी हुईं हैं। इस संग्रह को प्रकाशित करने से पहले मैंने एक नवाचार भी किया है। मैं नहीं जानता कि नवाचार शब्द यहाँ उपयुक्त है या नहीं लेकिन मेरी इच्छा संग्रह को नए रूप में सामने लाने की जरूर थी। इसके लिए मैंने देश के कुछ चुनिंदा कहानीकारों/साहित्यकारों को ये कहानियाँ पढ़ने के लिए भेजी और उनसे उनके अमूल्य मत देने का अनुरोध किया। इन नामचीन लेखकों के अमूल्य मतों को प्रत्येक कहानी के अंत में दिया गया है। वैसे मेरी सभी कहानियों के पहले पाठक युवा लेखक नवीन जैन हैं जिन्होंने मुझे वर्तनी की गलतियों सहित वाक्य–विन्यास में सुधार के सुझाव दिए जो संभवतया मेरी दृष्टि में पुनर्लेखन के दौरान भी नहीं आ पाते। कहानियों पर अपना मत देने वाले समस्त रचनाकार साथियों का मैं आभार व्यक्त करता हूँ और नवीन जैन को शुभाशीष देना चाहता हूँ कि साहित्य के प्रति उसका अनुराग, लगन और निष्ठा बनी रहे, उसे अभी बहुत दूर तक जाना है।

इस संग्रह की भूमिका वर्तमान समय की महत्वपूर्ण कहानीकार हंसा दीप ने लिखी है। मैं उनका हृदयतल से शुक्रगुजार हूँ कि उन्होंने मेरे अनुरोध को स्वीकार किया और अल्प समय में कहानियों की सार्थक मीमांसा करते हुए अपने विचार व्यक्त किए। अंत में मैं अपनी जीवन संगिनी माला के प्रति भी स्नेहिल आभार प्रदर्शित करना चाहता हूँ जिनके सहयोग और प्रेरणा से ही मैं अपनी सृजनात्मक–यात्रा को कायम रख पाता हूँ।

अपना दूसरा कहानी–संग्रह आपके हाथों में सौंपते हुए हर्षित हूँ और आशान्वित भी हूँ कि आपका भरपूर स्नेह इस कहानी संग्रह को प्राप्त होगा।

भोपालः नवम्बर 21, 2020

अरुण अर्णव खरे

डी–1/35 दानिश नगर

होशंगाबाद रोड, भोपाल (म० प्र०) पिन 462026

मोबा० 9893007744

ई मेलः arunarnaw@gmail.com

कोविड–19 के नकारात्मक व सकारात्मक पक्षों पर लिखी सार्थक कहानियाँ

समूचा विश्व तेज गति से दौड़ रहा था, आज यहाँ तो कल वहाँ। इस बात से सब अनजान कि वर्षों से चल रही इस दौड़ को रोकने की योजना नियति ने बना ली थी। महीनों तक घरों में बंद करने की योजना, इंसानों के उड़ते परों को काट देने की योजना। महामारी कोरोना बनाम कोविड–19 ने ऐसा जाल बिछाया कि स्वयं को धरती का सबसे ताकतवर प्राणी मानने वाला इंसान खामोशी से घर के पिंजरे में कैद होकर रह गया। इसी महामारी से जूझते लोगों पर केंद्रित, समर्थ रचनाकार अरुण अर्णव खरे की कुल ग्यारह कहानियाँ अपनी उपस्थिति दर्ज करवाते हुए पाठकों पर गहरा असर छोड़ने का माद्दा रखती हैं। अरुण जी का नाम कहानी एवं व्यंग्य की दुनिया में जाना–माना एवं सुपरिचित है। आपके एक उपन्यास, एक कहानी संग्रह, दो व्यंग्य–संग्रह तथा दो काव्य कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

पहला पॉजिटिव – कथा संग्रह की पहली कहानी है। कोविड–19 के प्रारंभिक दिनों की भयावहता और उससे जूझते लोगों की मनोदशा का जीवंत चित्रण है इस कहानी में। जाने–अनजाने हमारे मन में किसी के प्रति पूर्वाग्रह होता है। इसी वजह से उसकी अच्छाइयों में हमें साजिश नजर आती है। फातिमा आंटी का किरदार इस व्यथा को बयान करता है। बेहद सतर्कता से उठायी गयी समस्या को एक खूबसूरत अंत देती यह कहानी बहुत कुछ कह जाती है। यहाँ कथाकार का कौशल सुगठित ताना–बाना तो बुनता ही है, साथ ही भाषायी चतुरता भी परिलक्षित होती है – "उस दिन पनपे संदेह के पौधे को तो अब तक पेड़ बन जाना चाहिए था पर लगता है उससे गलती हो गई। सुचित्रा भाभी के मन में पौधा रोप कर वह खाद पानी देना भूल गया, तभी पौधा पेड़ बनने से पहले ही सूख गया।"

जॉटर रिफिल पेन – बचपन और उसके बाद के जीवन में परिवर्तन किस तरह संबंधों को एक नई दिशा देता है। किसी भी व्यक्ति से कभी भी कोई काम पड़ सकता है। यही हुआ नैंसी के साथ, अपनी बचपन की गलतियों को उसने सुधारा माफी मांगकर। एक छोटा सा शब्द होता है माफी लेकिन संबंधों को नया जन्म देने की ताकत रखता है। जॉटर रिफिल पेन की एक छोटी–सी याद के सहारे लिखी कहानी है यह। मित्रों के बीच में किस तरह से छोटी–छोटी बातों को लेकर नाराजगी हो जाती है। उम्र का वह पड़ाव ही ऐसा होता है जब नासमझियों की गुंजाइश होती है। लेकिन धीरे–धीरे जीवन में समझदारी का प्रवेश होता है तब उन

पुरानी नादानियों के लिए भी माफी मांगने का दिल करता है। यह एक सहज और सरल शैली में लिखी प्यारी–सी कहानी है।

चार्ली चैप्लिन ने कहा था – कोविड में फँसे छात्रों के जद्दोजहद की कहानी। एक कथ्य के साथ इतने सारे नए चरित्रों को लेकर एक नयी कहानी बनाना रचनाधर्मिता के नए आयाम प्रस्तुत करता है। इस कहानी में युवा पीढ़ी ने कोरोना की चुनौती को बखूबी स्वीकार कर मित्रता का धर्म निभाया। कई दिन तक मित्र हर परेशानी को साथ झेल रहे थे, लेकिन आखिर में अपनी बेटी को लेकर कुमुद के पापा चले जाते हैं। यह अनपेक्षित अंत एक प्रश्न खड़ा कर देता है। बड़ों के स्वार्थ की ओर लेखक इशारा करते हैं। बच्चों की मित्रता के गहरे बंधन को, भावनाओं को नकारना एक दुखद टीस के साथ मन पर गहरी छाप छोड़ जाता है।

विश्वासघात – लेखक ने खेलों में आगे बढ़ने की होड़ व अपने साथियों से विश्वासघात करके स्वयं को आगे लाने की प्रवृति को बेहद सजीवता से प्रस्तुत किया है। लेकिन झूठ के पैर अधिक देर नहीं टिकते, सारे खेल ही कोविड की भेंट चढ़ जाते हैं। तब इतनी मेहनत से की हुई तैयारी या फिर डोप टेस्ट में फेल हो जाने की मायूसी सब कुछ एक ही अंत पाते हैं। अंतरराष्ट्रीय खेलों में जब ऐसा होता है तो असली प्रतिभाओं से अवसर छीन लिए जाते हैं। धोखेबाज न तो स्वयं जीत पाते हैं, न देश का नाम ऊँचा करने देते हैं। यहाँ लेखक की कलम खिलाड़ियों की मनोदशा, खेल भावना तथा वैयक्तिक स्वार्थ को इंगित करते हुए आम आदमी को खेल की दुनिया से परिचित करवाती है।

यात्रा – बेहद मर्मस्पर्शी कहानी है। कोविड काल को नजरों के सामने लाती हैं ये पंक्तियाँ – "दहशत इतनी कि दिन में मुश्किल से ही कोई बस्ती में दिखाई देता था। जो थे, वे अपने घरों में दुबके रहते। वातावरण में हरदम एक अजीब सा खौफ, एक विचित्र सी बेचैनी घुली रहती।" पाठक इस कहानी के कथ्य को सच्चाई के बहुत करीब पाता है। कोविड काल में ऐसी कई घटनाएँ हुई हैं। ऐसी स्थितियाँ आयी हैं जब बच्चों ने माता–पिता की जिम्मेदारी ओढ़कर अदम्य साहस का परिचय दिया। यह कहानी उस सत्य घटना से प्रेरित मालूम होती है जब बेटी ने पिता के लिए कई सौ किलोमीटर की यात्रा का बोझ अपने कंधों पर ले लिया। लेखक ने अपनी शाब्दिक कला की गहराई के साथ इसे खूबसूरती से प्रस्तुत किया है।

साझा संस्कार – धर्मनिरपेक्षता भारत की गर्व भरी पहचान है। बावजूद इसके, हर भारतीय इस बात को स्वीकारता है कि 1947 के बाद से आज तक हिन्दू–मुस्लिम के बीच की खाई पाटने की हर कोशिश नाकाम ही रही है। दो संप्रदायों के बीच भाईचारे से रहने वाले लोगों में शरारती तत्व आग लगाने से बाज नहीं आते। यही

सार है इस कहानी का। कहानी का प्रारंभ पंच परमेश्वर के अलगू चौधरी और जुम्मन शेख की चर्चा के साथ होता है। मुकुटधर और फतह मोहम्मद की कुछ वैसी ही दोस्ती का चित्रण करते हुए लेखक ने बेहतरीन ढंग से कथ्य को आगे बढ़ाया है। अपराधों की दुनिया बहुत बड़ी है, स्नेह व सौहार्द्र की बहुत छोटी। बड़ी दुनिया के टकराव में छोटी दुनिया कुचल जाती है। स्नेह–प्यार के कोई मायने नहीं रह जाते। लेकिन अंततः जीत प्यार की होती है – "सूरज तेजी से नीचे चला आ रहा था और पल में ड्योढ़ी पार कर कमरे के भीतर अपनी रश्मियाँ बिखेरने लगा। साझा–विरासत को ग्रहण लगने से पूर्व ही सूर्य राहू के चंगुल से मुक्त हो चुका था।"

उपकार – कहानी में सबसे अहम उसका कहानीपन है। हर कहानी अपनी भाषा और शिल्प स्वयं गढ़ती है। कोरोना से उत्पन्न परिस्थितियों को इतने अलग–अलग परिवेश से जोड़कर नई कहानी रचने का मुश्किल काम अरुण जी की कलम ने किया है। मेहनत–मजदूरी करने वाले लोग बच्चों को न अकेले घर छोड़ सकते हैं, न काम पर ले जा सकते हैं। लेकिन एक दूसरे की समस्या और जरूरतें इसका हल निकाल ही लेते हैं। उपकार दोनों एक दूसरे पर करते हैं। शीर्षक को सार्थक करती यह कहानी परस्पर रिश्तों को आकार देती एक सशक्त कहानी है।

लॉकडाउन वरदान कथा – कोरोना का कहर अभिशाप तो था ही पर वरदान भी बना। कई लोगों ने अपनी गलत आदतें मजबूरी में छोड़ीं, परंतु समय के साथ वे आदतें हमेशा के लिए छूट गईं। मित्रों की बुरी सोहबत में फँसा एक पिता जब कुछ दिनों के लिए घर में कैद होता है तो यह बदलाव उसके रिश्तों को नया रुख देता है। अपने प्यारे से परिवार के करीब रहने का सुख वह महसूस करता है। रोज के झगड़ों–टंटों से मुक्ति मिलने के साथ बच्चे भी माता–पिता के साथ एक नया जीवन जीने की अनुभूति को तीव्रता से महसूस करते हैं। कथ्य और भाषा मिलकर इस कहानी को एक उम्दा रचना में परिवर्तित करते हैं।

उदास क्यों रहती है जोजो – एक मासूम मन बाहर हो रही घटनाओं से किस कदर प्रभावित होता है, इसकी बारीकी से जानकारी इस कहानी में है। जोजो यानि कि "जोसलिन जो" एक अनाथ बच्ची है जिसे चर्च के बाहर छोड़ दिया गया था। उम्र के साथ बढ़ते हुए उसके मन में अपने अस्तित्व को लेकर प्रश्न उठते हैं। खासतौर से तब, जब वह खबरें सुनती है, समाचार पढ़ती है। वह स्वयं को उसी स्थिति में पाती है कि उसका जन्म भी कुछ ऐसी स्थितियों में हुआ होगा। आखिर में अपने प्रेमी की सच्चाई जानकर वह मजबूत होती है व नए सिरे से उसकी सोच उसे नया जीवन देती है। कहानी में चर्च के स्नेहमयी वातावरण का चित्रण बहुत प्रभावित करता है।

सद्गति – बँटवारे के साथ फैला साम्प्रदायिकता का ज़हर छोटे गाँवों से लेकर शहरों तक फैला हुआ है। दो मजहबों के बीच की नफरत शायद देश की नब्ज़ को पकड़कर रखती है। यह शिवरतन यादव, आई.ए.एस. अधिकारी की कहानी है जिनके जीवन का बड़ा हिस्सा इस नफरत के साए में गुजरता है। लेकिन प्यार कहाँ देखता है यह सब। वही होता है शिवरतन के साथ। अपनी जिंदगी तो वैसे ही जीते हैं वे लेकिन पत्नी के मरने के बाद उसके घरवाले भी उन्हें अपना लेते हैं। धीरे–धीरे सब कुछ ठीक हो जाता है।

यथार्थ की बारीकियों को बेहद सशक्त लहजे में प्रस्तुत करने में कामयाब हैं लेखक अरुण अर्णव खरे। कोरोना की भयावहता के पलों को कैद करती ये कहानियाँ कई सामाजिक विसंगतियों को सामने लाती हैं। लेखक ने इन्हें कहानी का जामा पहनाते हुए अपनी सूक्ष्म दृष्टि से रचनात्मकता को उच्च आयाम दिए हैं। कहानी तभी सार्थक होती है जब भाषा या परिवेश के परे वह मानवीय संवेदनाओं को सामने लाए। अरुण जी की कहानियाँ इसमें सफल हुई हैं। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि अरुण अर्णव खरे जी का यह कहानी संग्रह पाठकों को बेहद पसंद आएगा।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित

डॉ. हंसा दीप
1512-17 Anndale Drive
North York, Toronto
ON – M2N2W7, Canada
hansadeep8@gmail.com
001 647 213 1817

अनुक्रमणिका

अपनी बात ix

कोविड–19 के नकारात्मक व सकारात्मक पक्षों पर लिखी सार्थक कहानियाँ xii

1. पहला पॉजिटिव 1
2. जॉटर रिफिल पेन 12
3. चार्ली चैप्लिन ने कहा था 19
4. विश्वासघात 30
5. यात्रा 40
6. साझा संस्कार 57
7. उपकार 66
8. लॉकडाउन वरदान कथा 72
9. उदास क्यों रहती है जोजो 80
10. सद्गति 90
11. ऋण 100

1

पहला पॉजिटिव

मैं कार पार्क करके पिछली सीट पर रखे लंच बॉक्स तथा लैपटॉप बैग को उठाकर लिफ्ट–रूम की ओर जाने के लिए पलटा ही था कि मोबाइल में एक साथ कई नोटिफिकेशन आने की रिंग बजी। मेरे मोबाइल पर एक साथ इतने नोटिफिकेशन यदा–कदा ही आते हैं इसलिए मुझे आश्चर्य हुआ। सोशल मीडिया पर मैं कभी भी बहुत ज्यादा एक्टिव नहीं रहा इसलिए ऑफिस में मोबाइल का नेट बंद करके रखने की आदत पड़ गई है। ऑफिस से निकलने के बाद ही मैं अपना नेट ऑन करता हूँ और कभी–कभी तो यह भी भूल जाता हूँ तब कार पार्क करने के उपरांत उतरते समय ऑन करता हूँ। पार्किंग बेसमेंट से 22वें माले पर स्थित अपने फ्लैट तक की उर्ध्वगामी यात्रा में पिछले छः सात घंटों में आए मैसेजेज और फेसबुक अपडेट्स पर एक नजर डाल लेता हूँ, जो महत्वपूर्ण लगता है उसे पढ़ लेता हूँ और शेष को डिलीट कर देता हूँ। आज भी मैं ऑफिस से निकलते समय नेट ऑन करना भूल गया था और कुछ क्षण पहले ही नेट ऑन किया था। मैंने लिफ्ट का बटन दबाकर जैसे ही नजर मोबाइल स्क्रीन पर डाली, मैं विस्मय से भर गया। ग्रीन फ्लैग हाउसिंग सोसायटी की मैनेजिंग कमेटी तथा कुछ रहवासियों के बीस से ज्यादा नोटिफिकेशन थे। पहला नोटिफिकेशन पढ़ते ही मेरे होश उड़ गए। अगले तीन–चार मैसेज भी एक साँस में पढ़ गया। जैसे–जैसे मैं मैसेज पढ़ता जा रहा था, मेरी धड़कनों की गति बढ़ती जा रही थी। शरीर शिथिल होता जा रहा था। मैं दीवार का सहारा लेकर बड़ी मुश्किल से स्वयं को संभाल पाया। जिस ग्रीन फ्लैग सोसायटी के कोहिनूर टॉवर में मैं रहता हूँ उसके दूसरे फ्लोर पर एक कोरोना पॉजिटिव मिला है, पहले मैसेज में यही संदेश था। बाद के संदेशों में – "सोसायटी की लिफ्ट एहतियातन बंद कर दी गई हैं और आगामी सूचना तक बिल्डिंग में प्रवेश निषेध किया गया है", "हर मंजिल को सेनीटाइज किया जा रहा है", "बी.बी.एम.सी. को सूचित कर दिया गया है", "किसी भी समय बी.बी.एम.सी. का अमला यहाँ पहुँच सकता है", "संभवतया पूरी सोसायटी सील की जा सकती है"

और "बी.बी.एम.सी. की एक मेडिकल टीम यहाँ जाँच कैम्प लगा सकती है।" इसके बाद सावधानियाँ बरतने सम्बंधी कुछ निर्देश थे।

जैसे ही मन कुछ शांत हुआ तो आसन्न स्थितियों ने डराना शुरु कर दिया। कहीं बाबू जी और अनंत अभी भी पार्क में खेलने में व्यस्त तो नहीं हैं .. वे घर पर पहुँच चुके हैं या अभी भी पार्क में ही खेल रहे हैं। अनंत को स्लाइड्स और ग्लायडर्स पर फिसलने में बहुत आनंद आता है और बाबू जी दूर खड़े–खड़े उसे देखते हुए मुस्कराते रहते हैं और मोबाइल पर फोटो लेते रहते हैं। खेलते हुए दोनों को ही समय का ध्यान नहीं रहता। कितनी बार बाबू जी से कहा है कि साढ़े छः बजे तक घर लौट आया करें। अनंत तो छोटा है पर बाबू जी को तो समय का ध्यान रखना चाहिए। लॉकडाउन खोलकर सरकार ने बड़ी गलती की है .. लॉकडाउन था तो दोनों घर में आराम से रह रहे थे .. अनंत जरूर टीवी कुछ ज्यादा देखने लगा था लेकिन बाबू जी के साथ लूडो और साँप–सीढ़ी खेलते हुए दिन अच्छा कट जाता था उसका। उसे दोनों की चिंता भी नहीं करनी पड़ती थी। लेकिन अब दोनों का ही मन शाम होते ही बाहर जाने को मचलने लगता है। सोचकर मन उद्विग्न हो उठा। काँपते हाथों से बाबू जी का नम्बर मिलाया, रिंग जाती रही पर बाबू जी ने मोबाइल नहीं उठाया। तरह–तरह की आशंकाओं ने मन में अपने डैने फैलाने शुरु कर दिए – "अवश्य ही बाबू जी अपना फोन घर पर भूल आए होंगे, अक्सर ही वह ऐसा ही करते हैं, जब भी टोको, मासूम सा मुँह बनाकर बोल देते हैं, "क्या करूँ आदत नहीं है, हमारे जमाने में कहाँ था ये सब .. और फिर हम लोग सोसायटी के पार्क में ही तो खेलने जाते हैं कहीं बाहर तो आते जाते नहीं .. तुम व्यर्थ चिंता करने लगते हो।" अब चिंता न करूँ तो क्या करूँ। सात बजने वाले हैं और उनका कुछ पता नहीं है। दोबारा भी फोन कर देख चुका हूँ पर कोई रिस्पांस नहीं।

मेघना को फोन लगाया तो उसने भी फोन नहीं उठाया। आज ही उसे भी ऑफिस जाना जरूरी था .. इतने दिनों से घर से काम कर रही थी तो मुझे कुछ भी देखने की जरूरत नहीं पड़ती थी, सब कुछ संभाल लेती थी। बाबू जी और अनंत भी समय पर घर लौट आते थे। पर बॉस लोगों का क्या .. कम्पनी के प्रोजेक्ट हेड को इसी समय टूर पर आना था और सभी टीम लीड की मीटिंग भी इसी समय रखनी थी। वह कह कर भी गई थी कि लौटने में कुछ देर हो सकती है। और हाँ, अनंत का होमवर्क चेक करने और डिनर कराकर टाइम पर सुला सुला देने के लिए भी कहा था उसने। आज पहला दिन था जब अनंत ने अकेले ही ऑनलाइन क्लास अटैंड की थी। ऑफिस जाने से पूर्व वह लैपटॉप चालू कर गया था। पिछले पंद्रह–बीस दिनों में अनंत इतना कम्प्यूटर फ्रेंडली तो हो ही चुका था कि मैम के

निर्देश पर माइक म्यूट, अनम्यूट या फिर वीडियो ऑन, ऑफ कर ले। चैटबॉक्स में भी गुडमॉर्निंग फ्रेंड्स और मैम लिखना सीख गया था। उसने सब सही ढंग से कर लिया होगा, बाबू जी से भी कह के आया था कि आप उसके पास में बैठ कर देखते रहना। बाबू जी को कितनी बार लैपटॉप खोलने और स्कूल क्लास कैसे ज्वाइन करना है, सिखाने की कोशिश की पर उन्हें याद ही नहीं रहता, भूल जाते हैं सब कुछ। पता नहीं छत्तीस साल तक कैसे पढ़ाते रहे बच्चों को। अम्मा के जाने के बाद से अकेले हो गए हैं .. कहते कुछ नहीं पर अम्मा को मिस बहुत करते हैं। तभी से भुलक्कड़ भी हो गए हैं, चीजें रखकर भूल जाते हैं। चश्मा आँखों पर चढ़ाए रहते हैं और उसे इधर–उधर ढूढ़ते रहते हैं। अनंत है तो उनका मन लगा रहता है वरना कितना एकाकीपन फील करते।

मुझे बेसमेंट में दीवार के सहारे खड़े हुए दस मिनट से ज्यादा हो गए थे। अभी तक अपार्टमेंट में रहने वाला कोई दूसरा दिखाई नहीं दिया था। एक नजर पार्किंग पर डालता हूँ .. सारा पार्किंग स्पेस भरा नजर आ रहा है। तो क्या आज वह अकेला ही ऑफिस गया था? बाकी लोग वर्क फ्रॉम होम ही कर रहे थे या लोगों को पहले ही पता चल गया था और वे लोग समय पर घर लौट आए हैं। गलती तो मेरी ही है, ऑफिस में क्यों मोबाइल बंद करके रख लेता हूँ, जिससे ऐसी महत्वपूर्ण सूचनाएँ तक समय पर नहीं मिल पाती हैं। दोपहर में ही पता चल जाता तो बाबू जी को बोल देता कि आज घर से बाहर कदम नहीं रखना है। मेघना को भी किसी तरह बता देता ताकि वह नई परिस्थिति का हवाला देकर जल्दी घर लौट आती।

अब दोनों ही फोन भी नहीं उठा रहे हैं। मैं कितने टेंसन में हूँ, न बाबू जी समझ रहे हैं और न ही मेघना। मैनेजिंग कमेटी ने भी आधा–अधूरा मैसेज डाला है। ये तक नहीं लिखा कि किस फ्लैट में कोरोना पैशेंट मिला है। दूसरे माले पर आठ फ्लैट हैं, मैं याद करने की कोशिश कर रहा हूँ कि उनमें कौन–कौन रहता है पर मेरी याददास्त साथ नहीं दे रही है .. एक भी नाम याद नहीं आ रहा है, स्थिति किंकर्तव्यविमूढ़ जैसी हो रही है। पिछले दो तीन दिनों में कहीं उस पैशेंट से मेरी मुलाकात हुई होगी तो, फिर क्या मैं भी ..? सोच कर ही डर लगने लगा। मैंने रूमाल निकाल कर माथे पर झलक आए पसीने को साफ किया। गला सूखने लगा था, लैपटॉप बैग की साइड पॉकेट से पानी की बोतल निकाली, दो घूँट ही पानी बचा था उसमें। पानी पीकर बोतल रख ही रहा था कि मोबाइल की घंटी बजी। देखा सुचित्रा भाभी का फोन है।

"मिलिंद भैया आप कहाँ हैं" – उधर से आवाज आई।

"क्या बात है भाभी, आप कुछ परेशान लग रही हैं"

"भैया, क्या आपको पता नहीं है, शिवधर का टेस्ट पॉजिटिव आया है .. क्या आप मैथिली को अपने साथ ले जाएँगे"

"अरे, पर शिवधर वापस कब लौटे वह तो आंटी को देखने नेल्लौर गए हुए थे" – मैंने भाभी की बात पर ज्यादा गौर न करते हुए प्रश्न किया।

"परसों शाम को आए थे, कल रात से बुखार आ रहा था उन्हें, आज चेक कराया तो पता चला" – सुचित्रा भाभी के स्वर में भय मिश्रित चिंता को स्पष्ट महसूस किया जा सकता था।

"भाभी आप शिवधर का ध्यान रखिए, मैं अभी घर पर नहीं हूँ, मेघना भी ऑफिस से नहीं लौटी है" – मैंने भाभी के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही फोन काट दिया।

ये और नई मुसीबत आ गई – मैंने सोचा। मैथिली को कैसे घर पर रख सकते हैं .. उसके पापा कोरोना पॉजिटिव हैं, मैथिली भी इन्फेक्टेड हो सकती है। कहीं हम लोगों को भी इन्फेक्शन हो गया तो ..। भाभी वैसे तो बहुत समझदार हैं पर ये बात कहने से पहले उन्हें सोचना चाहिए था। अभी तो किसी तरह टाल दिया है, दोबारा फोन आ गया तो .. साफ–साफ मना करना पड़ेगा और कोई चारा भी नहीं है। शिवधर उसके कॉलेज के जमाने का दोस्त है, दोनों ने साथ–साथ इस सोसायटी में फ्लैट बुक किया था। भाभी की नासमझी के कारण वर्षों पुरानी दोस्ती पर खतरा दिखाई देने लगा है। यह बीमारी भी तो ऐसी है, कोई भी रिस्क कैसे लिया जा सकता है। परोपकार करके अपना जीवन तो खतरे में नहीं डाला जा सकता। अभी तो भगवान ने बचा लिया हर बार थोड़े ही बचाते रहेंगे। दो दिन हो गए थे शिवधर को आए हुए लेकिन उसे शिवधर के आने की भनक नहीं लगी थी। यदि उसे पता चल गया होता तो वह जरूर ही आंटी की तबियत पूछने शिवधर के यहाँ चला गया होता। थैंक्स गॉड, मुझे पता नहीं चलने दिया, वरना अनर्थ होकर रहता।

मैं मानसिक उधेड़बुन में वापस आकर गाड़ी में बैठ गया। स्टीयरिंग पर सिर टिकाया ही था कि सुचित्रा भाभी का पुनः फोन आ गया। एकबारगी मन में आया कि न उठाऊँ, लेकिन फिर यह सोचकर कि जो काम बाद में करना है वह अभी करके टंटा खतम करना ठीक रहेगा, मैंने फोन उठा लिया और भाभी कुछ बोलतीं उसके पहले ही मैं बोल पड़ा – "भाभी, अभी तक घर नहीं पहुँच पाया हूँ .."

मेरी बात समाप्त भी नहीं हो पाई थी कि भाभी बोल पड़ीं – "भैया, परेशान होने की जरूरत नहीं है, मैथिली को आंटी अपने साथ ले गईं हैं"

"थैंक्स गॉड, एक बार फिर बचा लिया", मैं मन ही मन बुदबुदाया। पर ये आंटी कौन है जिनको जरा भी डर नहीं लगा और मैथिली को अपने साथ ले गईं। कहीं

वो फातिमा आंटी तो नहीं, जो शिवधर के ठीक सामने वाले फ्लैट में रहती हैं। मैं इस गुत्थी को सुलझाने में लगा था कि बाबू जी का फोन आ गया। मैं अंदर से भरा हुआ था, नाराजगी भरे स्वर में बोला – "कबसे फोन लगा रहा हूँ आपको .. कितनी बार कहा है कि फोन साथ में रखा करें .. कहाँ पर हैं अभी"

"घर पर हूँ बेटा, अनंत को भूख लगी थी तो उसके लिए मैगी बना रहा था, आज संध्या नहीं आई, पता नहीं क्या हुआ उसको, खाना भी नहीं बना है .. तुम कितनी देर में आओगे"

बाबू जी की बात सुन कर आत्मग्लानि महसूस हुई, बिना सोचे–समझे उनसे इतने ऊँचे स्वर में बोल पड़ा था। स्वर को शांत और संयत रखने की कोशिश करते हुए बोला – "आप दरवाजा बंद करके रखिए, बाहर बिल्कुल मत निकलिए, मैं थोड़ी देर में पहुँच रहा हूँ।"

बाबू जी से बात हो जाने पर मैं थोड़ा सहज महसूस करने लगा था। एक बार मेघना से भी बात हो जाती तो टेंसन कम हो जाती। फिर से ट्राय करके देखता हूँ शायद इस बार उठा ले। लगता है अभी भी मीटिंग चल रही है, जब मिस काल देखेगी तो वह काल बैक करेगी ही, सोच कर संतोष कर लिया। पर मैं कब तक ऐसे ही गाड़ी में बैठा रहूँगा, घर जाने के लिए कोई न कोई उपाय तो करना पड़ेगा। मेघना के आने तक रुकता हूँ यहीं पर, दोनों साथ ही जाएँगे, तब तक कोई न कोई और आ जाएगा। आधे घंटे से तो ज्यादा हो गया है पर कोई भी तो नहीं आया अभी तक। लगता है सभी जल्दी पहुँच कर घरों में बंद हो गए हैं, वह और मेघना ही बाहर बचे हैं।

मैं किसी तरह चला भी जाऊँ तो मेघना क्या करेगी। जब वह आएगी और उसे सब जानकारी मिलेगी तो मेरी ही तरह डर के मारे सुधबुध खो बैठेगी। उसके आने तक मेरा रुकना जरूरी है, मैं रुकता हूँ यहाँ। अनंत बाबू जी के पास है ही, मैगी भी खा ही चुका है, बाबू जी से कहानी सुन रहा होगा इस समय या फिर अपना पसंदीदा पेप्पा पिग देख रहा होगा।

मैंने कार का दरवाजा खोल लिया ताकि साँस लेने को फ्रेश एयर मिलती रहे। मन में सोचने समझने की प्रक्रिया प्रारंभ हो चुकी है। रह–रह कर शिवधर का चेहरा आँखों में घूम जाता है, ज्वर से आक्रांत और खाँस–खाँस कर बेहाल हुआ सा चेहरा। इस क्रूर वायरस की चपेट में आकर हर इंसान इसी तरह निरीह हो जाता है, सोशल मीडिया पर वायरल हुए कुछ वीडियो याद आ रहे हैं। मन शिवधर के लिए चिंतित हो उठा है। पर मैं क्या कर सकता हूँ .. केवल भगवान से प्रार्थना ही कर सकता हूँ। कैसा दोगला है ये मन भी, अभी कुछ समय पहले तक भगवान को

इस बात के लिए धन्यवाद दे रहा था कि उनने शिवधर से मिलने से बचा लिया और अब एक सौ अस्सी डिग्री से पलटी मार रहा है।

सुचित्रा भाभी हिम्मत वाली हैं। उनकी आवाज में चिंता का भाव जरूर था लेकिन हताशा नहीं थी। वह मैथिली को लेकर चिंतित थीं पर उनकी चिंता उनके विवेक पर इस तरह हावी हो जाएगी, मैं सोच कर हैरान हूँ। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि उन्होंने मैथिली को फातिमा आंटी के यहाँ क्यों जाने दिया। फातिमा आंटी मुझे बिल्कुल पसंद नहीं हैं। साल भर से उनका फ्लैट बंद था। वह अपने बेटे मंसूर के पास एडीलेड में थीं। हासन में किसी रिश्तेदार के यहाँ शादी के सिलसिले में भारत आईं थीं लेकिन अप्रत्याशित लॉकडाउन के चलते न वह हासन जाकर मैरिज अटेंड कर पाई और न ही वापस आस्ट्रेलिया लौट सकी। तीन महीने से यहीं हैं। पैंसठ–सत्तर के आसपास उमर है। साल भर पहले जब वह यहीं रहती थीं तब कितनी ही बार मैंने उनको सोसायटी के स्वीमिंग पूल में लड़कों के साथ स्वीमिंग कास्ट्यूम में बिंदास तैरते देखा था। कहती हैं स्वीमिंग उनकी जिंदगी है, स्वीमिंग पूल ने ही उनके जीवन में खुशियों के फूल खिलाए हैं। कहाँ वह कलकत्ता की रहने वाली और कहाँ ज़यान सुदूर कर्नाटक के। इसी तैराकी की वजह से दोनों का मिलन हुआ था। गुवाहाटी की राष्ट्रीय स्पर्द्धा में 200 मी. बटरफ्लाई का स्वर्ण पदक जीता था उनने और ज़यान ने वाटरपोलो में। वहीं पहली बार मुलाकात हुई थी ज़यान से। पहली नजर में प्यार वाला मामला था, नजरें मिलते ही एक दूसरे के प्रति आकर्षित हुए, दिल में प्यार पनपा, कुछ दिनों के साथ में परवान चढ़ा और एक साल के अंदर ही अंजाम तक जा पहुँचा। यह सातवें दशक के शुरुआती दौर की बात थी जब प्यार के ऐसे किस्सों की कल्पना भी नहीं की जाती थी। मेरी कस्बाई मानसिकता फातिमा आंटी की इस कहानी को कभी स्वभाविक रूप से स्वीकार ही नहीं कर पाई। मैंने अपने घर में न कभी दादी को, बड़ी अम्मा को, न ही माँ को और किसी चाची को बिना सिर ढके देखा था अतएव यह भी एक कारण था कि आंटी की स्वच्छंदता मुझे बेहयापन लगती थी।

मार्च महीने में लगे लॉकडाउन का दूसरा दिन था। मैं उस दिन भयवश कैम्पस में भी मार्निंग वाक पर नहीं निकला था अतएव बोरियत दूर करने शिवधर के घर आ गया था। कुछ देर बाद आंटी एक हाथ में बड़ा सा जार लिए आईं और बोली – "सुचित्रा, इसमें आयुर्वेदिक काढ़ा है .. शरीर की रोग नाशक क्षमता बढ़ाने में मदद करता है ये .. सभी लोग दिन में दो बार पिया कीजिए .. इस नामुराद बीमारी से लड़ने की तैयारी रखनी चाहिए, पता नहीं किस रास्ते से अंदर आ जाए।"

"क्या–क्या है इसमें" – सुचित्रा ने जानना चाहा।

"काली मिर्च, दालचीनी, अदरक, तुलसी की पत्ती, लौंग, छोटी इलायची, अश्वगंधा, गिलोय और गुड़" – आंटी ने अँगुलियों पर गिनते हुए नाम बताए।

"इतनी सारी चीजें .. कुछ के तो नाम ही नहीं सुने" – सुचित्रा के मुँह से निकला।

"तुम चिंता मत करो, मैं अपने लिए बनाती ही हूँ, तुम लोगों के लिए भी बना दिया करुँगी" – आंटी बोली – "मिलिंद भी बैठे हैं तो आज इनको भी पिला देना"

आंटी चली गईं। सुचित्रा ने डायनिंग टेबल से चार गिलास लाकर उनमें काढ़ा भर दिया।

"भई, मैं तो नहीं पियूँगा, पता नहीं क्यों मुझे इन लोगों की बातों पर भरोसा नहीं होता .. जबसे जूठे फल बेंचते हुए एक फल वाले का वीडियो देखा है तबसे तो नफरत सी हो गई है" – मैंने अजीब सा मुँह बनाते हुए कहा।

"वो वीडियो तो मैंने भी देखा था, कितना सच है पता नहीं" – शिवधर ने कहा – "इच्छा तो मेरी भी नहीं है पीने की, पर आंटी बुरा मान जाएँगी"

"उन्हें कौन बताने जाएगा .. अच्छा भाभी आप ही सोचिए, आंटी को क्या जरूरत थी काढ़ा बनाकर लाने की .. अब तो वह रोज लाने का वादा भी कर गई हैं, दाल में कुछ काला नजर नहीं आता आपको .. कहीं जूठा करके लाई हों या फिर अण्डा ही मिला दिया हो इसमें तो क्या करेंगी आप" – मैंने जानबूझ कर सुचित्रा भाभी को दुविधा में डालने के लिए अण्डा शब्द इस्तेमाल किया था। तुरंत ही अपेक्षित परिणाम भी सामने आ गया, जब सुचित्रा भाभी को यह बोलते सुना – "भैया, आप सच कहते हैं, हमें आँख बंद करके विश्वास नहीं करना चाहिए, मैं आंटी से कह दूँगी कि आप कष्ट मत कीजिए हमने ग्रोसर्स से सभी चीजें ऑर्डर कर दी हैं, घर में ही काढ़ा बना लिया करुँगी"

"हाँ, ये ठीक रहेगा .. साँप भी मर जाएगा और लाठी भी नहीं टूटेगी"

उस दिन पनपे संदेह के पौधे को तो अब तक पेड़ बन जाना चाहिए था? पर लगता है उससे गलती हो गई, सुचित्रा भाभी के मन में पौधा रोप कर वह खाद पानी देना भूल गया, तभी पौधा पेड़ बनने से पहले ही सूख गया और सुचित्रा भाभी का आंटी पर विश्वास बढ़ता चला गया। फिर भी भाभी ने अच्छा नहीं किया मैथिली को उनके यहाँ भेज कर? पर भाभी कर भी क्या सकती थीं, उनके सामने दूसरा रास्ता भी तो नहीं था, मैंने सीधे–सीधे मना न करते हुए भी मैथिली को रखने से मना कर दिया था उनको। उनने तो मुझ पर भरोसा किया था पर मैं ही उनके भरोसे पर खरा नहीं उतरा। कुछ भी हो, भाभी को मैथिली को आंटी के पास नहीं

भेजना चाहिए था। मुझे अपने पागलपन पर हँसने का मन हुआ। मैं खुद ही प्रश्न करके उनके उत्तर भी खुद को दे रहा था। अजीब ऊहापोह की स्थिति से गुजर रहा था कि मोबाइल की रिंग बजी। मेघना का फोन था।

"अभी फ्री हुई हूँ, मयूरी के साथ उसकी गाड़ी में हूँ, आधे घंटे में पहुँच जाऊँगी"

"ओके .. तुम सीधा बेसमेंट पार्किंग में आ जाना, मैं वहीं पर मिलूँगा"

"वहाँ क्यूँ"

"तुम आओ, फिर बताता हूँ" – कहते हुए मैंने फोन काट दिया।

घड़ी की ओर देखा साढ़े सात बज गए थे। एक घंटे से ऊपर हो गया था मुझे पार्किंग में। अब मैथिली को साथ में रखने की समस्या हल हो चुकी थी तो अंदर का दोगलापन फिर बाहर आ गया और मैंने सुचित्रा भाभी को फोन लगा लिया – "भाभी शिवधर कैसे हैं अब .. मैं पार्किंग में हूँ, मेघना भी कुछ देर में पहुँच रही है, किसी चीज की जरूरत है तो बोल दीजिए"

"हल्का बुखार है, अभी काढ़ा दिया है उन्हें पीने, खाँसी में राहत है कुछ .. वह मुझे भी अपने कमरे में नहीं आने दे रहे हैं"

"यह तो अच्छी बात है भाभी, खुद को पूरी तरह आइसोलेट करना जरूरी है इस समय"

"वह तो जबसे लौटे हैं तबसे ही आइसोलेट हैं। कल शाम को चैकअप कराने अस्पताल गए थे लेकिन डॉक्टर ने एडमिट नहीं किया, कह दिया घर पर ही क्वारंटाइन में रहिए"

"आप अपना भी ध्यान रखिए भाभी .. मैं देखने तो नहीं आ सकता लेकिन किसी चीज की जरूरत हो तो व्यवस्था कर दूँगा। अभी तो लिफ्ट बंद हैं सेनीटाइजेशन का काम भी चल रहा है शायद, पता नहीं पार्किंग में अभी कितना और समय बिताना पड़ेगा"

"अरे, आपने एम.सी. के किसी मेम्बर से बात नहीं की .. सेनीटाइजेशन का काम तो दोपहर में ही हो चुका है .. एम.सी. ऑफिस से आपको पी.पी.ई. किट मिल जाएगी, आप ले लीजिए, गॉर्ड को कहेंगे तो वह लिफ्ट चालू कर देगा .. केवल नौवें फ्लोर तक ही बिल्डिंग सील है उससे ऊपर लिफ्ट से जा सकते हैं"

"मैं सुनकर ही होश खो बैठा था भाभी, कुछ समझ में हीं नहीं आ रहा था, अच्छा हुआ आपने बता दिया, मैं किट ले लेता हूँ ऑफिस से"

मैंने एम.सी. मेम्बर सुरेश नंदा से बात की। उन्होंने पार्किंग में ही गॉर्ड के हाथों दो किट भिजवा दी। किट हाथ में लेते ही मैं सोचने लगा कि मेघना आज क्या

पहिन कर ऑफिस गई है। मैं अनंत की ऑनलाइन क्लास का होमवर्क अपलोड करने में व्यस्त था सो उसके कपड़ों पर ध्यान ही नहीं दिया था। मीटिंग या अन्य फंक्शंस में वह अक्सर साड़ी पहिन कर ही ऑफिस जाती है। यदि आज भी साड़ी पहिन कर ऑफिस गई होगी तो .. साड़ी के ऊपर ये किट पहिन ही नहीं पाएगी। फिर .. फिर क्या, लिफ्ट रूम में जाकर पहिन लेगी और साड़ी तह करके रख लेगी .. मैं दरवाजे पर खड़ा रहूँगा उस समय ताकि कोई अंदर न जा सके .. वैसे भी एक घंटे से अधिक हो गया है यहाँ, कोई भी आने–जाने वाला अब तक दिखा नहीं। मैं सोच में डूबा हुआ था कि मेघना आ गई। गेट पर ही उसे सारी सूचना मिल गई थी इसलिए परेशान भी थी। उसने सिर्फ अनंत के बारे में पूछा और कोई प्रश्न नही किया। मैंने पहिनने के लिए उसे किट दी। किस्मत से वह सलवार सूट में थी सो किट पहिनने में अधिक समय नहीं लगा। हम दोनों पाँच मिनट में अपने फ्लैट में आ गए। अनंत सो गया था। बाबू जी ब्रेड–स्लाइस दूध के साथ खा रहे थे।

रात में ठीक से नींद नहीं आई। 21वें माले पर रहने वाले रत्नेश भारद्वाज की डैजी रात भर भौंकती रही थी। शायद उनकी बेटी ने उसे शाम को बाहर नहीं घुमाया था। अब कुत्ते महामारी के भय को क्या समझें, उनकी नियमित दिनचर्या में व्यवधान आया नहीं कि बेचैन होने लगे। आगे पता नहीं क्या–क्या कहर ढाएगी डैजी। फ्लैट में रहने वाले आखिर कुत्ते पालते ही क्यों हैं? कितनी असुविधा होती है दूसरे लोगों को। पिछले शुक्रवार को ही डैजी जंजीर छुड़ाकर मैथिली के पास आकर उसके पैर चाटने लगी थी। कितना डर गई थी मैथिली और रत्नेश की बेटी दूर से ही "नो डैजी नो, बिहेव डैजी" कहते हुए लाड़ जताती रही थी।

ब्रेकफास्ट बनाने से पहले मेघना ने सुचित्रा भाभी से बात की। शिवधर की तबियत स्थिर थी। सुचित्रा भाभी भी ठीक थीं। मैथिली भी आंटी के पास मजे में थी। नाश्ते में क्या लेंगी, पूछा तो मना कर दिया – "ऐसे में आप लोगों का ब्रेकफास्ट लेकर नीचे आना ठीक नहीं रहेगा, आप लोग दुआ कीजिए कि शिव शीघ्र स्वस्थ हो जाएँ, उसके बाद मिलेंगे"

वैसे सुचित्रा भाभी ने हमारे मन की ही बात कही थी लेकिन कहीं न कहीं मुझे उनकी बात में तंज नजर आ रहा था। हो सकता है ऐसा न हो और ये केवल मेरा भ्रम हो। मैंने भी तो शाम को उनसे अनमने ढंग से बात की थी। खैर, शिवधर जल्दी ही स्वस्थ हो जाएँ, फिर सब अपने आप ठीक हो जाएगा।

मेघना ने दो दिन पहले खाने–पीने के कुछ सामान का ऑर्डर किया था जिसके कैंसिल किए जाने का मैसेज आ गया। भगवान का शुक्र था कि आटा, दाल एवं चावल का पर्याप्त स्टॉक घर में मौजूद था वरना खाने के भी लाले पड़ जाते। अगले

दिन दूध देने वाला नहीं आया, ब्रेकफास्ट में प्रतिदिन कॉर्नफ्लेक्स लेने वाले बाबू जी ने आधे पराठे का नाश्ता किया। अनंत को भी बोर्नविटा नहीं मिल सका। हम लोगों ने लेमन टी पीकर काम चलाया। हमें समझ में आ गया था कि चौदह दिनों तक यही स्थिति रहने वाली है। केवल दाल रोटी खाकर ही यह समय बिताना पड़ेगा। अनंत ने एक–दो दिन खाने के लिए नखरे किए लेकिन उसे भी अपने मम्मी–पापा की मजबूरी समझ आ गई।

जैसे–तैसे एक सप्ताह बीत गया। शिवधर स्वस्थ हो रहे थे और रत्नेश जी की डैजी यथावत हमारी नींद की दुश्मन बनी हुई थी। नौवें दिन पता चला कि डैजी की रात में मौत हो गई। उसका पेट लगातार फूलता जा रहा था। वेटरनरी डॉक्टर से रत्नेश जी ने ऑनलाइन परामर्श भी लिया था लेकिन ऑर्डर की हुई दवाएँ जब तक पहुँचती, डैजी चल बसी। ये खबर फैली तो एमराल्ड टॉवर में रहने वाले दर्शन रस्तोगी का फोन आया – "यार, पापा तीन दिनों से शुगर की दवा नहीं ले रहे हैं, आज बहुत सुस्त लग रहे हैं। पापा ने बताया है कि अंकल भी ग्लीपिजाइड लेते हैं, यदि अंकल के पास हों तो तीन–चार टेबलेट दे दो मुझे, फिर व्यवस्था करता हूँ कहीं से"

"ठीक है, पर कैसे भेजूँगा" – मैंने कहा। मुझे याद था कि मैं उस दिन ऑफिस से लौटते समय बाबू जी की दो माह की दवाएँ लेकर आया हूँ।

"थैंक्स यार, मैं गॉर्ड को बोलता हूँ"

तीन दिन और बीत गए। बिल्डिंग में व्याप्त सन्नाटा सिमटने लगा था। नीचे फ्लोर से हँसने–खिलाखिलाने की आवाजें आने लगी थी। हमारे फ्लोर पर रहने वाले लोग कमरों से निकल कर बालकनी में बैठने लगे थे। क्रिस्टल टॉवर के कुछ बच्चे ग्राउंड में साइकिलिंग करते दिखाई देने लगे थे। माहौल में परिवर्तन आ रहा था, लोग भय पर विजय पाने की भरसक कोशिश कर रहे थे।

शाम को सुचित्रा भाभी का मैसेज आया। कल और आज हुए शिवधर के दोनों टेस्ट निगेटिव आए थे। अब वह पूर्णतया स्वस्थ था। भाभी, मैथिली और आंटी के बतौर सावधानी कराए गए टेस्ट रिजल्ट भी निगेटिव थे। मैंने बधाई देने के लिए फोन लगाया – "ऊपरवाले का लाख–लाख शुक्र है कि सब कुछ ठीक है भाभी .. यह आपके हौसले की भी जीत है, बहुत–बहुत बधाई आपको"

"नहीं भैया, इसकी हकदार आंटी हैं .. उनसे ही ये हौसला मिला था। जब उनने मैथिली को अपने पास रखने की बात कही थी तो मुझे लगा इस संकट में कोई तो ऐसा है जो निर्भय होकर साथ में खड़ा है। उनकी उमर को देखते हुए मुझे मैथिली को उनके साथ भेजते हुए झिझक भी बहुत हो रही थी, पर उनने

उस समय जो कहा उसने मेरी सारी चिंता दूर कर दी। उनने कहा था, तुम डरो मत मुझे कुछ नहीं होगा, बच्चे केवल प्यार दे सकते हैं बीमारी नहीं ..। उनके इस विश्वास ने मुझे बहुत शक्ति दी। अभी मैथिली कुछ दिन और उनके साथ रहेगी .. बहुत खुश है वह वहाँ रहकर"

मुझे सहसा समझ में नहीं आया कि आंटी के बारे में क्या कहूँ। मैं सोच में पड़ा था कि सुचित्रा भाभी की आवाज आई – "अभी रखती हूँ, किसी का फोन आ रहा है।"

कुछ ही देर में सोसायटी के व्हाट्सएप ग्रुप में एम.सी. प्रेसीडेंट टी. जयनंदन का संदेश आ गया जिसमें उन्होंने सातों टॉवर के रहवासियों से आठ बजे बालकनी में खड़े होकर फातिमा आंटी का अभिवादन करने का अनुरोध किया था।

पहले पाठक का मत

"देखा जाए तो जीवन का हर दिन एक नया अनुभव देने वाला होता है। कोरोना महामारी काल में दिन–प्रतिदिन के अनुभवों से हमें अपने जीवन–शैली, दिनचर्या आदि में कुछेक जरूरी परिवर्तन करने, प्राथमिकताएँ तय करने, मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक सरोकारों को और भी शिद्दत से महसूस करने की आवश्यकता महसूस हुई।

प्रस्तुत कहानी में आम मध्यमवर्गीय कामकाजी परिवारों, फ्लैट, अपार्टमेंट्स आदि में रहने वालों की जीवन–शैली व कोरोना को लेकर आमजन के बीच जो भ्रम और आशंकाए व्याप्त रहीं, उससे जुड़ी घटनाओं, परिघटनाओं को सहज–सरल भाषा में बहुत ही प्रभावी ढंग से पिरोया गया है। कहानी में अंत जानने की उत्सुकता इस कदर बनी रही कि कोई भी पाठक इसे एक बैठक में ही पढ़ जाएगा। सकारात्मक संदेश देती कहानी।"

– रामनगीना मौर्य, वरिष्ठ कहानीकार, लखनऊ

❍ ❍ ❍

2

जॉटर रिफिल पेन

रोज की तरह फेसबुक और व्हाट्सएप पर आए नोटिफिकेशन देखने के बाद दिलीप भाटिया ने अपना मेलबॉक्स खोला तो उसमें नैंसी सहगल का दूसरा मेल आया हुआ था। कल भी उसका एक मेल मेलबॉक्स में था लेकिन फिशिंग मेल की आशंका में दिलीप भाटिया ने बिना खोले ही उसे डिलिट कर दिया था। आज फिर नैंसी का मेल देखकर वह असमंजस में पड़ गया, खोल कर देखे या डिलिट कर दे। वह कुछ देर सोचता रहा, नैंसी नाम उसे कुछ परिचित सा लगा। स्कूल के दिनों में उसके साथ नैंसी नाम की एक लड़की पढ़ती थी – "शायद वही तो नहीं। पर उसे मेरी मेल आईडी कहाँ से मिली और इतने वर्षों बाद मुझसे सम्पर्क करने का क्या कारण हो सकता है। जब साथ में पढ़ती तब तो कभी बात नहीं की थी, हमेशा एटीट्यूड दिखाती थी। खूबसूरत थी, पापा बडे अफसर थे, अक्सर कार छोड़ने आती थी स्कूल। सबसे अलग पहिचान थी उसकी। अब शायद कोई मुसीबत आन पड़ी है इसलिए पुराने दोस्तों को खोज–खोज कर मैसेज कर रही है। पर वह तो कभी भी उसका दोस्त नहीं रहा। साथ में पढ़ती जरूर थी पर उसे देखकर हमेशा मुँह फेर लेती थी जैसे जताना चाहती हो कि तुम हमारी दोस्ती तो छोड़ो, बात करने के भी लायक नहीं हो। ऐसा वह केवल जताती ही नहीं थी, बल्कि कुछ अवसरों पर उसने अपने व्यवहार से ऐसा सिद्ध भी किया था।" सोचते ही एक वाक्या दिलीप की नजरों के सामने घूम गया। छुट्टी के दिनों में वह अक्सर दोपहर बाद न्यू मार्केट स्थित अपनी छोटी सी स्टेशनरी की दुकान पर बैठा करता था। पापा लंच के लिए घर आते थे और वह उनकी अनुपस्थिति में दुकान संभालने दुकान पर पहुँच जाता था। पापा आराम करने के बाद शाम को छः बजे के ही बाद दुकान पर आते। कभी–कभी उसका दोस्त अभिलाष शर्मा भी वहाँ आ जाता और पापा के आने तक उसके साथ दुकान पर बैठा रहता। खाली समय में दोनों या तो होमवर्क किया करते या फिर चेस खेलते। ऐसा ही एक दिन था जब वह और अभिलाष दुकान पर चेस खेलने में खोए हुए थे। तभी नैंसी आई थी वहाँ। शायद उसने ध्यान नहीं दिया था कि उसके दो–दो क्लासफैलो वहाँ बैठे चेस खेल रहे हैं।

"ब्लेक जॉटर रिफिल पेन देना" – नैंसी ने कहा था।

दोनों ने पलट कर देखा और दिलीप "जी" कहते हुए फुर्ती से उठा और रैक पर रखे जॉटर रिफिल के पैकेट्स में से ब्लेक कलर का पैकेट खोजने लगा। अभिलाष अपनी जगह से उठकर काउण्टर पर आ गया और बोला – "हैलो नैंसी"

नैंसी ने अभिलाष को कोई जवाब नहीं दिया। तब तक दिलीप भी जॉटर रिफिल का पैक हाथ में लेकर काउंटर पर आ गया और पूछा – "कितने चाहिए"

"लगता है गलत दुकान पर आ गई" कहते हुए नैंसी बिना पेन लिए बुरा सा मुँह बनाते हुए अगली दुकान के अंदर चली गई। दोनों को कुछ समझ नहीं आया कि क्या हुआ। ऐसा अजीब ग्राहक पहली बार उनकी दुकान पर आया था। दोनों को ही यह अत्यन्त अपमानजनक लगा था। दिलीप के मन में प्रतिक्रिया स्वरूप इस अपमान का बदला लेने का भाव भी आया पर अभिलाष ने समझाया था उसे। नकचढ़े के साथ नकचढ़ा नहीं बना जाता। ओछेपन की काट ओछापन नहीं है। समझ लो बड़े बाप की बिगड़ैल बेटी है और ऐसे लोगों को सबक सिखाने के लिए उनके अहम् पर चोट करना जरूरी है। उसने जिस पेन के लिए तुम्हारा अपमान किया है, तुम उसी पेन से उसको उसके ओछेपन का एहसास दिलाना। दिलीप को बात जँच गई और उसने पैकेट से एक पेन निकाल कर अपनी जेब में रख लिया। दोनों का मूड अपसेट हो चुका था सो इसके बाद चेस खेलने में भी मन नहीं लगा।

यह पहली घटना नहीं थी। कुछ दिनों बाद दिलीप को एक बार फिर ऐसी ही स्थिति या कहें इससे भी ज्यादा अप्रिय स्थिति का सामना करना पड़ा था। उस दिन भी अभिलाष उसके साथ था। दोनों दुकान से घर जाने के लिए निकले थे कि इच्छा हुई टॉप एण्ड टाउन से मैंगो कैंडी ली जाए। दोनों आइसक्रीम शॉप पर पहुँचे ही थे कि उनने पाया कि नैंसी और उसकी एक सहेली वहाँ पहले से खड़ी हैं और दोनों उनके बगल में आ खड़े हुए हैं। उनको देखते ही नैंसी ने आइसक्रीम का ऑर्डर कैंसिल कर दिया और सहेली के साथ बगल वाली होजियरी शॉप में घुस गई। दुकानदार को लगा कि दोनों ने उनसे कुछ छेड़छाड़ की है या कोई कमेंट पास किया है जिससे वे दोनों बिना आइसक्रीम लिए चली गईं। दोनों सफाई देते रहे पर दुकानदार ने उन्हें बहुत बुरा–भला कहा और दोबारा दुकान पर न आने की हिदायत देकर चलता किया।

तो ऐसी थी नैंसी .. नैंसी कार्वेल्हो, अबूझ और उद्दण्ड। मेल भेजने वाली नैंसी वो वाली नैंसी नहीं हो सकती। ये नैंसी तो बहुत सब्मिसिव लगती है और दोस्ताना भी। और वो नैंसी तो क्रिश्चियन थी, पंजाबी नहीं। ये हण्ड्रेड परसेंट कोई और नैंसी है। वैसे भी नैंसी कोई पैटेंट नाम थोड़े ही है कि किसी और लड़की का नाम नैंसी

नहीं हो सकता। यह दावा मैं कैसे कर सकता हूँ कि यह नैंसी वह नैंसी नहीं है। हो सकता है वही हो, शादी कर ली होगी किसी पंजाबी लड़के से, स्कूल के दिनों में ही उसके हाव–भाव से लगता था कि वह लव मैरिज ही करेगी, सो कर ली होगी लव मैरिज और बन गई होगी नैंसी कार्वेल्हो से नैंसी सहगल।

तो क्या नैंसी कार्वेल्हो, नैंसी सहगल बनते ही बदल गई। फिर भी यह विश्वास करने का मन नहीं हो रहा कि मेल भेजने वाली नैंसी सहगल वही नकचढ़ी लड़की है। अपनी सुंदरता और बाप के रुतबे के गुरूर में हमेशा ठसक में रहने वाली नैंसी का इंटरेस्ट उस जैसे साधारण दिखने और साधारण हैसियत वाले लड़के में अचानक कैसे जाग गया जो उसे मेल किया। हो सकता है उसे अपनी गलतियों का एहसास हुआ हो और पश्चाताप करना चाह रही हो। उम्र के एक पड़ाव पर आकर इंसान जब अपने भूतकाल में झाँकता है तो उसे पूर्व में किए गए अपने बहुत से कार्यों पर ग्लानि महसूस होने लगती है। नैंसी के साथ भी ऐसा ही हुआ होगा। उसकी गलतियों की लिस्ट भी बहुत लम्बी है। अपने रूखेपन और उपेक्षापूर्ण वर्ताव से पता नहीं उसने कितने लोगों का दिल दुखाया होगा। फुरसत के पलों में उसे रह–रह कर सब याद आता होगा तो दिल में हूक उठती होगी, बहुत कष्ट पहुँचता होगा। किसी–किसी की प्रारंभिक जिंदगी इतनी खुशहाल और रंगों से इतनी लबरेज होती है कि आसपास की बहुत सी चीजें उसे गैरजरूरी और निरर्थक लगने लगती हैं। एक तरह की संवेदनहीनता उसके अंदर अपने पैर फैलाने लगती है। नैंसी भी ऐसे ही एक घराने की प्रतिनिधि थी, जिंदगी में मुश्किलें क्या होती हैं वह जानती ही नहीं थी, सब कुछ उसे सहज ही सुलभ था। उस जमाने में जब एक रिक्शे में दस–दस बच्चे लदकर स्कूल आते थे, उस समय नैंसी कभी एस्टीम तो कभी सियलो में बैठकर स्कूल आती थी। उसकी शानो–शौकत देख कर बहुत से बच्चे हीनभावना से ग्रसित हो उसके पास आने से भी कतराते थे। ऐसे बच्चों को वह भी अहमियत नहीं देती थी और उन्हें अनदेखा करते हुए निकल जाती थी। यही गुरूर और संवेदनहीनता उसकी पहिचान थी। दो साल तक वह स्कूल में साथ पढ़ी थी और इस बीच उसने कभी भी मित्रवत व्यवहार नहीं किया था।

दस मिनट से ज्यादा हो गए थे दिलीप को मानसिक ऊहापोह की स्थिति में। मेलबॉक्स में और भी मेल आए हुए थे लेकिन दिलीप है कि पहले मेल पर ही अटका हुआ था। किसी मेल के भविष्य को तय करने में उसने कभी इतना सोच–विचार नहीं किया था, या तो उसे खोल कर पढ़ लिया था या फिर सेलेक्ट कर डिलिट के डिब्बे के हवाले कर दिया था। इस जल्दबाजी में अनेक बार उसने बैंक या कुछ अन्य प्रतिष्ठानों से आए कुछ महत्वपूर्ण सूचनाओं वाले मेल भी डिलिट कर दिए थे, जिसका अफसोस भी मनाया था उसने। नैंसी का मेल है, चाहे वह कोई भी हो,

कार्वेल्हो या सहगल, उसे अनदेखा करना ठीक नहीं है। यदि यह फिसिंग मेल भी है तो भी बिना खोले पता लगाना मुश्किल है। जी मेल के स्पेम मेल फिल्टर से बचकर मेन फोल्डर में आया है सो स्पेम मेल तो नहीं ही है। ये विचार आते ही दिलीप ने मेल पर क्लिक कर दिया और पढ़ने लगा। नैंसी सहगल चाहती थी कि उसके पति के साथ हुए अन्याय के खिलाफ दिलीप भाटिया उसका साथ दें और संलग्न ऑनलाइन पिटिशन को साइन करके भेज दें। उसकी इस मुहिम में दिलीप अपने कुछ और दोस्तों को भी शामिल कर उनसे भी पिटिशन साइन करवाएँ।

नैंसी के पति के साथ क्या अन्याय हुआ है, जानने की उत्सुकता पैदा हो गई। बचपन से अब तक न जाने कितनी बार सुना है कि जो जैसा करता है, उसे वैसा ही भरना पड़ता है। आज तक वह इस कहावत को मात्र मन बहलाने के लिए रची गई आम कहावत समझता आया था पर पुरानी कहावतों में भी दम है, इस बात पर विश्वास करने का मन होने लगा है। नैंसी जैसी लड़कियाँ वक्त के साथ भी स्वयं को कहाँ बदल पाती हैं और मुसीबतों को आमंत्रण देती रहती हैं। जरूर ही उसके पति के साथ हुए अन्याय के पीछे भी नैंसी की ही कोई गैरजिम्मेदाराना हरकत होगी।

दिलीप ने मेल के साथ अटैच पिटिशन खोलकर पढ़ना शुरु कर दी। लिखा था –

"मेरे पति उज्जवल सहगल यशभारती एयरलाइंस में कैप्टेन थे। उन्हें अच्छे फ्लाइंग रिकॉर्ड और बोइंग 787 व एयरबस ए–380 जैसे विमानों को उड़ाने के दो हजार से भी अधिक घंटों के अनुभव के कारण महत्वपूर्ण नमन इंडिया मिशन के लिए चुना गया था। कोविद काल में उन्होंने अनेक देशों में फँसे अपने नागरिकों को वापस लाने का सराहनीय कार्य किया है। अपने कर्तव्यपालन की राह में उन्होंने अपनी व्यक्तिगत परेशानियों को भी आड़े नहीं आने दिया। जब पहली बार उन्हें सिंगापुर में फँसे लोगों को लाने भेजा गया था तब उनकी माँ श्रीमति शोभना सहगल का किडनी स्टोन का आपरेशन हुआ था और वह हॉस्पिटल में एडमिट थी लेकिन मिस्टर सहगल ने अपने कर्तव्य को प्राथमिकता दी। मनीला मिशन पर उनकी फ्लाइट सुबह तीन बजे रवाना होनी थी लेकिन उन्हें रात में ग्यारह बजे मिशन पर जाने की सूचना दी गई और दो घंटे के अंदर रिपोर्ट करने के लिए कहा गया। लॉकडाउन के कारण टैक्सियाँ भी नहीं चल रही थीं तो मुझे रात में 55 कि.मी. कार चलाकर उनको एयरपोर्ट छोड़ने जाना पड़ा ताकि वह समय पर रिपोर्ट कर सकें। इसके बाद वह क्वालालम्पुर, शिकागो, दोहा और फ्रेंकफर्त के मिशन में भी शामिल रहे। गत दिनों जब वह सिडनी से परेशान देशवासियों को लेकर आ रहे थे तभी उन्हें नौकरी से मुक्त कर दिया गया। यह तो अच्छा हुआ कि उन्हें यह सूचना वापस आने पर मिली। यदि उन्हें यह सूचना फ्लाइट में मिल गई होती तो

मन कल्पना करके ही अशांत हो जाता है और अनेक तरह की आशंकाएँ मन को घेर लेती हैं। कोविद के कहर और तीस प्रतिशत सैलरी–कट के साथ काम करने वाले कर्तव्यपरायण व्यक्ति के साथ उसके नियोक्ताओं का यह व्यवहार मनमाना और गैरसंवैधानिक है। उनके इस व्यवहार से पूरा परिवार सदमे में है। ऐसा निर्मम व्यवहार केवल उनके साथ ही नहीं हुआ है, अपितु चालीस से अधिक कैप्टैन्स व पायलेट्स को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा है।"

इसके बाद एक अनुरोध था कि न्याय की हमारी लड़ाई में पिटिशन साइन कर आप साथ दीजिए।

पिटिशन पढ़कर दिलीप को अच्छा नहीं लगा। कुछ देर पहले उसे जिस कहावत में दम नजर आ रहा था वही अब खोखली लगने लगी। मिस्टर सहगल ने कम से कम "ग्यारह सैल्यूट" वाला काम किया है। इस काम के लिए उनको नियोक्ताओं की ओर से प्रशंसापत्र और विशेष पारितोषक मिलना चाहिए था लेकिन मिला टर्मिनेशन। ऐसे नियोक्ताओं से लाख गुना अच्छा तो उसका मालिक है जिसके पास कारों की डीलरशिप है। पिछले चार महीने में चार कारें भी नहीं बिकीं, फिर भी उसने अपने किसी कर्मचारी को नहीं निकाला और न ही किसी की सैलरी कम की। बड़ी कम्पनियों की बड़ी बातें, उन्हें किसी की परेशानी या रेपुटेशन से क्या मतलब। सहगल साब कैप्टेन हैं, करोड़ों का पैकेज होगा, नैंसी भी जॉब करती होगी, फायनेंसियली उन्हें ज्यादा फर्क नहीं पड़ेगा लेकिन टर्मिनेशन का दाग एक ऐसा दाग है जिसे कोई भी वाशिंग पाउडर नहीं धो पाता। महामारी से निजात पाते ही एयर ट्रेफिक फिर सामान्य होने लगेगा और सहगल साब को भी कोई न कोई एयरलाइंस दोबारा जॉब दे ही देगी पर उस मानसिक यंत्रणा का क्या जिससे वह इस समय गुजर रहे होंगे। शायद नैंसी भी अनुभव कर रही होगी इस पीड़ा को।

नैंसी और पीड़ा, कितनी बार चाहा था उसने कि नैंसी का गरूर भी कोई खंडित करे, उसके स्वाभिमान को चोट पहुँचाए, कोई उसे नीचा दिखाए। आज उसे मौका मिल गया है नैंसी को नीचा दिखाने का। नैंसी उससे उसके पति को न्याय दिलाने में उसका साथ देने का अनुरोध कर रही है। वह अन्याय के खिलाफ इस लड़ाई में साथ देगा उसका और नीचा भी दिखाएगा उसे। यह विचार मस्तिष्क में कौंधते ही वह फुर्ति से उठा और लेपटॉप से प्रिंटर कनेक्ट कर पिटिशन का प्रिंट आउट निकालने लगा।

उसने एक बार फिर पिटिशन के प्रिंट आउट को ध्यान से पढ़ा। वह उस पर दस्तखत करने वाला ही था कि अभिलाष की बात याद आ गई। वह कुर्सी से उठा और अलमारी में पिछले बीस साल से संभाल कर रखे गए जॉटर पेन को उठा

लाया। इसी पेन के लिए अपमान किया था नैंसी ने उसका, अब यही पेन उसके अपमान का बदला नैंसी पर उपकार कर लेगा।

पर यह क्या, उसके मन को अच्छा नहीं लग रहा है। जी कसैला हो गया है। दस्तखत करते करते हाथ रुक गए हैं। नहीं कर पा रहा है उस पेन से पिटिशन पर अपने दस्तखत। उंगलियों से जॉटर पेन फिसल कर टेबल पर एक ओर लुढ़क गया है। उसने जल्दी से दूसरा पेन उठाया और दस्तखत कर पिटिशन को लिफाफे में बंद कर दिया।

लिफाफा पोस्ट कर बहुत राहत महसूस की उसने। आकर नैंसी के मेल का उत्तर दिया – "मैंने पिटिशन साइन कर पोस्ट कर दी है। अन्याय के विरुद्ध आपकी लड़ाई को मेरा पूरा समर्थन है। आपको जरूर न्याय मिलेगा, मेरी शुभकामनाएँ" – दिलीप भाटिया, भोपाल।

दस मिनट के अंदर नैंसी का उत्तर आ गया – "कहीं तुम वही तो नहीं, जी.एम. कांवेंट में हमारे साथ पढ़ने वाले, जॉटर रिफिल पेन वाले दिलीप भाटिया। बचपन की नादानी में बहुत गलतियाँ हुईं है मुझसे .. और देखो मैं कितनी खुशकिस्मत हूँ कि किसी ने उन गलतियों को अपने दिल पर नहीं लिया। अभिलाष कभी मिले तो उस तक भी मेरी भावनाएँ पहुँचा देना। अपना नम्बर दो, तुमसे बात करनी है" – नैंसी कार्वेल्हो सहगल, मुम्बई।

नैंसी के मेल को कई बार पढ़ा दिलीप ने और फिर जॉटर पेन को टेबल से उठाकर अलमारी में संभाल कर रख दिया, इस बार किसी से बदला लेने के लिए नहीं अपितु किसी की यादों का उपहार समझकर .....

पहले पाठक का मत

'जॉटर रिफिल पेन' कोरोना काल पर लिखी गई उम्दा कहानी है। कहानी स्कूल के दिनों की याद दिलाती है तथा लॉकडाउन के दृश्यों–अड़चनों को रेखांकित करती है। धनिक वर्ग की नैंसी जैसी दो–चार अहंकारी छात्राएँ प्रायः प्रत्येक कक्षा में पाई जाती हैं। नैंसी को वर्षों बाद उस दिलीप की आवश्यकता पेश आ जाती है जिसको विद्यार्थी काल में उसने उपेक्षित–तिरस्कृत किया था। लॉकडाउन में निजी संस्थानों के द्वारा वेतन कम करने या पद से हटाने के अनेक प्रकरण हुए हैं। नैंसी के पति को टर्मिनेट कर दिया गया है। नैंसी दिलीप के मेल पर वर्षों बाद प्रकट होती है और चाहती है कि दिलीप संलग्न पिटिशन में हस्ताक्षर करे तथा और मित्रों को भी प्रेषित करे। वह सामूहिक रूप से सिद्ध करना चाहती है कि उसके पति के साथ अन्याय हुआ है। दिलीप नैंसी का दुर्व्यवहार नहीं भूला है फिर भी नैंसी का साथ देते हुए सकारात्मक तरीका अपनाता है। आज के कृत्रिम बल्कि क्रूर हिंसात्मक समाज में ऐसे ही सकारात्मक भाव व संदेश देने वाली कहानियों की जरूरत है।

– सुषमा मुनीन्द्र, वरिष्ठ कहानीकार, सतना (म.प्र.)

❍ ❍ ❍

3

चार्ली चैप्लिन ने कहा था

व्हाट्सएप पर आए मैसेज को पढ़ कर पलक पल भर के लिए विचलित हुई फिर चिर–परिचित शैली में हँसते हुए बोली – "अब आएगा असल जिंदगी का मजा।" रात को दस बजे पलक को अचानक यूँ हँसते देख उसकी रूममेट कुमुद ने पूछा – "क्या हुआ पलक, क्यों इतनी खुश हो रही हो, कोई भयानक जोक भेजा है किसी ने", पर पलक ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया और उसे घूर कर रहस्यमय अंदाज में देखती रही। कुमुद ने उसके हाथ से मोबाइल ले लिया और संदेश पढ़ने लगी। पराग का मैसेज था – "सुना तुमने, आज रात से 21 दिनों का टोटल लॉकडाउन हो गया है। ट्रेनें, बसें, हवाई जहाज सब बंद। कोई कहीं आ जा नहीं सकता"

मैसेज पढ़ते ही कुमुद को अपनी सारी इन्द्रियाँ शिथिल होती प्रतीत हुईं। 28 मार्च की सुबह पलक, कुमुद और पराग तीनों का ही गौहाटी एक्सप्रेस से पटना के लिए रिजर्वेशन था। "अब क्या होगा" वाले भाव ने सारे शरीर में थरथराहट भर दी जैसे बिजली के नंगे तारों को छू लिया हो।

पलक ने उसे छेड़ा – "जानू कैसा लगा, जोर का झटका जोर से ही लगा न"

"तू पागल हो गई है पलक, हम यहाँ फँस चुके हैं और तू हँसे जा रही है, सोच, क्या होगा हमारा, हम छः सात लड़कियाँ ही बचे हैं होस्टल में, बाकी सब जा चुकी हैं घरों को" – कुमुद की आवाज बोलते–बोलते भर्राने लगी थी, लगा रो ही देगी।

"देख कुमुद, आज पूरे दिन पढ़ाई में इतना खोई रही कि हँसने का मौका ही नहीं मिला सो अभी हँस लिया .. आज का अपना कोटा पूरा हुआ .. तुझे पहले भी बता चुकी हूँ कि जिंदगी का वह दिन सबसे बुरा दिन होता है जिस दिन मैं हँसती नहीं हूँ .. ये मेरी नहीं चार्ली चैप्लिन की सीख है। उन्होंने ही कभी यह कहा था। मुझे उनकी यह बात हमेशा प्रेरणा देती आई है, हँस लो तो सारा तनाव गायब हो जाता है, सोचने समझने की शक्ति बढ़ जाती है" – पलक ने संजीदा होते हुए कहा – "पराग का मैसेज पढ़कर मैं भी पल भर के लिए डर गई थी, इसलिए हँस कर

भीतर का डर निकाल दिया। यदि रोने से बात बन जाए तो हम मिल के रो लेते हैं पर तुम भी जानती हो कुछ नहीं होगा इससे, समस्या आ गई है तो हल निकालेंगे, कोई न कोई रास्ता निकलेगा”

”मुझे तो कुछ सूझ नहीं रहा है क्या करेंगे हम, सोनी आंटी ने भी एक अप्रेल तक होस्टल खाली करने का अल्टीमेटम दिया है, कहाँ जाएँगे हम”

”सो जाओ आराम से अभी, बहुत टाइम है, सुबह डिसाइड करते हैं” – पलक ने कुमुद को ढाढस बँधाते हुए कहा – ”तुम बहुत जल्दी डर जाती हो, जिंदगी डर से आगे नहीं बढ़ती, हौसले से बढ़ती है .. सोचो यदि मैं और पराग चले गए होते तो तुम क्या करती, अब हम तीनों साथ हैं तो जो होगा हम साथ में निपटेंगे”

पलक और कुमुद एचीवर्स गर्ल्स होस्टल में रहकर आई.आई.टी. की कोचिंग ले रहीं थी। पराग, केतन वर्मा के यहाँ दो और लड़कों के साथ पेइंग गेस्ट था। पलक और पराग नौवीं क्लास से साथ पढ़ रहे थे तथा मुजफ्फरपुर से कोचिंग लेने कोटा आए थे। कुमुद आरा से आई थी। ट्रेन में ही कुमुद की दोनों से पहली मुलाकात हुई थी। एक ही बोगी में रिजर्वेशन था तीनों का। कुमुद के साथ उसके चाचा कोटा जा रहे थे जबकि पराग की माँ साथ में थी। पराग के पापा ने मुजफ्फरपुर से चलने के पहले ही केतन वर्मा और एचीवर्स गर्ल्स होस्टल के केयर टेकर से बात कर पराग और पलक के रहने की व्यवस्था कर दी थी। दोनों पते उनके एक मित्र ने उन्हें दिए थे। चाचा ने भी कोटा पहुँच कर कुमुद के रहने की व्यवस्था उसी होस्टल में कर दी और दोनों रूममेट बन गई।

ट्रेन में अचानक हुई दोस्ती धीरे–धीरे प्रगाढ़ता में बदल गई। कुमुद के पापा सत्ताधारी दल के विधायक थे और हमेशा व्यस्त रहते थे। कुमुद, माँ और दादा–दादी के साथ गाँव में रहती थी। दादा कभी गाँव के सरपंच थे और चाचा वर्तमान में जनपद पंचायत के सदस्य, यानि कि पूरा परिवार राजनीति के रंग में रँगा हुआ था। माँ सीधी–सादी गृहणी, ज्यादा पढ़ी–लिखी नहीं, काम से काम रखने वाली। ज्यादा पढ़े–लिखे तो पिताजी भी नहीं थे पर तिकड़म भिड़ाने में उनका कोई सानी नहीं था। पिता कभी कभार ही गाँव आते और लोगों से घिरे रहते। पत्नी से बहुत खफा रहते। बेटी से बोलते – ”तुझे मेरी विरासत संभालना है, थोड़ा दबंग बन, माँ जैसी दब्बू बन कर राजनीति में नहीं टिक सकेगी।” कुमुद माँ की ओर देखती तो उसे बुरा लगता और सोचती, पिता सही कहते हैं – दुनिया में दब्बू लोगों की कदर नहीं होती। उसने ठान लिया कि वह माँ जैसी दब्बू नहीं बनेगी लेकिन माँ के समूचे किरदार से खुद को अलग–थलग कर पाना भी उसके लिए संभव नहीं हो पाया। वह बोल्ड बनने की कोशिश करती रही पर पूरी तरह आत्मनिर्भर कभी

नहीं बन सकी। छोटे–मोटे कामों के लिए भी उसे माँ के सहारे की जरूरत पड़ जाती। वह ग्यारहवीं में जब क्लास–मॉनिटर चुनी गई तो पिता बहुत खुश हुए थे। वह उसे इंजीनियर बनाना नहीं चाहते थे, कहते – "क्या करोगी इंजीनियर बन के, हमारे प्रांत में आठवीं फेल मंत्री बन जाते हैं, अगला चुनाव जीतने पर मैं भी मंत्री पद का दावेदार हो जाऊँगा।" फिर अचानक पढ़ाई को लेकर उनका विचार बदल गया। दरअसल जबसे उन्होंने राजस्थान और हरियाणा में फर्राटेदार अंग्रेजी बोलने वाली एम.बी.ए. और इंजीनियर महिला सरपंचों के बारे में सुना था तभी से उनने कभी कुमुद के इंजीनियर बनने की इच्छा का विरोध नहीं किया था। उन्हें लगने लगा था कि इंजीनियर बनने के बाद राजनीति में बेटी की ब्रांड वैल्यू बढ़ जाएगी।

पलक, मास्टर पिता की बेटी, आठवीं तक अपने पैतृक गाँव बारा बुजुर्ग स्कूल में पढ़ी। गाँव ऐसा कि बेगमती नदी हर साल बाढ़ का ऐसा दर्द दे जाती कि जिंदगी पटरी पर आने में महीनों गुजर जाते। जिंदगी वापस शून्य से शुरु करनी पड़ती। पर दिलेरी ऐसी कि सब कुछ खोकर भी जिंदगी में आगे बढ़ने का हौसला कभी नहीं खोया। पलक ने मुश्किलों पर विजय पाने का जज्बा इसी गाँव की हवा, पानी, मिट्टी से सीखा। कुछ बातें राखी बहिनजी से स्कूल में सीखीं। उन्होंने ही उसे चार्ली चैप्लिन की कहानी छठवीं कक्षा में सुनाई थी तब वह चार्ली चैप्लिन के बारे में जानती भी नहीं थी। कहानी उसके मन को छू गई और उसने जिंदगी की दुश्वारियों के बीच हँसना सीख लिया। आगे की पढ़ाई के लिए वह मुजफ्फरपुर आ गई। पराग दूर के रिश्तेदार का बेटा था, उसी स्कूल में पढ़ता था, पढ़ने में होशियार था सो दोस्ती हो गई। पराग माँ के साथ रहता था। पापा सेल्सटैक्स इंस्पेक्टर थे जिनकी पोस्टिंग दरभंगा में थी। वीक–एंड पर आते और दो दिन साथ रहकर सोमवार की सुबह चले जाते। पापा की अनुपस्थिति में सारे बाहरी काम पराग को करना पड़ते जिससे उसमें आत्मविश्वास आता गया और जिम्मेदारियों को निभाने का दायित्वबोध भी। हर काम वह पूरे मन और सलीके से करने का आदी हो गया।

अगले दिन सुबह–सुबह मिसेज सोनी एक केतली में चाय और बिस्किट के तीन–चार पैकेट लेकर होस्टल आईं और सभी लड़कियों को मेस में बुलाकर बोली – "आज न भानू आया है और न ही रूपा। नाश्ता नहीं बना है और खाना भी नहीं बन पाएगा। मैं तुम लोगों के लिए चाय और बिस्किट लेकर आई हूँ, लंच में खिचड़ी बना दूँगी। 31 मार्च तक मैं इतना ही अरैंज कर सकती हूँ। तुम सबको इसी में एडजस्ट करना होगा।"

"मैम, वो तो सब ठीक है .. पर हम लोग जाएँगे कहाँ, सरकार ने तो सब कुछ बंद कर दिया है हमारा रिजर्वेशन भी बेकार हो गया" – चिंतित वंदना रावत ने मिसेज सोनी से कहा।

"तुम मेरी भी परेशानी समझो वंदना, कुक और साफ–सफाई करने वाले नहीं आएँगे तो अकेले कैसे सारी चीजें हैंडल कर सकूँगी, घर की भी जिम्मेदारी है, मेस का सामान, सब्जी–भाजी लाने वाला भी कोई नहीं है, तुम्हारे अंकल की भी तबियत ठीक नहीं है कुछ दिनों से" – मिसेज सोनी ने सभी लड़कियों को अपनी परेशानियाँ गिनाई।

"आप पास की व्यवस्था करवा दीजिए हमारे लिए, हम अपनी बुआ के यहाँ झालावाड़ चले जाएँगे, दीप्ति को भी साथ ले जाएँगे" – वफा अब्बासी ने कहा। दीप्ति ने सिर हिलाकर अपनी रजामंदी व्यक्त की।

"ठीक है, मैं डी.एस.पी. राजावत से बात करती हूँ उम्मीद है पास मिल जाएगा, बाकी लोग भी इसी तरह व्यवस्था जमा लें" – मिसेज सोनी बोलीं।

"मेरे पापा अपने एक बैंक कलीग से बात कर रहे हैं, दोपहर तक पता लग जाएगा, मैं शिखा को लेकर उनके यहाँ चली जाऊँगी" – रजनी सिकदर ने कहा।

"वेरी गुड, देखो कितनी आसानी से सब कुछ हो गया, मैं नाहक चिंता कर रही थी" – मिसेज सोनी पलक और कुमुद की ओर देखते हुए बोलीं – "तुम लोगों की चिंता नहीं है मुझे, कुमुद के पापा एम.एल.ए. हैं वह तुम लोगों की कुछ न कुछ व्यवस्था करा ही देंगे, अब बचेगी वंदना, उसे मैं अपने साथ ले जाऊँगी .. देखो, हो गई न सारी परेशानी हल"

मिसेज सोनी चली गईं, विश्वास जताने के बहाने कुमुद पर बिजली गिराकर, ऐसा कुमुद को ही आभास हुआ। वह रात में ही माँ को सारी कहानी सुना चुकी थी। पापा को भी मैसेज किया था पर अभी तक किसी का न जवाब आया था और न ही फोन। उसे पता था कि माँ जानकर बहुत परेशान हो गई होगी, पर वह चाहकर भी कुछ करने की स्थिति में नहीं है। चाचा से जरूर कह सकती हैं पर चाचा भी मनमौजी हैं, अक्सर हफ्तों तक गाँव ही नहीं आते। सुना है, आरा में चाचा का किसी और औरत से भी चक्कर है। चाची भी कुछ नहीं कर सकतीं। उनकी स्थिति तो माँ से भी ज्यादा खराब है। शादी के नौ साल बाद भी बच्चा नहीं होने से हर कोई उन्हें तिरस्कार की नजर से देखता है। पापा का क्या, उनने तो अभी तक मैसेज ही नहीं देखा। जरूर रात में बैठक जमी होगी सो अभी तक सो रहे होंगे। मैसेज देखेंगे तो फोन आएगा उनका।

पलक जितनी आसन्न विपत्ति से बेफिकर दिख रही थी उसके अम्मा–पापा उतने ही परेशान थे। सुबह से दो बार फोन कर चुके थे और अपनी लाचारी प्रदर्शित करते हुए बहुत सी हिदायतें दे चुके थे। पलक हर बार उन्हें दिलासा देने की कोशिश करती दिखाई देती – "आप ज्यादा परेशान मत होइये, हम अपना पूरा ध्यान

रखेंगे। बहुत सी लड़कियाँ अभी होस्टल में हैं, सोनी आंटी भी हमारा पूरा ख्याल रख रही हैं, आज तो वह स्वयं अपने हाथ से नाश्ता बनाकर हमारे लिए लाई थीं।"

"बेटा तुम कितना ही कहो कि अच्छे से हैं पर माँ का दिल कहाँ मानता है, हमें हर पल चिंता खाए जा रही है। तुम एक गलती कर ही चुकी हो, अपना रिजर्वेशन कैंसिल करा कर .. 21 तारीख को यदि वहाँ से आ जाती तो ये परेशानी नहीं होती"

"अम्मा पहले कहाँ पता था कि ऐसा कुछ होने वाला है। सोचिए, यदि मैं आ जाती तो कुमुद कितना निःसहाय हो जाती। उसकी तो हालत खराब हो जाती। अभी हम दोनों साथ में हैं तो दोगुनी हिम्मत है हमारे साथ, 21 दिनों की ही तो बात है, कट जाएँगे ये मुश्किल भरे दिन"

कोरोना महामारी की बढ़ती आशंका के चलते कोचिंग संस्थानों ने सावधानी बरतते हुए 15 मार्च से ही कक्षाएँ स्थगित कर दी थी। जिस दिन कोचिंग कक्षाएँ स्थगित होने की सूचना संस्थान ने चस्पा की थी उसी दिन पराग ने अपना और पलक का आनलाइन रिजर्वेशन करवा लिया था। पलक, पराग पर नाराज भी हुई थी कि रिजर्वेशन कराने से पहले एक बार कुमुद से पूछ तो लेना था। पराग ने तो कुमुद का भी रिजर्वेशन करने की कोशिश की थी लेकिन किसी भी क्लास में कन्फर्म टिकट नहीं मिल रहा था। क्या करता वह, सफाई दी थी पराग ने। सुनकर कुमुद उदास हो गई थी, उसके शब्द – "क्या तुम मुझे अकेला छोड़कर चली जाओगी" पलक के कानों में रात भर बजते रहे थे। सुबह होते ही पराग को फरमान सुना दिया था उसने – "यार, हम साथ आए थे तो अब साथ ही चलेंगे, ये टिकट कैंसिल कर दो और जिस तारीख का कन्फर्म मिले उसमें करा लो।" अगले छः दिनों तक सभी ट्रेनें फुल थीं। इस बीच उनके बहुत से संगी साथी पी.जी. या होस्टल छोड़ कर जा चुके थे और जाते जा रहे थे। संयोग से 28 मार्च को तीन बर्थ गौहाटी एक्सप्रेस में मिल गईं। तीनों जाने की तैयारी कर रहे थे कि लॉकडाउन की घोषणा हो गई।

पलक माँ से बात कर फ्री हुई ही थी कि पराग का फोन आ गया – "यार, घर में सब बहुत परेशान हैं नाना, नानी और बुआ तक के फोन आ गए हैं .. केतन अंकल ने भी माँ से बात कर उन्हें समझाया है पर वह हैं कि समझ नहीं रही हैं .. तुम लोगों के क्या हाल हैं"

"सब बढ़िया है इधर, नाश्ते में चार पारले जी खाए हैं और लंच में खिचड़ी मिलने वाली है"

"मजाक मत कर यार, सोनी आंटी बहुत खडूस औरत हैं यह तो मैं भी जानता हूँ .. पर पहले ही दिन अपनी औकात दिखा देंगी ये नहीं सोचा था" – पराग ने

चिंता जताते हुए कहा – "31 के बाद क्या करेगी तू, उनने तो अलटीमेटम पहले से ही दे रखा है"

"तेरे साथ आकर रहूँगी" – पलक अपने बेलौस अंदाज में बोली – "अरे डर मत, नहीं आऊँगी, जब समय आएगा तब डिसाइड करेंगे .. पर कुमुद बहुत परेशान है .. सोनी मेडम ने उससे कह दिया है कि तेरे पापा एम.एल.ए. हैं तो वह कोई रास्ता निकाल ही लेंगे .. कल से अभी तक उसके पापा का फोन भी नहीं आया है सो उदास भी बहुत है बेचारी"

"उसकी उदासी का एक कारण तुम भी होगी, तुमने जरूर ठहाके लगाए होंगे .. उसे ढाढस बँधाने के स्थान पर .. वो क्या .. वही घिसी पिटी चार्ली चैप्लिन ने कहा था वाली कहानी चैंप दी होगी"

"चल मजाक बहुत हो गया, अब सीरियस हो जा .. इस बारे में सोच, यदि आंटी सही में नहीं मानी तो हम लोग क्या करेंगे" – पलक की आवाज में पराग को पहली बार चिंता की खरखराहट सुनाई दी।

"मैं अंकल से बात करता हूँ, तुम्हें भी जानते ही हैं .. बहुत भले इंसान हैं .. उनकी बहुत जान–पहिचान है सबसे, वह जरूर हमारी मदद करेंगे" – पराग ने कहा।

"हाँ, जल्दी कर ले, तब तक मैं आंटी को भी पटाने का प्रयास जारी रखूँगी"

"तो एहसास हो गया कि हम फँस गए हैं यहाँ पर, अंकल ने आज ही कहा है कि लॉकडाउन अभी और आगे भी बढ़ सकता है"

"तुम डरा रहे हो मुझे"

"नहीं मेरी माँ, अंकल ने जो कहा बस वह बताया है"

"अच्छा अभी बंद करती हूँ, शायद कुमुद के पापा का फोन आया है, वह चुप रहने का इशारा कर रही है"

पापा से बात हो जाने के बाद भी कुमुद के चेहरे पर आश्वस्ति के भाव नहीं आए थे। ये परेशानी भी ऐसी थी कि जो जहाँ है उसे वहीं रहना है और अपने बूते पर ही स्थिति से निपटना है। दूसरी जगह बैठा व्यक्ति केवल सान्तवना की चाशनी पिला सकता है, कर कुछ नहीं सकता। शायद कुमुद के पापा ने भी अपनी मजबूरी बताते हुए उसे यही समझाइश दी थी, तभी तो बात करने के बाद उसने पलक से कहा था – "पापा के भरोसे नहीं बैठ सकते, अपने को ही कुछ व्यवस्था जमानी पड़ेगी"

"जम जाएगी डियर, पराग केतन अंकल से बात करने वाला है"

दो दिन बिस्किट और खिचड़ी खाते हुए गुजर गए। होस्टल में उनके अलावा केवल वंदना ही बची थी, बाकी चारों लड़कियाँ जा चुकी थी। तीसरे दिन सुबह पराग का फोन आया – "तुम लोग तैयार रहो, मैं केतन अंकल के साथ लेने आ रहा हूँ, ऊपर वाले कमरे में उन्होंने तुम लोगों के रुकने की व्यवस्था कर दी है, साथ ही कहा है कि जब तक रास्ते नहीं खुलेंगे तब तक आराम से रह सकती हो"

पलक खुशी से उछल पड़ी, बोली – "थैंक यू यार, तुमने हमारी मनचाही मुराद पूरी कर दी"

कुमुद ने सुना तो लपक कर पलक को गले लगा लिया। जब दोनों अलग हुईं तो कुमुद की आँखों में आँसू झिलमिला रहे थे। पलक ने उसकी ठोड़ी पकड़ते हुए कहा – "अब तो मुस्करा दो, आज से खिचड़ी से छुट्टी जो मिली"

केतन अंकल के यहाँ आकर दोनों बहुत आश्वस्त और सुरक्षित महसूस कर रही थीं। आंटी की किचन के दरवाजे भी दोनों के लिए खुले हुए थे, कुछ भी बनाने और खाने–पीने की छूट। मनचाहा आश्रय और सुरक्षा कवच पाकर दोनों का समय आराम से कटने लगा था यद्यपि बाहर से आ रहीं खबरें चिंताजनक ही थी। पॉजिटिव केसेज की संख्या हर दिन बढ़ रही थी और विशेषज्ञों के आकलन भयावह तस्वीर पेश कर रहे थे। डर का आलम यह था कि देश के हर कोने से हजारों लोग सड़कों पर निकल आए थे और हजारों कि.मी. की दूरी को चुनौती देते हुए पैदल ही अपने घरों की ओर चल पड़े थे। टीवी पर पलायन के इन दृश्यों को देखकर हृदय दृवित हो जाता और जनसेवा की शपथ लेनेवाले नेताओं की बेरुखी पर गुस्सा फूटने लगता था। केतन अंकल ने बच्चों के सामने न्यूज देखना ही बंद कर दिया। लंच के बाद सब ड्राइंग रूम में बैठकर नेटफ्लिक्स या फिर जी–क्लासिक्स पर फिल्में देखते। जिंदगी पहले जैसी न सही पर निराशा के भँवर से उबरने लगी थी। घर वाले भी अब पहले जैसे चिंतित नहीं लगते थे। बातचीत में उनके अंदर का डर झलकना कम हो गया था और वह आंटी को परेशान न करने व उनका ख्याल रखने की हिदायत देने लगे थे। पढ़ाई का दवाब जाता रहा था सो मस्ती का मूड भी होने लगा था। डिनर के बाद पाँचों मिलकर अंताक्षरी खेलते और वीडियो बनाकर घरवालों को यह जताने के लिए भेजते कि देख लो, महामारी के इस दौर में भी वे कितने निश्चिंत और एनर्जी से भरपूर हैं। अंकल आंटी भी कितने प्रसन्न हैं और उनकी कम्पनी को एन्जॉय कर रहे हैं।

एक सप्ताह हो गया था पलक और कुमुद को केतन अंकल के यहाँ रहते हुए। पलक के हँसमुख व्यक्तित्व से केतन अंकल भी बहुत प्रभावित थे। वह अक्सर

कहते कि "पलक ने हमें जिंदगी जीने का नया नजरिया दिया है। जब–जब वह चार्ली चैप्लिन का नाम लेकर खिलखिलाती है, मुझे बहुत आनंद मिलता है। मुझे अपने पसंदीदा हीरो देवानंद का यह गीत याद आ जाता है – मैं जिंदगी का साथ निभाता चला गया, हर फिक्र को धुएँ में उड़ाता चला गया।" अंकल पर जब मस्ती सवार होती तो वह ये गीत गुनगुनाने लगते और सब उनका साथ देते। पलक की खुशी के लिए यू–ट्यूब चैनल पर चैप्लिन की फिल्में भी सबके साथ मिलकर देखते।

अप्रेल की छः तारीख थी उस दिन। कुमुद जब सुबह उठी तो देखा पापा के चार–चार मिस्ड काल हैं उसके मोबाइल पर। शाम को अंताक्षरी खेलते समय उसने मोबाइल को म्यूट मोड में कर दिया था जिसे बाद में वह अनम्यूट करना भूल गई थी। तीन दिन बाद पापा का फोन आया था, पता नहीं क्या–क्या सोचा होगा उन्होंने। कुमुद ने तुरंत ही उन्हें काल बैक किया – "पापा, मोबाइल साइलैंट हो गया था सो पता ही नहीं चला आपके काल का .. आप ठीक तो हैं, हम लोग भी अच्छे से हैं यहाँ पर"

"बेटा, मैं तुम्हें लेने आ रहा हूँ, घर से निकल गया हूँ परसों सुबह कोटा पहुँच जाऊँगा, तैयार रहना"

"जी पापा, तैयार रहेंगे हम" – कुमुद चहकते हुए बोली – "कहाँ तक पहुँच गए हैं आप"

"दानापुर आने वाला है, पटना में कुछ देर रुकेंगे, पास और सिक्योरिटी गार्ड को लेते हुए वहाँ से शाम को निकलेंगे"

"ठीक है पापा, जहाँ सिग्नल मिलें बात करते रहिए"

तीनों घर जाने की कल्पना करके पुलकित थे। देर से ही सही कुमुद के पापा को एम.एल.ए. होने की अहमियत का भान तो हुआ। कुमुद ने सगर्व यह सूचना सोनी आंटी को भी दी। पराग विशेष रोमांचित था। वह दो दिनों में अनेक बार कुमुद को थैंक्स कह चुका था। पलक ने भी कुमुद को गले लगाकर धन्यवाद कहा था। इसके बाद तीनों अपना सामान पैक करने में जुट गए थे। केतन अंकल भी बच्चों की खुशी देखकर प्रसन्न थे। महीनों बाद अपने पैरेंट्स से मिलने की खुशी क्या होती है वह इससे भलीभाँति परिचित थे। उन्होंने भी तो होस्टल में रहकर कॉलेज की पढ़ाई की थी। कॉलेज की छुट्टियाँ होते ही पहली ट्रेन पकड़ कर घर भागते थे।

रात में नौ बजे कुमुद ने फोन लगाकर पता किया कि पापा कहाँ पहुँच गए। उस समय वह गोरखपुर की सीमा में प्रवेश कर रहे थे। रात में उनका वहीं मौसी के यहाँ रुकने का कार्यक्रम था। अगले दिन सुबह पाँच बजे गोरखपुर से निकलकर

जयपुर के आसपास रात्रि विश्राम करने की योजना थी तथा अगले दिन फिर सूर्योदय से पहले चलकर आठ बजे तक कोटा पहुँचने का लक्ष्य था।

जयपुर पहुँचने से पहले शाम को पापा ने कुमुद को फोन किया – "तुमने चलने की तैयारी कर ली कि नहीं, कोटा में ज्यादा देर नहीं रुकेंगे, तुरंत निकलेंगे वहाँ से। तुम आंटी से कहकर चार लोगों के लिए तीन टाइम का खाना बनवा लेना, वहाँ आकर भुगतान कर देंगे उनको। यहाँ पर तेज बारिश हो रही है फिर भी हजारों नालायक लोगों का हुजूम सड़कों पर पिला पड़ा है, मानते ही नहीं कि कुछ दिन घर में रहे आएँ, सरकार उनके खाने–पीने की व्यवस्था करने के लिए कह रही है न।"

"ठीक है पापा, आंटी से बोलकर रास्ते के लिए खाना बनवा लूँगी" – कुमुद ने कहकर फोन रख दिया। शायद उसे पापा की कुछ बातें पसंद नहीं आई थीं। क्या करे, उसके पापा हैं ही ऐसे, पता नहीं, शुरु से ही ऐसे थे या राजनीति में आकर ऐसे हो गए थे। पिछले कुछ सालों में अनेक बार उसने इस बारे में सोचा था पर कभी भी सही उत्तर खुद को नहीं दे पाई थी।

सुबह तीनों जल्दी उठ गए और नहा–धोकर तैयार भी हो गए। तीनों ने अपना सामान लाकर बरामदे में रख लिया था। पलक सबसे पहले उठी थी। नीचे आई तो देखा अंकल ब्रेडरोल के लिए उबले हुए आलू मींस रहे हैं और आंटी किचिन में पूड़ियाँ तल रहीं हैं। वह भी उनका हाथ बँटाने किचिन में आ गई। दोनों ने मिलकर सत्तर–अस्सी पूड़ियाँ बनाकर सिल्वर फॉइल में पैक कर लीं। करेले और अरबी की सब्जियाँ आंटी पहले ही बना चुकी थी। सब्जी और आचार रखने के लिए हॉटकेस उन्होंने साफ करके रखा था। नाश्ते में ब्रेड रोल खिलाने की तैयारी थी।

आठ बज कर दस मिनट पर एक टवेरा घर के सामने आकर रुकी। केतन वर्मा फुर्ती से बाहर आए और आत्मीयता से हाथ जोड़ते हुए बोले – "आइए, शिवशंकर जी स्वागत है आपका, ड्राइंग रूम में बैठते हैं"

इस बीच तीनों बच्चे भी वहाँ आ गए थे। तीनों ने शिवशंकर के पैर छुए। कुमुद ने कहा – "पापा, आप ठीक समय पर आ गए"

शिवशंकर बच्चों से फ्री होकर केतन वर्मा की ओर मुखातिब हुए – "वर्मा जी, हम जल्दी निकलेंगे, बैठेंगे बिल्कुल नहीं, बहुत लम्बा सफर तय करना है, बेमौसम बारिश भी हो रही है"

"एक कप चाय तो हो सकती है, नाश्ता भी तैयार है" – केतन वर्मा ने अनुरोध किया।

"अभी माफ कीजिए" – शिवशंकर ने केतन वर्मा से कहा और फिर कुमुद की ओर मुखातिब होते हुए बोले – "बेटा कितना पेमेंट करना है अंकल को"

"पापा मैंने नहीं पूछा, पूछने की हिम्मत नहीं हुई, वे हमें मानवता के नाते लेके आए थे कैसे पूछती उनसे .."

"ठीक है तुम अपना सामान गाड़ी में रखो .. ये बच्चे भी कितने नादान हैं केतन जी, हर बात में भावुक होने लगते हैं, बड़ी खराब आदत है इनकी .. आप ही बताइए, कितना पेमेंट करूँ" – शिवशंकर खिसियानी हँसी हँसते हुए बोले।

"आप बच्चों को सुरक्षित घर पहुँचा दीजिए, मेरा पेमेंट हो गया समझो" – केतन वर्मा ने विनम्रता पूर्वक कहा।

तभी बूँदाबाँदी शुरु हो गई। बच्चों ने अपना सामान गाड़ी में रखने के लिए उठाया ही था कि शिवशंकर बोले – "कुमुद क्या इतना सारा सामान है तुम्हारे साथ"

"नहीं पापा, हम तीनों का है" – कुमुद ने उत्तर दिया।

"बेटा, क्या है ये .. इतने लोग नहीं जा सकेंगे गाड़ी में, सोशल डिस्टेंसिंग के सरकारी नियम कायदे भी हैं कुछ .. इनको लाने के लिए मुख्यमंत्री जी बसों की व्यवस्था कर रहे हैं, कुछ दिन बाद आ जाएँगे ये लोग, तुम चलो"

"पापा, ये हमको छोड़कर .." कुमुद कुछ कहना चाहती थी पर तब तक शिवशंकर गाड़ी में बैठ चुके थे। ड्राइवर ने गाड़ी भी स्टार्ट कर ली थी। कुमुद वहीं खड़ी थी कि पापा की कड़कदार आवाज कानों मे पड़ी –"जल्दी बैठो।"

कुमुद के बैठते ही बारिश शुरु हो गई। उसके अंदर पहले से ही बारिश हो रही थी। उसकी हिम्मत नहीं हुई कि वह नजरें उठाकर पलक और पराग को असहाय खड़े हाथ हिलाते हुए देख सके।

गाड़ी आँखों से ओझल होने तक पलक वहीं खड़ी भीगती रही। केतन अंकल ने आवाज दी – "पलक बेटा, अंदर आ जाओ, तबियत खराब हो जाएगी"

पलक हँसी, वही चिरपरिचित हँसी। हर गम पर भारी पड़ने वाली हँसी।

फिर अचानक बारिश थम गई। शायद पलक की हँसी देखकर उसे अपनी निरर्थकता का एहसास हो गया था।

पहले पाठक का मत

कुछ कहानियाँ अपनी सहजता और संवेदनशीलता के कारण आपको कहीं बहुत गहरे तक छू जाती हैं। 'चार्ली चैप्लिन ने कहा था' एक ऐसी ही कहानी है। पलक, पराग और कुमुद कोचिंग के लिए कोटा आए हुए हैं। तीनों के बीच गाढ़ी मित्रता है, इतनी कि पलक और पराग, कुमुद के लिए अपनी ट्रेन छोड़ देते हैं। फिर तीनों लॉकडाउन में फँस जाते हैं। घर वापसी के लिए व्यग्र ये बच्चे जाने क्या–क्या सपने बुनते हैं पर कुमुद के विधायक पिता की असंवेदनशीलता के कारण सब बिखर जाता है। बचता है तो सिर्फ चार्ली चैपलिन का डायलॉग और पलक की वह हँसी जो कितनी ही बड़ी कठिनाइयों को बौना साबित करने का हुनर जानती है। कहानी का अंत उसकी सबसे बड़ी शक्ति है। यही इस कहानी को आपको याद रखने के लिए मजबूर करता है। मुझे लगता है कि अरुण अर्णव खरे को कहानीकार के रूप में याद करने में इस कहानी की बड़ी भूमिका रहेगी।

– सुभाष चंदर वरिष्ठ व्यंग्यकार एवं आलोचक, गाजियाबाद (उ.प्र.)

❍ ❍ ❍

4

विश्वासघात

17 मार्च, मॉस्को का डोमदइदोवा अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट।

नई दिल्ली के लिए जाने वाली एयरोफ्लोट रसियन एयरलाइन की फ्लाइट एसयू 232 के उड़ने में अभी सात घंटे का समय शेष है। नेत्रपाल, परवीन कुमार, राज सिंह और हीरानंद पिछले दो घंटे से अपनी कुर्सियों पर जमे हुए हैं, न आपस में बात कर रहे हैं और न ही बहुत सहज दिखाई दे रहे हैं। सब अपनी ही दुनिया में खोए हुए हैं। एक ऐसी खामोशी चारों के बीच पसरी हुई है जैसे वे एक दूसरे को जानते ही न हों। सबके चेहरों पर तनाव पुता हुआ है और हावभाव में बेचैनी की छाप है। उन चारों से अलग बैठे सोहनलाल भी परेशान दिखाई दे रहे हैं। बीच–बीच में वह अपनी सीट से उठ कर खड़े हो जाते हैं और कुछ कदम चहलकदमी करके वापस बैठ जाते हैं।

सोहनलाल ने इशारे से नेत्रपाल को अपने पास बुलाया – ”इस बोतल में पानी भर लाओ, गला सूख रहा है, मैं कई बार देख के आ गया, पास में कोई टेप ही दिखाई नहीं दिया, तुम पता करो किसी से, दिमित्रि आ जाते तो उनसे मदद मिल जाती”

”जी सर, पूछता हूँ किसी से .. वो पानी को रसियन में क्या कहते हैं, क्या याद है आपको, दिमित्रि ने बताया था”

”अरे ये इतने कठिन शब्द है कहाँ याद रहते हैं” – सोहनलाल ने कहा – ”तुम्हें इनको नोट करके रखना चाहिए था, हर समय दिमित्रि हमारे साथ थोड़े ही रहेगा बताने को”

”परवीन पाई जी, आपको याद है पानी को रसियन में क्या कहते हैं” – नेत्रपाल ने वहीं से आवाज देते हुए पूछा।

परवीन कुमार, जो किसी गहन मानसिक ऊहापोह की स्थिति में फँसा लग रहा था, ने नेत्रपाल की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह पूर्ववत् कुर्सी पर सिर टिकाए बैठा रहा।

"वोदा .. पानी को वोदा कहते हैं" – बगल की सीट पर बैठे सज्जन, जो उन दोनों की बातें सुन रहे थे, ने कहा – "वोदोप्रोवोदनी क्रान कह कर पूछना तभी कोई बता सकेगा"

"वोदोप्रोवो...." याद करते हुए नेत्रपाल सोहनलाल से बोतल लेकर चला गया।

"धन्यवाद, आप यहीं रहते हैं" – सोहनलाल ने उन सज्जन से मुखातिब होते हुए पूछा।

"मैं भी पंजाबी हूँ पर पिछले पंद्रह सालों से टोरंटो में रहता हूँ, एक प्रोजेक्ट के सिलसिले में छः माह से यहाँ था सो कामचलाऊ रसियन सीख ली"

"छः माह से तो हम लोग भी मिंस्क में हैं पर हमारे पल्ले ही नहीं पड़ती यहाँ की भाषा" जबरन होंठो पर हँसी लाते हुए सोहनलाल ने कहा – "आपका शुक्रिया, आपने हमारी मुश्किल आसान कर दी"

"आप लोग वहाँ कैसे गए थे" उन सज्जन ने सोहनलाल को गौर से देखते हुए प्रतिप्रश्न किया।

"हम लोगों का कोचिंग कैम्प लगा था वहाँ, महामारी ने सारा शिड्यूल चौपट कर दिया, कैम्प भी अचानक समाप्त करना पड़ा सो वापस जा रहे हैं" – सोहनलाल बोले – "ओलिम्पिक आगे बढ़ जाने से लड़के बहुत निराश हैं, उनकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया।"

"तो आप लोग खिलाड़ी हैं, देश का नाम रोशन करते हैं .. आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई। मैं दलजीत सिंह रंधावा, मोगा पंजाब से हूँ, मेरे चाचा ने भी बास्केटबाल में ओलिम्पिक खेला है, यहीं मॉस्को में, चालीस साल पहले"

"अरे वाह, आप भी खूब मिले" – सोहनलाल ने कहा – "ये चारों मेरे शागिर्द हैं, इन चारों ने इस साल के ओलिम्पिक के लिए फ्रीस्टाइल रेस्लिंग में क्वालिफाई किया है, चारों से इस बार पदक की आशा थी, पर सब कुछ गड़बड़ हो गया"

सोहनलाल और दलजीत में बहुत देर तक बातें होती रहीं। दलजीत उनसे कुश्ती के बारे में प्रश्न करता रहा और सोहनलाल इत्मीनान से उनको जानकारी देते रहे।

एयरपोर्ट पर पहले ही काफी भीड़ थी और लगातार बढ़ती जा रही थी। भारतीय भी अच्छी खासी संख्या में दिखाई दे रहे थे। बातों–बातों में दलजीत से ज्ञात हुआ था कि भारत जाने के लिए यह अंतिम फ्लाइट है इसके बाद सारी इंटरनेशनल फ्लाइट्स आगामी सूचना तक के लिए स्थगित कर दी गई हैं। बहुत सी फ्लाइट निरस्त भी हो गई हैं इसलिए अफरातफरी का भी माहौल है। सोहनलाल ने ऊपर

की ओर देखा और मन ही मन में बुदबुदाया – "तेरा लाख–लाख शुक्र है कि हमारी फ्लाइट केवल लेट है, निरस्त नहीं हुई है वरना हम कहीं के नहीं रहते।"

जो लोग घूमने–फिरने, बिजनेस, प्रोजेक्ट अथवा अन्य किसी काम से मॉस्को या आसपास के देशों में आए थे, आज ही लौट जाना चाहते थे। इस समय अधिकांश की पसंद मॉस्को से फ्लाइट पकड़ कर वतन लौटना था क्योंकि यूरोप के दूसरे देशों इंग्लैण्ड, स्पेन, इटली, जर्मनी आदि के मुकाबले मॉस्को में कोविद–19 का प्रकोप काफी कम था। यही वजह थी कि बेलारूस, लिथुआनिया, उक्रेन, लातविया के साथ–साथ पोलैण्ड, फिनलैण्ड और नार्वे से भी बहुत से यात्री मॉस्को से फ्लाइट लेने वहाँ पहुँचे थे। सोहनलाल और दिमित्रि के संग चारों पहलवान भी सुबह ही बेलारूस से मॉस्को आए थे।

दलजीत की फ्लाइट की बोर्डिंग शुरु हो गई थी। उसने सोहनलाल से विदा ली। बढ़ती चहलपहल और शोरगुल से परवीन असहज महसूस करने लगा था। उसने अपने बैग से कैप निकाली और अपना चेहरा ढँक लिया। सोहनलाल की नजर उस पर पड़ी तो एक हूँक सी उनके दिल में उठी। ओलिम्पिक खेलों का एक साल के लिए आगे बढ़ जाना किसी आघात से कम नहीं था। एक साल कोई छोटी अवधि नहीं होती। साल भर बाद क्या स्थिति रहेगी, अभी उसका कयास नहीं लगाया जा सकता। एक साल तक बिना पर्याप्त अभ्यास और कोचिंग के खुद को चुस्त–दुरुस्त रख पाना और लक्ष्य पर फोकस कर पाना बहुत मुश्किल काम है। ये मुश्किल तो सभी खिलाड़ियों को फेस करना है पर परवीन के लिए इस ओलिम्पिक का खास महत्व था। उसके लिए ओलिम्पिक पदक जीतने का यह आखिरी मौका था। बाकी तीनों तो अभी छोटे हैं, नेत्रपाल तो मात्र अठारह साल का है। उनके लिए अभी संभावनाओं के द्वार खुले रहेंगे परंतु परवीन तो पिछले महीने 32 साल का हो चुका है, अगले साल तैंतीस का हो जाएगा। इस उमर में ओलिम्पिक पदक की आशा नहीं कर सकते। सब कुछ खतम हो गया परवीन के लिए। कितना जी जान लगाकर मेहनत कर रहा था। जबसे उसने सुना है कि इस साल ओलिम्पिक नहीं होंगे, सदमे में है। किसी से बात भी नहीं कर रहा है। तीन–चार दिनों से सही ढंग से खुराक भी नहीं ली है। जब भी उसे समझाने की कोशिश की, एक ही बात दोहराता है, "हमें अपने कर्मों की सजा मिल रही है। हमने मंदार के साथ अच्छा नहीं किया, उसी की हाय हमें लगी है। मेरी किस्मत में ओलिम्पिक पदक नहीं है, यह हमें स्वीकार कर लेना चाहिए था पर नहीं, हमारे सिर पर तो पागलपन सवार था। हमने मंदार के खिलाफ साजिश रची और अब हम कहीं के नहीं रहे। वाहे गुरु सब देखते हैं वह सबके साथ न्याय करते हैं।"

"सही ही तो कहता है परवीन। उसके प्रति अति स्नेह रखने के कारण ही तो उनने मंदार के साथ इतना बड़ा अन्यायपूर्ण कृत्य किया था, अनजाने में नहीं, पूरी प्लानिंग कर" – सोच रहे हैं सोहनलाल – "नौ साल का था परवीन जब वह अखाड़े में कुश्ती सीखने आया था। उसकी पहली कुश्ती देखकर ही उनकी अनुभवी आँखों ने परवीन में छुपी प्रतिभा को ताड़ लिया था। तेरह साल में नेशनल सबजूनियर चैम्पियनशिप जीतने के बाद से परवीन ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा और सीढ़ी–दर–सीढ़ी आगे बढ़ता चला गया। अपनी मेहनत और लगन के बल पर परवीन ने सीनियर नेशनल चैम्पियनशिप सहित एशियाई और राष्ट्रमण्डल खेलों में अनेक पदक जीते थे। पिछले ओलिम्पिक में वह कांस्य पदक जीतते–जीतते रह गया था जब रेपीचेग राउंड के आखिरी दस सेकेंड उस पर भारी पड़ गए थे और उत्तेजना के अतिरेक में वह अपने प्रतिद्वंद्वी उज्बेक–पहलवान को एक पाइंट दे बैठा था। पूरी रात रोया था वह। इस हार से दुखी होकर उसने कुश्ती से सन्यास लेने का मन बना लिया था। उसे लगा था कि ओलिम्पिक पदक का उसका सपना अब कभी पूरा नहीं हो सकेगा। यही वह क्षण था जिसने उन्हें भी कमजोर बना दिया था। परवीन के दुख ने उन्हें भी भीतर तक तरबतर कर दिया था। पर क्या यही पूरा सच है? शायद नहीं .. परवीन की हार से वह भी तो स्वयं को हारा हुआ महसूस कर रहे थे। परवीन के सहारे वह भी तो एक ओलिम्पिक पदक अपने खाते में देखना चाहते थे। उनका भी तो वर्षों से यही सपना था कि उनका भी कोई शागिर्द ओलिम्पिक पदक जीतकर उन्हें भेंट करे। परवीन उनका सबसे होनहार और चहेता शागिर्द था जिस पर उन्हें गर्व था और भरोसा भी था कि वह एक दिन जरूर उनकी मुराद पूरी करने में सफल होगा।"

"ऐसे में वह क्या करते? क्या अपने सपने को मर जाने देते? उन्होंने वही किया जो उस समय उचित था और आवश्यक भी। जब उन्होंने परवीन से कहा था कि निराशा जाँबाजों को शोभा नहीं देती, तो मेरी ओर देखते हुए कितनी उपेक्षापूर्ण ढंग से हँसा था वह। उसकी यह हँसी अंदर तक बींध गई थी उन्हें। पर उन्होंने नजर अंदाज कर दी थी उसकी यह हरकत, अपमान का यह घूँट भी सहज बने रहकर हलक के नीचे उतार लिया था। उसे मेट पर वापस उतारने के लिए उन्हें कितना परिश्रम करना पड़ा था, उसके पस्त हौसलों को वापस लाने के लिए कितने यत्न किए थे उन्होंने, किस–किस तरह मोटीवेट किया था उसे। दिमित्रि ने भी उसे समझाने में मेरा साथ दिया था। उसने तो यहाँ तक कहा था कि "परवीन के लिए ही तोक्यो में कुश्ती को शामिल किया जा रहा है वरना ओलिम्पिक संघ ने तो कुश्ती को 2013 में ही ओलिम्पिक से हटाने का मन बना लिया था। उसकी किस्मत में पदक है तभी तो कुश्ती बाहर होते–होते बच गई।" पर परवीन बार–बार

यही रट लगाए रखता था कि "अब कुछ नहीं हो सकता। मैं अगले ओलिम्पिक तक 32 साल का हो जाऊँगा, इतनी उमर में भी कोई ओलिम्पिक पदक जीतता है क्या? झूठी दिलासा मत दीजिए .." उन्हें भी परवीन की आशंका सही लगती थी पर भला हो ओलिम्पिक सफरनामा के लेखक नागेश का जिनसे अचानक उस दिन दिल्ली मेट्रो में मुलाकात हो गई थी। उन्होंने तुरंत ही एडोल्फ लिंडफ़ोर्स और अनतोली रोशचिन जैसे पहलवानों के नाम गिना दिए, जिन्होंने 40 साल की उम्र में स्वर्ण पदक जीते थे।"

नागेश से मिलकर एक राह मिल गई थी सोहनलाल को। परवीन भी अधिक दिनों तक खुद को मेट से दूर नहीं रख सका। उसने अभ्यास शुरु कर दिया। 2017 में राष्ट्रीय चैम्पियनशिप जीतने के बाद उसका स्वयं में विश्वास लौटने लगा। इसी स्पर्द्धा में मंदार ने सबका ध्यान अपनी ओर खींचा था। वह फायनल में हार जरूर गया था लेकिन पारखी नजरों को उसमें भविष्य का सितारा नजर आने लगा था। अगली राष्ट्रीय स्पर्द्धा में भी परवीन ने ही जीत हासिल की। मंदार उपविजेता ही रहा। इन लगातार सफलताओं ने परवीन को उत्साहित किया पर 2019 के शुरु में हंगरी में आयोजित एक टूर्नामेंट में परवीन की दूसरे दौर में हार ने गुरु–चेले को बैकफुट पर ला दिया। इस अप्रत्याशित हार से चिंतित सोहनलाल ने परवीन को विश्व चैम्पियनशिप में न उतारने का फैसला कर लिया। सोहनलाल का मानना था कि विश्व चैम्पियनशिप में मुकाबले बहुत कठिन होंगे और इस स्पर्द्धा में पहले या दूसरे दौर में एक और हार परवीन के मनोबल को जमीन पर ला सकती है। दूसरी ओर उन्हें ये डर भी था कि यदि परवीन विश्व स्पर्द्धा से क्वालिफाइंग कोटा हासिल नहीं कर सका तो उनकी इतने दिनों की मेहनत पर पानी फिर जाएगा। उन्होंने परवीन को अपेक्षाकृत आसान एशियाई क्वालिफाइंग स्पर्द्धा में उतार कर ओलिम्पिक कोटा जीतने का विकल्प सोच रखा था। यही उनकी सबसे बड़ी गलती थी। हार के भय के बीच से जीत का रास्ता नहीं निकला करता। भाग्य भी डरपोंक लोगों पर मेहरबानी नहीं करता। परवीन के स्थान पर मंदार सराठे को विश्व स्पर्द्धा में भाग लेने भेजा गया और उसने आश्चर्यजनक रूप से कांस्य पदक जीतकर ओलिम्पिक कोटा हासिल कर लिया। मंदार की जीत गुरु–चेले के लिए किसी सदमे से कम नहीं थी। उनका ओलिम्पिक में पदक जीतने का सपना एक झटके में धूल धूसरित हो गया, अब परवीन नियमों के अनुसार अपने वजन समूह में एशियाई क्वालिफाइंग मुकाबलों में भी भाग नहीं ले सकता था।

मंदार की जीत ने परवीन से ज्यादा आहत सोहनलाल को किया, उनको कतई उम्मीद नहीं थी कि मंदार इतना बड़ा उलटफेर कर सकता है। एक तो मंदार उनके प्रतिद्वंद्वी कोल्हापुरी पहलवान एकनाथ का चेला था जिसे वह अपनी जवानी

के दिनों में कभी चित्त नहीं कर सके थे। अब उनके चेले ने भी उनको नीचा दिखा दिया था। वह परवीन को इस बार किसी भी कीमत पर विक्टरी स्टैण्ड पर देखना चाहते थे इसीलिए उन्होंने परवीन को ओलिम्पिक से पहले कठिन विश्व स्पर्द्धा से बचाकर रखा था। पर उनका यह दाँव उल्टा पड़ गया। कहते हैं न, जब समय अच्छा न हो तो विवेक का भी क्षरण हो जाता है। सोहनलाल के साथ भी यही हुआ। वह दिन रात इसी उधेड़बुन में लगे रहते कि मंदार को ओलिम्पिक में जाने से कैसे रोका जाए। उन्होंने संघ में अपनी पैठ के बल पर मंदार को अभ्यास के लिए उचित जोड़ीदार मिले, कोचिंग कैम्प में परवीन को भी नामांकित करा दिया। उनका प्लान था कि वह मंदार को अभ्यास के दौरान शारीरिक क्षति पहुँचाने की कोशिश करेंगे जिससे वह ओलिम्पिक में भाग लेने के काबिल ही न रहे। फिजिकल ट्रेनर दिमित्री से उनकी अच्छी जमती थी लेकिन मुख्य कोच मिखेल उमाखानोव बहुत समर्पित और अनुशासनप्रिय व्यक्ति थे। वह प्रेक्टिस सेशन के दौरान पूरे समय उपस्थित रहते अतएव उनकी नजरों से बचकर मंदार को शारीरिक चोट पहुँचा पाना संभव नहीं लग रहा था। हर गुजरते पल के साथ सोहनलाल की बेचैनी बढ़ती जा रही थी और इसके साथ ही बढ़ रही थी मंदार को रास्ते से हटाने की व्यग्रता।

उस दिन सोहनलाल परवीन के साथ गुमसुम से कैण्टीन में बैठे थे कि उनकी नजर पेपर में छपी हेडलाइन पर पड़ी – "क्रिकेटर पृथ्वी शॉ फेल्स डोप टेस्ट, बैन्ड फॉर एट मंथ्स"। खबर पढ़कर सोहनलाल के मस्तिष्क के खुरापाती तंत्र सक्रिय हो गए। अँधेरे में उन्हें आशा की रश्मियाँ दिखाई देने लगी। कैण्टीन में बैठे–बैठे ही उन्होंने कल्पना में नीले ब्लेजर में सजे धजे परवीन को तोक्यो के अंतर्राष्ट्रीय एयरपोर्ट पर इण्डियन कंटिन्जेंट के साथ उतरते हुए देख लिया। यदि परवीन ने उन्हें उस वक्त टोका नहीं होता तो वह विक्टरी–स्टैण्ड पर अपार करतल ध्वनि के बीच खड़े होकर परवीन को हैण्ड वैव करते हुए भी देख लेते। कितनी सुखद होती हैं कल्पनाएँ भी, वास्तविकता की कंटीली राहें भी मखमली एहसास कराने लगती हैं। उस एक पल के काल्पनिक दृश्य ने सोहनलाल के दिल को कितना सुकून दिया था, वह अवर्णीय था। परवीन का उस समय उनको टोकना सोहनलाल को पसंद नहीं आया था क्योंकि यथार्थ की दुनिया में लौटते ही उन्होंने खुद को वापस खुरदरे धरातल पर खड़ा पाया था।

पंद्रह–बीस दिनों के अथक प्रयास के बाद सोहनलाल ने अपने मेडिकल सूत्रों से यह जानकारी जुटा ली कि यदि किसी पहलवान को टेस्टोस्टेरोन का डोज दिया जाए तो वह डोप टेस्ट में फेल हो सकता है। यह काम आसान नहीं था। बिना खिलाड़ी की सहमति से उसे टेस्टोस्टेरोन का इंजेक्शन नहीं दिया जा सकता था। इसे लेने के लिए मंदार को तैयार कर पाना असंभव था। खिलाड़ियों को संघ के

साफ निर्देश थे कि कोई भी दवा अधिकृत डॉक्टर की सलाह के बिना न ली जाए। खाँसी, जुकाम, सिरदर्द जैसी रोजमर्रा की बीमारियों तक के लिए अपनी मर्जी से दवा लेने की मनाही थी।

पर जब कोई किसी काम को करने की ठान ही ले तो रास्ता निकल ही आता है। एक परिचित आयुर्वेदाचार्य ने बताया कि शरीर में टेस्टोस्टेरोन की मात्रा बढ़ाने के लिए अश्वगंधा बहुत उपयोगी है। उनके अनुसार हाल ही में की गई रिसर्च से पता चला है कि अश्वगंधा के सेवन उपरांत शरीर में टेस्टोस्टेरोन की मात्रा अलग–अलग केसेज में 14 से 40 प्रतिशत तक ज्यादा हो गई। सोहनलाल यह सुनकर उछल ही पड़े। उन्होंने मंदार के सहायक को पटाया और मंदार को खाने तथा अधिकृत इनर्जी ड्रिंक के साथ अश्वगंधा चूर्ण की दो पुड़ियाँ खिलानी शुरु कर दी। बीच–बीच में उसने अपने एक परिचित डॉक्टर की सलाह से किसी टेबलेट का चूर्ण खिलाना भी शुरु कर दिया।

तत्पश्चात सोहनलाल ने एक अलग ही खेल खेलना शुरु कर दिया। उन्होंने अपने कुछ परिचित अखबार वालों के साथ मिलकर एक नया विवाद खड़ा करने की कोशिश की। खबरों में परवीन कुमार को उसके वजन समूह में देश का सर्वश्रेष्ठ पहलवान निरूपित किया गया था। अखबारों का हवाला देकर सोहनलाल ने संघ से परवीन कुमार और मंदार के बीच एक फेयर ट्रायल की माँग कर डाली ताकि ओलिम्पिक में सर्वश्रेष्ठ पहलवान ही भेजा जा सके। उनका तर्क था कि मंदार ने भले ही कोटा प्लेस हासिल किया है लेकिन परवीन अपने वजन वर्ग में आज भी देश का सबसे बेहतरीन पहलवान है। अखबारों के इस सुनियोजित हमले में एकनाथ भी कूद पड़े – "मंदार किसी भी पहलवान को धूल चटाने की क्षमता रखता है और वह कभी भी किसी चुनौती को स्वीकार करने से पीछे नहीं हटेगा। पर यह ध्यान देने योग्य है कि मंदार ने विश्व चैम्पियनशिप में पदक जीतकर कोटा हासिल किया है। सोहनलाल उनके विरुद्ध षड़यंत्र रच कर देश को एक निश्चित पदक से वंचित कर देना चाहते हैं।"

विवाद बढ़ने से सोहनलाल को अपनी योजना सफल होती प्रतीत हुई। वह जानते थे कि कोटा प्लेस कोई भी पहलवान हासिल करे लेकिन वह कोटा पहलवान के व्यक्तिगत खाते में न जाकर देश के खाते में जाता है। इसलिए जरूरी नहीं कि कोटा प्लेस जीतने वाले पहलवान को ही मैदान में उतारा जाए, ओलिम्पिक संघ चाहे तो किसी दूसरे पहलवान को भी भाग लेने भेज सकता है। नियमों का यह पेंच ही सोहनलाल की योजना का आधारबिंदु था। यह सोहनलाल की एक अन्य सोची–समझी योजना थी। इस योजना के मुताबिक परवीन यदि ट्रायल मुकाबले

में मंदार को हरा देता है तो फिर वही ओलिम्पिक में जाने का दावेदार बन जाएगा .. और यदि परिणाम मनमाफिक नहीं आया तो उनके पास प्लान बी भी मौजूद था, मंदार पर ड्रग लेने का आरोप लगाकर उसे प्रतिबंधित करवा देने का। सोहनलाल आश्वस्त थे कि उनके दो प्लान में से एक जरूर कारगर सिद्ध होगा।

एकनाथ के विरोध के चलते संघ ट्रायल मुकाबले के लिए तैयार नहीं हुआ। एकनाथ का तर्क था कि अपनी तैयारी में जी जान से जुटे मंदार के रूटीन में किसी तरह का व्यवधान ठीक नहीं है। कुछ ही समय में मिंस्क में मुख्य कोच मिखेल उमाखानोव और कुछ अन्य विशेषज्ञ कोचेज की देखरेख में कोचिंग एवं कंडीशनिंग शिविर लगने वाला है ऐसे में ट्रायल आयोजित करना बेमतलब की कबायद होगा।"

संघ को भी एकनाथ की बात उचित लगी। ट्रायल मुकाबला न करवा पाने के पश्चात सोहनलाल कुछ दिनों तक चुपचाप मंदार की गतिविधियाँ देखते रहे तत्पश्चात उन्होंने अपने दूसरे पत्ते खोलना शुरु कर दिए। कोचिंग कैम्प हेतु मिंस्क जाने की तिथि नजदीक आते ही सोहनलाल ने सभी पहलवानों का डोप टेस्ट किए जाने की माँग देश हित में उछलवा दी। यह माँग गैरवाजिब नहीं थी। कुछ अवसरों पर पदक जीतने वाले पहलवान डोप टेस्ट में फेल होकर देश की किरकिरी करवा चुके थे। सभी का डोप टेस्ट हुआ, फिर वही हुआ जो सोहनलाल चाहता था। उसके बिछाए गए जाल में मंदार को उलझना ही था सो मंदार उलझ गया। उसके सैम्पल में टेस्टोस्टेरोन की मात्रा निर्धारित सीमा से अधिक मिली और उसे एक साल के लिए किसी भी स्पर्द्धा में भाग लेने से प्रतिबंधित कर दिया गया। सब सकते में थे। एक होनहार पहलवान रातोंरात हीरो से जीरो हो गया था। यह सब कैसे हो गया न मंदार को समझ में आ रहा था और न ही एकनाथ को। उन्होंने इसके खिलाफ अपील की तो संघ ने निष्पक्ष जाँच करने का भरोसा दे दिया।

परवीन को मंदार की जगह चुन लिया गया। बाजी को अपने पक्ष में पलट कर सोहनलाल के हौसले बुलंदी पर थे। परवीन भी अप्रत्याशित रूप से मिले इस अवसर को पाकर खुश था। उसे लगने लगा कि ईश्वर ने उसे यह मौका ओलिम्पिक पदक का सपना पूरा करने के लिए दिया है। सपने में भी उसे ओलिम्पिक मेडल गले में पहिनाते हुए अधिकारी गण दिखाई देने लगे। सोहनलाल तो यह सपना बहुत समय से देखते आ रहे थे। सोहनलाल मानने लगे थे कि अब समय भी पूरी तरह से उनके अनुकूल है। इसका एक और प्रमाण सोहनलाल को उस समय मिला जब उनके आवेदन को संघ ने स्वीकार कर लिया और उन्हें परवीन के व्यक्तिगत कोच के रूप में मिंस्क जाने की अनुमति दे दी।

सब कुछ मन के मुताबिक चल रहा था कि महामारी ने सब कुछ मटियामेट कर दिया, सारे मंसूबे ध्वस्त कर दिए, सारी प्लानिंग पर पानी फेर दिया। सोचते ही आँखों के सामने सपनों की बहुमंजिली इमारत भरभरा कर गिरती दिखाई देने लगी, जैसे किसी ने डायनामाइट लगा कर उड़ा दी हो। सोहनलाल चौंक पर सीधे बैठ गए और बहुत देर तक लॉबी की चहलपहल देखते हुए खुद को संयत करने का प्रयास करते रहे। उन्हें पहली बार एहसास हो रहा था कि मंदार के साथ उन्होंने ठीक नहीं किया। अपने स्वार्थ के लिए उन्होंने न केवल एक प्रतिभाशाली पहलवान के साथ अन्याय किया अपितु देश के साथ भी विश्वासघात किया है। आत्मग्लानि से उनका मन क्लांत होने लगा था। चेहरे पर व्याकुल मन के भाव उभर आए थे। उनकी इच्छा हुई कि अपने हाथों के पीछे अपने चेहरे को छुपा लें और पश्चाताप के आँसू बह जाने दें लेकिन तभी नेत्रपाल कंधे पर अपना बैग टाँगे उनके सामने आकर खड़ा हो गया – "सर, अपनी फ्लाइट की बोर्डिंग शुरु हो गई है, जोन ए वाली सवारियाँ अंदर जाने लगी हैं। अपना टिकट जोन बी का है"

"झपकी लग गई थी, समय का पता ही नहीं चला, परवीन कहाँ है" – सोहनलाल ने सीट से उठते हुए पूछा।

"परवीन पाई जी अपना बैग लेकर वाशरूम गए हैं, आते ही होंगे"

जोन बी पैसेंजर्स को लाइन में आने का अनाउंसमेंट होने लगा था। लोग–बाग लाइन में लगने लगे। पाँचों भी लाइन में खड़े हुए ही थे कि बोर्डिंग पास चेक करने वाले अधिकारी ने आवाज दी – "जिन पैसेंजर्स को मिडिल सीट अलॉट हुई है वे कृप्या लाइन से बाहर चले जाएँ। कोविद–19 के सुरक्षा कदमों के तहत प्लेन में केवल विंडो और आइल सीट वाले पैसेंजर्स ही जा सकेंगे"

अनाउंसमेंट सुनने के बाद सोहनलाल और परवीन का सिर घूम गया, यदि पीछे खड़े यात्रियों ने उन्हें संभाला नहीं होता तो दोनों गिर ही जाते। पाँच टिकटों में इत्तफाक से उन दोनों को ही मिडिल सीट अलॉट हुई थी।

दोनों बदहवास से एयरपोर्ट की लॉबी में बैठे अपने दुर्भाग्य पर रो रहे हैं। एयरलाइंस के लिए सैकड़ों गालियाँ उनके अंदर हलचल मचा रहीं हैं। इसमें उन्हें एयरलाइंस के षड़यंत्र की बू आ रही है। उन्हें लग रहा है उनके साथ विश्वासघात हुआ है। तीनों की फ्लाइट उड़े हुए एक घंटे से अधिक का समय हो चुका है। फ्लाइट पकड़ने से चूक गए कुछ और यात्रियों के साथ दोनों भी एयरलाइन के कुछ अधिकारियों से मिल चुके हैं। सबने उन्हें सान्तवना जरूर दी है पर किसी ने आश्वासन नहीं दिया। अब उनका क्या होगा, यही प्रश्न उन्हें साल रहा है। वह जिस ओर भी देखते हैं वहीं उन्हें मंदार दिखाई दे रहा है .. पूर्ववत् शांत और

सहज। दोनों आँखें बंद कर लेते हैं पर कोई कानों में विश्वासघाती कह कर पिघले हुए सीसा जैसा कुछ उड़ेल जाता है। आँख खोलते हैं तो सामने फिर मंदार का चेहरा दिखाई देने लगता है .. शांत और सहज।

पहले पाठक का मत

जिंदगी का एक उसूल है जैसी करनी वैसी भरनी। यह कथन इस कहानी को सौ प्रतिशत चरितार्थ करता है। इंसान अपने फायदे के लिए बेइमानी की किस सीमा तक जा सकता है, वह किस हद तक नैतिकता को तिलांजलि दे सकता है, यह इस कहानी का केंद्रीय भाव है। इसका पछतावा उसे तब होता है, जब बना बनाया सारा खेल बिगड़ जाता है। कहानी में एक कुश्ती गुरु को अपने चेले से गुरु दक्षिणा के रूप में ओलिम्पिक पदक चाहिए ताकि खेल जगत में उसके नाम का डंका बजे। चूँकि उसका चहेता चेला गुरु की अदूरदर्शिता से अर्हता स्पर्द्धा में भाग नहीं लेता और उसका प्रतिद्वंद्वी उसमें भाग लेकर ओलिम्पिक के लिए क्वालिफाई कर जाता है तो गुरु उस प्रतिद्वंदी को हटाने के लिए एक घिनौनी चाल चलता है, जिसमें वह सफल तो हो जाता है। मगर कुछ ऐसी परिस्थिति बनती है कि गुरु अपने किए पर शर्मिंदा महसूस करता है और उसे इसकी ऐसी सजा मिलती है जिसकी उसने कल्पना नहीं की थी। खेलों की दुनिया के स्याह पक्ष को उजागर करती एक सशक्त कहानी है विश्वासघात।

– हरेंद्र नागेश साहू, खेल लेखक एवं समीक्षक, रायपुर (छग)

❍ ❍ ❍

5

यात्रा

हमेशा शोर–शराबे में डूबी रहने वाली आजाद नगर झुग्गी बस्ती में श्मशानी सन्नाटा अपने पैर फैला चुका था। वहाँ रहने वाले अधिकांश लोग अपने घरों पर ताला जड़कर अपने–अपने गाँवों की ओर कूच कर गए थे। जितना जरूरी सामान, साथ में ले जा सकते थे, बाँध कर ले गए थे। जो लोग किसी कारण वश रुके हुए थे उनमें से भी कुछ लोग शनैः–शनैः बस्ती से विदा होते जा रहे थे। अब गिनती के घरों से ही रात में झपझप करती रोशनी दिखाई देती थी जिससे पता चलता था कि उस घर में अभी भी लोग–बाग डेरा जमाए हुए हैं। दहशत इतनी कि दिन में मुश्किल से ही कोई बस्ती में दिखाई देता था, जो थे, वे अपने घरों में दुबके रहते। वातावरण में हरदम एक अजीब सा खौफ, एक विचित्र सी बेचैनी घुली रहती।

उसी बस्ती में एक झोपड़ी, रैपुरा के सुदामा की भी थी। कई दिनों से सुदामा जत्थों में बस्ती छोड़कर जा रहे लोगों को देख रहा था। उसके मन में भी अपने गाँव जाने का विचार अनेक बार आ चुका था पर हजार कि.मी. की दूरी पैदल तय करने के नाम पर दिल काँप जाता था। वह अकेला होता तो किसी तरह हिम्मत करके चल भी देता पर ग्यारह साल की जूही भी उसकी जिम्मेदारी थी। उसकी ओर नजर डालता तो हिम्मत जवाब दे जाती।

सुदामा के आसपास की झुग्गियों में रहने वाले उसके संगी–साथी एक–एक कर जा चुके थे। झुग्गी से बाहर निकल कर बस्ती में सांय–सांय करते सन्नाटे को जब भी वह महसूस करता उसका दिल बैठने लगता। उस दिन वह बस्ती का चक्कर लगाकर लौटा था। घर के भीतर पड़े–पड़े कमर अकड़ गई थी सो सीधी करने का बहाना कर वह पूरी बस्ती का जायजा ले आया था। आकर खाना खाया और हमेशा की तरह खटिया पर धँस गया। जूही बर्तन धोने में व्यस्त थी। कुछ देर तक सुदामा छप्पर को ताकते हुए विचारों में खोया रहा फिर जूही को आवाज दी – "बिट्टो, कछू कहने है तुमसे"

"बोलो बापू" – जूही हाथ पोंछते हुए बोली।

"पूरी बस्ती खाली हो गई है, गिरधारी और रामरतन भी गाँव जाने की कह रहे हैं, अपनो सामान बाँधवे में जुटे हैं दोनों, तुम कहो तो हमऊँ निकल चलत हैं उनके संगे जहाँ से" – सुदामा ने चिंतित स्वर में जूही से कहा।

"इत्ती दूर पैदल कैसे चलहो बापू, तबियत भी तुम्हारी ठीक नहीं है" – जुही ने पास ही पड़ी दूसरी खटिया पर बैठते हुए कहा।

"चल लेंगे बिटवा, जैसे इत्ते सारे लोग जा रहे हैं हम भी साथ में हो लेंगे, हाथ में काम–धाम वैसे भी नहीं है, कछु दिनन में फाँकन की नौबत आ जैहे, फैकटरी खुलबे को भी ठिकानो नहीं है .. गाँव पहुँच कर कम से कम रुखी–सूखी खावे तो मिल जैहे, सुनत है गाँव में मनरेगा को काम भी शुरु होवे बालो है, कछु न कछु काम उते मिलई जैहे, बाई दद्दा की भी चिंता सता रही है, ऐसी बिपदा में अकेले हैं दोनऊ"

"ठीक है बापू, गिरधारी चाचा कबै निकल रहे हैं गाँव को, हम भी अपनो सामान बाँध लेत हैं"

"सूरज निकलबे से पहले बोलो हतो, तुम सामान समेटो, हम पक्को पता करके आवत हैं" – सुदामा खटिया से उठा और खूँटे पर टंगी शर्ट उतार कर अपने कंधे पर डालते हुए झुग्गी से बाहर निकल गया।

गिरधारी से मिलकर सुदामा लौटा तो अपेक्षाकृत खुश था। जूही बस्ते में अपनी कॉपी, किताबें जमा रही थी। ओढ़ने, बिछाने, पहिनने के कुछ कपड़े और बचा हुआ आटा, दाल, चावल, आलू, प्याज आदि दो अलग–अलग थैलों में उसने पहले ही रख लिया था। सामान के थैलों पर नजर डालते हुए सुदामा बोला – "बिट्टो, तुमने तो सारो सामान इतनी जल्दी बाँध लओ। गिरधारी ने कहो है कि पंद्रह–बीस दिन रास्ते में लग जैहें सो खावे–पीवे को सामान के साथ कछू बर्तन–भाँडे भी ले चलबो जरूरी है, पानी की पिकिया भी अबईं से भरके रख लेत हैं सबेरे जल्दी–जल्दी में भूलई न जाएँ"

"कपड़न के थैला में दो ठो गंजी और तस्तरी रख लईं हैं बापू" – जूही ने कहा – "कितने बजे निकलने है घर से"

"गिरधारी ने सबेरे चार बजे कहो है ताकि तेज धूप होवे से पहले पलवल तक पहुँच जाएँ फिर उते से शाम को चलहें" – सुदामा ने कहा।

"दस बज रहे हैं बापू, अब तुम आराम कर लो, हम जल्दी से रस्ते के लाने पूड़ी बना लेत हैं .. फिर स्टोव भी पैक करके रख लेबी" – जूही बोली।

सुदामा चौदह साल पहले अपने गाँव रैपुरा से फरीदाबाद आया था। गाँव में लगातार तीन सालों के सूखे ने खाने–कमाने के सभी स्त्रोत सुखा दिए थे। गाँव

के अधिकांश लोग कमाने खाने का ठिकाना ढूँढ़ने पलायन कर गए थे। सुदामा के सामने भी दो जून की रोटी जुटाने का संकट आ खड़ा हुआ था। अधेड़ हो चले बाई–दद्दा और गर्भवती पत्नी गौरी के भरण–पोषण की जिम्मेदारी उसी के कंधों पर थी। दो बकरियाँ और एक मिट्ठू भी घर पर था। काम की तलाश में सुदामा अनेक बार पास के कस्बे देवेंद्र नगर भी होकर आया था लेकिन नियमित काम का कोई ठिकाना नहीं बन सका था। दो चार दिन दिहाड़ी पर काम मिल जाता पर उतनी मजूरी से चार प्राणियों को भरपेट खाना भी नसीब नहीं हो पाता। बकरियों के खाने की व्यवस्था घर के पीछे लगे इमली, बेर और बबूल के पेड़ों की पत्तियों तथा खेत में उगी घासपूस से हो जाती। गौरी गर्भवती होने के बावजूद ठकुराइन की सेवा टहल कर ज्वार व कुटकी की थोड़ी बहुत व्यवस्था कर लेती। हर बीतते दिन के साथ जिंदगी की जद्दोजहद बढ़ती जा रही थी। पास के गाँव के कुछ लोग सिमरिया में हीरे की खदान में काम करते थे। सूरत के जिस सेठ ने इन खदानों को लीज पर लिया था उसके मुनीम से भी सुदामा दो बार मिन्नतें कर आया था पर उसने भी टका सा जबाव दे दिया था – "खदान घाटे में जा रही है तुम्हें कहाँ से पैसे दूँगा।" अब सुदामा मुनीम को पलट कर जवाब तो दे नहीं सकता था कि "कायखों झूठ बोलत हो .. अबे मुश्किल से दस–बारह दिना भए हैं जब खदान से छः कैरेट को हीरा निकलो हतो।" किस्मत का फेर समझ कर मुँह लटकाए वापस आ जाता था सुदामा।

उस दिन उसकी आँखों में नींद नहीं थी। देवेंद्र नगर के जिन मास्साब के यहाँ वह तीन दिनों से रेजागिरी कर रहा था, उनका अचानक हार्टफेल हो गया था। उनके घर में कोहराम मचा हुआ था सो बाहर से ही सारा दृश्य देखकर चुपचाप लौट आया था। तीन दिनों की मजूरी के पैसे भी डूब गए थे। ऐसे में वह उनके घर में किसी से रोजन्दारी के पैसे कैसे माँग सकता था? पैसे डूबने की उतनी चिंता भी नहीं थी उसे जितनी मास्साब की मौत से अगले बीस–पच्चीस दिनों का काम हाथ से चले जाने की थी।

उस दिन भी सुदामा आज की ही तरह खटिया पर लेटा सोच रहा था, फर्क केवल इतना था कि उस दिन वह लेटे–लेटे खुले आसमान को ताक रहा था और आज अपनी झुग्गी के छप्पर को। उस दिन शाम को उसे गाँव की देवी मंदिर का पुजारी टकरा गया था, जिसे देखते ही उसका पारा चढ़ गया था। दो साल हो गए थे जब वह देवी मंदिर में मत्था टेकने गया था और उसका हाथ देखकर पुजारी ने कहा था – "सुदामा तुम्हारी भागरेखा तो बहुतई जबर्दस्त है, कछु दिनन में बहुतई अच्छे दिन आवे वाले हैं तुम्हारे।" "लबरा (झूठा) कहीं को .. दो साल से ऊपर हो गए ई बात को .. अच्छे दिनन की बाट जोहत–जोहत ऐसे दुर्दिन गले पड़ गए कि

जान हलक में अटकी पड़ी है। इकइस रुपैया हड़पबे के चक्कर में ससुरे ने कैसो चूतिया बनाओ हमें और हम बन भी गए। हमारी मति फिर गई थी जो तुरंत खीसे से निकाल के इकइस रुपैया भी ऊके हाथ पे धर दए हते .. गरीबन के हाथ में भी भागरेखा होवत है कहूँ .. अगर होती तो कायखों गरीबन खो तिल–तिल करके मरने पड़तो। सबई कहत हैं घूरे के दिन भी फिर जात हैं पर ऊके दिन काय नहीं फिर रहे .. का वो घूरे से भी गओ बीतो है।" सोचकर परेशान हो गया था सुदामा।

यदि 'घूरे के भी दिन फिरत हैं' वाली कहावत सही है तो फिर सुदामा के दिन फिरना भी लाजिमी था। सुदामा को जितनी ठोकरें खानी थी, खा चुका था वह, जितने दरवाजों पर माथा घिसना था घिस चुका था वह। उसके भाग्य से गाँव से हो रहे पलायन की खबर सुनके उसके रिश्ते के काका नरहरि यादव गाँव में रह रही अपनी पत्नी को लेने आए हुए थे। उन्होंने सुदामा की परेशानी और विवशता को भाँपते हुए उसे अपने साथ फरीदाबाद चलने को कहा। बाई–दद्दा और गर्भवती गौरी का ध्यान कर वह एकाएक निर्णय नहीं ले सका। यह तो अच्छा हुआ कि उन तीनों ने उसे हौसला दिया और वह नरहरि काका के साथ चलने को तैयार हो गया। नरहरि फरीदाबाद में एक टायर फैक्टरी में चौकीदारी करते थे। इतवार तथा अन्य छुट्टी वाले दिनों में वह रबर ब्लेंडिंग यूनिट के वर्क्स मैनेजर कपूर साहब के यहाँ बागवानी का काम करने जाते रहते थे, जिस कारण मैनेजर की नजर में उनकी छवि एक मेहनती और विश्वसनीय कर्मचारी की बन गई थी। उनसे कह कर ही नरहरि ने सुदामा के लिए नौकरी की व्यवस्था टायर फैक्टरी में करवा दी थी।

नौकरी लगते ही सुदामा की हैसियत में सुधार आने लगा। वह आधी पगार गाँव भेज देता और आधे में अपना गुजारा अच्छे से कर लेता। नरहरि ने अपने पास ही आजाद नगर बस्ती में उसके लिए भी झुग्गी की व्यवस्था करवा दी। तीन सालों के भीतर ही उसने पास की झुग्गी को खरीद लिया था। इसी बीच जूही के पैदा होने की खबर मिली। साक्षात लक्ष्मी आई थी घर में। जिस दिन वह पैदा हुई थी उसी दिन सुदामा ने अपनी झुग्गी में 'गिरह परवेश' किया था।

सुदामा ने करवट बदल कर जूही की ओर देखा। वह गहरी नींद में थी। घर के सारे काम का बोझ उस नन्ही सी जान पर ही था। थक कर निढाल हो जाती है। छः सात महीने पहले तक कितनी छोटी सी लगती थी। स्कूल से लौटकर गली की लड़कियों के साथ लंगड़ी खेलती रहती और जब वह थकाहारा फैक्टरी से लौटता तो उससे कहानी सुने बिना नहीं सोती थी। पर गौरी के जाते ही एकदम से सयानी हो गई। जिम्मेदारी से भर गई। उसने न केवल घर–गृहस्थी की सारी जबाबदारी अच्छे से संभाल ली अपितु उसका भी ध्यान वह गौरी की तरह ही रखती है।

सुबह घर की साँकल चढ़ाकर ताला लगाते हुए सुदामा की आँखे भर आईं। गाँव से आने के बाद उसके हर सुख–दुख का गवाह था यह घर। उसकी तरक्की का साक्षी होने के साथ ही गौरी की आखिरी साँसों का चश्मदीद भी था यह घर। जब दो जून की रोटी जुटाने के लाले थे उसके सामने तब इसी घर से उसकी खुशहाल जिंदगी की राह निकली थी और छः महीने पूर्व इसी घर की देहरी लाँघ कर उसके सुखों की दुनिया उजाड़ने मौत दबे पाँव आकर गौरी को साथ ले गई थी। नियति का खेल भी अजीब है .. चौदह साल पहले जब सुदामा यहाँ आया था तब तीन सालों से गाँव में भयंकर सूखा पड़ रहा था लेकिन गौरी की सूखी कोख हरी हो गई थी। छः साल लगे थे कोख में बीज अंकुरित होने में। सुदामा तब जैसे आया था अब फिर वैसे ही वापस जा रहा है। उस समय भी वह गौरी को मजबूरी में साथ नहीं ला सका था और आज भी वह गौरी को साथ नहीं ले जा सकता। तब भी गौरी को याद करते हुए फरीदाबाद आया था और आज भी गौरी की स्मृतियाँ साथ लेकर जा रहा है। पर तब में और अब में बहुत फर्क आ गया है। पहले वह गौरी की सहमति से सुखी जीवन के सपनों के साथ यहाँ आया था और अब गौरी को सदा के लिए खोकर बिना कोई सपना लिए वापस जा रहा है। तब भी भविष्य की चिंता यहाँ ले आई थी और अब भी भविष्य की चिंता वापस लौटा के ले जा रही है। कुछ भी तो परिवर्तन नहीं आया है इन दो यात्राओं के उद्देश्य में। सोचते हुए सुदामा की आँखों से कुछ आँसू गालों पर ढुलक ही आए। उसने जूही से नजर बचाते हुए कंधे पर टँगे अँगोछे से जल्दी से अपने आँसू पोंछे और हाथ से फिसल कर नीचे गिर गए ताले को उठाने के लिए झुका।

"जल्दी करो सुदामा, क्या सोच रहे हो" – गिरधारी की आवाज सुनकर सुदामा ने जल्दी से दरवाजे पर ताला जड़ा और पलटते हुए कहा – "अरे, हम तो कबसे तैयार खड़े है"

सुदामा ने एक बैग कंधे पर टाँग लिया और हाथ में पानी की जरीकेन ले ली। जूही भी पीठ पर बस्ता टाँगे और सिर पर खाने के सामान का थैला रखकर तैयार थी। उसने भारी मन से चलते हुए पीछे मुड़कर देखा तो उसे लगा जैसे किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा हो, हौसला रखो, सब भला होगा। आसपास देखा कोई नहीं था फिर खुद को संयत रखने के प्रयास में गिरधारी चाचा के छोटे बेटे रज्जन का हाथ पकड़ते हुए बोली – "रज्जू, तेरे लिए बस्ते में कंचे और लूडो रखकर लाई हूँ, रास्ते में जहाँ भी रुकेंगे, खेलेंगे अपन"

"मैं भी चाचा चौधरी और चंदा मामा रखकर लाया हूँ, तुम पढ़कर सुनाना और मैं सुनुँगा"

सूरज की पहली किरण के साथ जूही की नजर पलवल 14 कि.मी. के माइलस्टोन पर पड़ी और उसने सुदामा की ओर देखा। सुदामा के चेहरे पर थकान की परछाइयाँ उतरने लगीं थी। राधा चाची भी लँगड़ा कर चल रही थी। रामरतन चाचा अपनी झल्लाहट उनपर उतारते हुए चल रहे थे। रज्जन बार–बार बीच सड़क पर चलने लगता और गिरधारी चाचा की डाँट खाकर सहम जाता। हजारों लोग सड़क पर थे, सभी बदहवास से, डरे हुए और सहमे–सहमे। सभी के नाम, जाति और धर्म अलग–अलग लेकिन सभी के चेहरों पर एक ही पहिचान लिखी हुई। सिर पर पोटलियाँ, कंधों पर बैग, हाथों में थैले, गोदी में रोते–बिलखते बच्चे, लाठी टेकते–घिसटते बुजुर्ग और बार–बार थककर सुस्ताने बैठ जाते लाचार वृद्ध। चल नहीं पा रहे हैं पर चलते जा रहे हैं। मंजिल पता है पर यात्रा का अंजाम नहीं पता। अनंत यात्रा है यह। कुछ देर पहले ही जूही ने सुनी थी, सडक किनारे सुस्ताने बैठे लोगों की बातचीत। सिहर गई थी वह, मन कसैला हो गया था उसका। पिछली रात किसी अनजान ट्रक ने तीन लोगों को रौंद दिया था। मोपेड पर सवार होकर पूरा परिवार घर जाने को निकला था। कोई नहीं बचा था। कुछ ही कि.मी. की यात्रा के बाद थम गई थी उनकी जीवन–यात्रा।

जूही गुमसुम चल रही थी। सुदामा आगे–आगे और वह पीछे–पीछे। वह सुदामा से आगे निकलना नहीं चाहती थी। सुदामा पर नजर रखते हुए चल रही थी वह। अम्मा के चले जाने के बाद से ही उदासी ने बापू को दबोच लिया था। वह दिखते अच्छे भले थे पर उनकी तबियत अक्सर ही ढीली रहने लगी थी। अंदर ही अंदर घुटते रहते थे। समझती थी सब। भरसक ध्यान भी सुदामा का रखती थी। पर यह सफर तो बापू को खुद ही चलकर पूरा करना होगा। बेजा सफर है ये, सुबह से ही सूरज आग बरसाने लग जाता है, धरती गरम तवे सी तपने लगती है और लू के थपेड़े सारे शरीर में तीर से चुभते हैं। कैसे पूरी होगी इतनी लम्बी और कष्टप्रद यात्रा। अभी तो मुश्किल से पंद्रह–बीस कि.मी. ही आए हैं और बापू निढाल हो रहे हैं। बाकी लोग भी परेशान हैं। रास्ते में कोई बीमार पड़ गया तो नई मुसीबत। परेशानी के इस सफर में भी दोनों चाचा अपना गुस्सा दूसरों पर उतार रहे हैं। घर की चारदीवारी में सिमटी रहने वाली राधा चाची पर दया आ रही है उसे .. रामरतन चाचा उनसे उम्मीद कर रहे हैं कि वह उनके सरीखे तेज–तेज कदम बढ़ाते हुए चलें। चाचा को तो स्टेडियम में बड़े–बड़े रोलर खींचने का अभ्यास है, वह तेज–तेज चल सकते हैं पर चाची कैसे चल सकती हैं इतनी तेजी से, डाँट खाकर सहम जाती हैं बेचारी।"

"चाचा, तीन–साढ़े तीन घंटे से ज्यादा हो गए चलते हुए, कुछ देर के लिए किसी बोरिंग के पास रुक जाते हैं" – जूही राधा चाची की परेशानी भाँपते हुए बोली।

"ई रोड पर अब तक एकऊ बोरिंग न दिखो है, प्रिथला आवेगो तो रुक जावेंगे कछू देर को"

"ठीक है चाचा, प्रिथला तो आने वाला है, पिछले पत्थर पर दो कि.मी. लिखा था"

पाँच दिन हो गए थे चलते हुए। इस बीच कितने ही कारुणिक दृश्य देखे थे जूही ने .. बूढ़ी माँ को पीठ पर लादकर चलता हुआ अधेड़ बेटा, सोते हुए बच्चे को अटैची पर लिटाकर अटैची खींचती माँ, बैलगाड़ी में एक बैल के साथ जुता किशोर, छः–सात लोगों को बिठाकर रिक्शा खींचता युवक, बेरहमी से लोगों को पीटते और मुर्गा बनाकर सजा देते पुलिस वाले, जालीदार टोपीवालों को दूर से ही दुत्कारते लोग और थोड़ी–थोड़ी दूरी के मनमाने पैसे वसूलते ट्रक–टैम्पो वाले। लोग आपस में चर्चा करते कि देश को बहुत बुरी नजर लगी है, आजाद भारत में ऐसा पलायन नहीं देखा .. हर तरफ लाखों लोगों का रेला दिखाई देता है। अभी तक का सफर ठीक–ठाक ही गुजरा था। सुदामा थकान से चूर होकर लेटते ही खर्राटे मारने लगता था। जूही को जल्दी नींद नहीं आती। वह और रज्जन कभी कहानी सुनते–सुनाते तो कभी आसमान में तारों को निहारते हुए नींद की दुनिया में उतरते। नींद की दुनिया की भी अजीब कहानियाँ हैं। क्या–क्या दिखता रहता है नींद में। जूही भी अक्सर एक आकृति को नींद में देखा करती। वह आकृति उसके साथ खेलती, उसे पुचकारती, हिम्मत देती पर उसका चेहरा नहीं पहिचान पाती। कई सालों से वह यही चेहरा देखती आ रही है।

यात्रा में अब पाँच लोग ही बचे थे। रामरतन चाचा और राधा चाची आठ हजार रुपए में एक मिनी ट्रक वाले से सौदा कर झाँसी के लिए निकल चुके थे। राधा चाची दो बार रास्ते में चक्कर खाकर गिर पड़ी थी। कोई अनहोनी न घट जाए इसलिए ट्रक ड्राइवर की मनमानी भी बरदास्त करना जरूरी हो गया था। उस दिन फ़राह गाँव के बाहर डेरा जमाया था पाँचों ने। रात के दस बज रहे थे। रोड पर अभी भी काफी चहल–पहल थी। रह–रह कर "अरे रुको नहीं", "चलते रहो", "आगे किसी दूसरे गाँव में रुकेंगे" "किनारे पर चलो", "गाड़ियों से बचके" जैसे कुछ वाक्य हवा में तैरते हुए उनको सुनाई दे जाते। आस–पास और भी बहुत से लोग सोए हुए थे, कुछ अभी भी आपस में बतिया रहे थे। जूही और रज्जन सो चुके थे। "कौन गाँव से हो भाई" – पास ही बैठे एक बुजुर्ग व्यक्ति ने सुदामा से पूछा।

"रैपुरा, पन्ना जिला"

"साथ में कौन–कौन है"

"दोस्त का परिवार और बिटिया है"

"अपनी बिटिया का ख्याल रखना भाई, बहुत गहरी नींद में मत सो जाना"

उस यात्री की बात सुनकर सुदामा ने पहले जूही की ओर, फिर उस यात्री की ओर आश्चर्य से देखा। सुदामा को एकाएक समझ में नहीं आया कि उसने यह बात क्यों कही? यह बात कहने का क्या आशय है उसका? क्या जूही को कुछ गलत करते हुए देखा है उसने या जूही के मुँह से कोई गलत बात सुनी है? सुदामा को कुछ बोलता न देख, उस यात्री ने अपनी बात आगे बढ़ाई – "जवान लड़की साथ में है इसलिए सावधान किया है भाई .. दो दिन पहले वल्लभगढ़ में एक हादसा हो चुका है, सुना होगा तुमने"

"हमने तो नहीं सुना, आप ही बताओ क्या हुआ था"

"उस रात रोड किनारे इसी तरह भाई–बहिन सोए हुए थे कि मुँह–अँधेरे लड़की फारिग होने के लिए उठी तो फिर वापस ही नहीं आई। जागने पर जब भाई ने खोज खबर ली तो एक कि.मी. दूर वह अधमरी हालत में मिली। कुछ दरिंदों ने उसकी इज्जत लूटकर यह हालत बना दी थी .. पता चला कि तीन लड़के उसके पास ही लेटे थे जो सुबह गायब थे"

अंदर तक दहल गया सुदामा। वह बिना कुछ बोले उठा और अपने मुँह पर पानी के छींटे मार कर जूही के सिरहाने जाकर बैठ गया। एक भरपूर नजर आसपास लेटे, अधलेटे, ऊँघते, जागते और बातचीत में मशगूल लोगों पर डाली फिर मन ही मन एक संकल्प ले लिया – "कुछ भी हो जाए वह सोएगा नहीं, जूही को पल भर के लिए भी अकेला नहीं छोड़ेगा, दिशा–मैदान के लिए भी वह साथ में लेकर जाएगा, वह रोकेगी तो भी नहीं सुनुँगा उसकी, मुँह फेर कर खड़ा रहूँगा, भले ही जूही बेशरम समझे पर बीच–बीच में पूछता भी रहूँगा "हो गई"। जूही के लिए ही तो उसने इस अनंत यात्रा को चुना है .. जूही को अपने लोगों के बीच सुरक्षित ले जाना उसकी पहली प्राथमिकता है। अकेला होता तो कभी इस यात्रा के बारे में नहीं सोचता, रहा आता अपनी झोपड़ी में अकेला, कर लेता हर कठिनाई का सामना, मौत का डर भी उतना नहीं सताता जितना अभी सता रहा है। डरे भी क्यों नहीं .. जूही को असहाय और अकेला छोड़कर वह किसी अनजान शहर में मर भी तो नहीं सकता था। अकेली स्त्री का रहना कितना कठिन होता है, देखा है उसने .. लीलाधर के मरने पर मीरा भौजी का जीना कितना दूभर बना दिया था उसी के आस–पास रहने वाले लोगों ने, दिन–रात कुत्तों की तरह नोचने के लिए लालायित घूमते रहते थे लीलाधर के ही यार–दोस्त। इस यातना से मुक्ति का मार्ग मीरा भौजी ने फिनाइल की बोतल में खोज लिया और अपनी जान दे दी थी। उफ्फ, कितनी घिनौनी हो गई है ये दुनिया, सोच कर दिल दहल जाता है। लोगों

का हुजूम सड़क पर है लेकिन हैरान–परेशान लोगों की इस भीड़ में भी दरिंदे साथ चल रहे हैं। भगवान कभी माफ नहीं करेगा ऐसे लोगों को"

नींद का तेज झोंका आया और सुदामा एक ओर को लुढ़कने ही वाला था कि हड़बड़ाकर उठ बैठा। चारों ओर नजर डाली। सड़क पर अभी भी लोग–बाग आ जा रहे थे। आस–पास सैकड़ों लोग बेतरतीब बेसुध लेटे हुए थे। खर्राटों और कुत्तों के रोने की आवाजें माहौल में अजीब सी अकुलाहट पैदा कर रही थी। सुदामा उठकर खड़ा हो गया और आगे तथा दाएँ–बाएँ झुककर कमर सीधी करने की कोशिश करने लगा। दो–तीन मिनट बाद ही वापस उसी स्थान पर बैठ गया। आँखों से नींद गायब हो गई। जूही ने करवट बदल ली थी। रज्जन का एक हाथ उसकी कमर पर था। जूही जब छोटी थी तब वह भी इसी तरह गौरी की कमर पर हाथ रखकर सोती थी। आज गौरी होती तो उसे जूही की इतनी चिंता नहीं करनी पड़ती। जूही भी गौरी से हर वह बात कर लेती जो उससे नहीं कह सकती। जूही को जब गौरी की सबसे ज्यादा जरूरत है तभी वह छोड़ कर चली गई। गौरी को बहुत दिनों से तकलीफ थी पर उसने कभी अपनी तकलीफ का जिक्र नहीं किया। जब तक जिंदा रही उसे सुख नहीं दे सका। सोचते ही सुदामा के भीतर एक गुबार सा उठा और गले में आकर फँस गया। घुटन सी महसूस हुई और जोर से खाँसी आ गई। उसके पीछे की ओर लेटा व्यक्ति चौंककर उठा और भाग खड़ा हुआ। दो और व्यक्ति भी उठकर बैठ गए और आँखे मलते हुए स्थिति का आकलन करने लगे। सुदामा कुछ देर तक उसके द्वारा उत्पन्न किए गए भय की भयावहता को चुपचाप महसूस करता रहा। फिर सोचने लगा कि लोग अंदर से कितना डरे हुए हैं। लोग क्या, वह स्वयं भी तो डरा हुआ है। जहाँ देखो वहीं डर पसरा दिखाई दे रहा है।

याद हो आया वह दिन, जिस दिन उसे फरीदाबाद के लिए निकलना था। 'बाई–दद्दा ने "अपनो ख्याल रखियो" कहते हुए उसके सिर पर हाथ फेरा था। गौरी किवाड़ की ओट से आँचल से आँसू पौंछते हुए उसे देख रही थी। वह गौरी का हाथ पकड़ कर "थकवे वालो ज्यादा काम न करियो और अपनो तथा आवे वाले बच्चे को ध्यान रखियो" कहना चाहता था लेकिन नरहरि काका और काकी के आ जाने के कारण वह गौरी से बिना मिले ही उनके साथ चल दिया था। सुख के दिन तो आए लेकिन किस्मत का छलावा जारी रहा, एक दरवाजा खुला तो किस्मत ने दूसरे पर ताला जड़ दिया। जिस किस्मत ने नौकरी देकर उपकार किया था, दो महीने बाद उसी किस्मत ने इसी जून के महीने में उससे बाप बनने का मौका छीन लिया था। "गौरी का गर्भ गिर गया है", सुनकर कितना रोया था वह उस दिन। रात में खाना भी नहीं खा सका था। शादी के छः साल बाद ऊपर वाले ने गौरी की कोख भरी थी और उसी ने आशा के इस दीप को एक झटके में बुझा भी

दिया। उसने और गौरी ने आने वाले बच्चे का नाम छः साल पहले ही सोच लिया था। उस साल फसल बेचना से अच्छी आमदनी हुई थी। इसी खुशी में वह गौरी को माँ दुर्गा की झाँकियाँ और 'सनीमा' दिखाने सतना लाया था। दोनों ने "फिर भी दिल है हिंदुस्तानी" फिल्म देखी और तय कर लिया कि लड़की होने पर उसका नाम 'फिलम' की हीरोइन के नाम पर जूही रखेंगे और लड़का होने पर अजय। दाई काकी ने बताया था कि गौरी के पेट में लड़का था यानि अजय, दुनिया में आने से पहले ही दूसरी दुनिया की सैर करने चला गया। आज होता तो तेरह–साढ़े तेरह साल का होता। उसने बेटा खोया और चाहकर भी गौरी का दुख बँटाने उसके पास नहीं जा सका। नई–नई नौकरी थी, छुट्टी नहीं मिली। झुग्गी में अकेले पड़े–पड़े कई दिनों तक कलपता रहा था।'

'आठ महीने बाद जब वह होली के अवसर पर रैपुरा आया था तो दिन में गौरी के सामने आने की हिम्मत ही नहीं जुटा पाया था। रात के एकांत में दोनों एक दूसरे से लिपट कर बहुत देर तक सुबकते रहे थे। कितनी कमजोर हो गई थी गौरी। कजरी गाय सरीखी आँखें अंदर की ओर धँसी–धँसी लगने लगी थी और सुंदर मांसल देह ज्वार की आधी खाली बोरी सरीखी हो गई थी। एक सप्ताह कैसे गुजर गया पता ही नहीं लगा। वापस लौटने लगा तो गौरी से कहके आया था कि अगली बार कुछ दिनों के लिए उसे भी अपने साथ ले के चलेगा और मोहना गाँव की कालका माता के मंदिर में मन्नत माँगने चलेगा। माता सबकी मुराद पूरी करती हैं।'

'शायद माता को तरस आ गया गौरी की उदासी देखकर। एक माह फरीदाबाद में बिताकर जब वह गाँव लौटी तो दस–बारह दिनों बाद ही उसका पत्र मिला था। वह पेट से थी। अब सुदामा अच्छा खासा कमाने लगा था इसलिए गौरी को ठकुराइन के यहाँ जाकर काम करने की जरूरत नहीं थी। यह सुखद संयोग ही था कि जिस दिन जूही पैदा हुई थी उसी दिन उसने आदर्श नगर की अपनी खोली में गृह प्रवेश की पूजा रखी थी।'

जूही पढ़ने में होशियार थी। गाँव के स्कूल से उसने पाँचवी क्लास नब्बे प्रतिशत अंको से पास की। वह आगे पढ़ना चाहती थी सो सुदामा उसे और गौरी को फरीदाबाद ले आया। बाई–दद्दा गाँव में अकेले रह गए। खेती के काम में हाथ बँटाने के लिए मामा का बेटा गाँव में आकर रहने लगा था। फरीदाबाद आकर पता नहीं क्या हुआ कि गौरी बीमार रहने लगी। उसकी सेहत दिन प्रतिदिन गिरने लगी। वह अक्सर पेट दर्द की शिकायत करती थी। यदा–कदा उसे उल्टियाँ भी हो जाती। हमेशा थकी–थकी रहती। डॉक्टर ऊपरी इलाज करते रहे असल मर्ज उनको समझ में ही नहीं आया। कपूर साब की सलाह पर सुदामा गौरी को गुड़गाँव के बड़े अस्पताल में दिखाने ले गया। दो दिन तक बहुत सी जाँच होती रही फिर

जो परिणाम आया उसने सबकी नींद उड़ा दी। गौरी को आँतों का कैंसर था। महीनों इलाज चलता रहा। सारी जमापूँजी स्वाहा हो गई। घर गृहस्थी का सामान तक बिक गया। फिर एक दिन गौरी "जूही को ख्याल रखियो" कह कर दुनिया से विदा हो गई। ग्यारह साल की मासूम जूही यकायक बहुत बड़ी गई, जैसे गौरी की आत्मा उसमें प्रवेश कर गई हो। उसने सुदामा को संभाल लिया। स्कूल भी जाती और घर की देखभाल भी करती।

सफर का छठवाँ दिन था। मुँह अँधेरे चार बजे से ही उठकर लोगबाग चलने की तैयारी शुरु कर देते थे। पिछले पाँच दिनों से उन लोगों का भी यही कार्यक्रम चल रहा था। चैत का सूरज आठ बजे से ही आग के गोले दागने लगता था अतएव आठ बजते ही रुकने के लिए ठिकाना खोजना जरूरी हो जाता था। शाम पाँच बजे फिर यात्रा शुरु होती और रात्रि नौ बजे तक कहीं न कहीं रुकने का सुरक्षित ठौर ढूढ़ना पड़ता। जूही की आँख खुली तो सुदामा को उसने सिरहाने बैठा पाया – "बापू इत्ती जल्दी जग गए, रात में नींद नईं आई का"

"जल्दी नींद खुल गई तो फिर सोवे की इच्छा नईं भई, उठई के बैठ गए .. तुम जल्दी से फारिग हो जाओ, हम तुमारे साथ खेत में चलत हैं" – सुदामा बड़ी मुश्किल से कह पाया।

"अरे हम चाची के साथ चले जैबी जैसे रोज जात हैं, तुम मंजन बगैरा कर लो तब तक" – जूही दरी और चादर उठाकर तह करते हुए बोली।

आधे घंटे के अंदर सभी चलने को तैयार थे। पाँच किमी का रास्ता तय करने में ही दो घंटे लग गए। सुदामा बड़ी मुश्किल से चल पा रहा था। एक तो थकान, ऊपर से पूरी रात का जागरण। सारा बदन टूट रहा था। कुछ दूर चलते ही वह सुस्ताने बैठ जाता। गिरधारी और उसका परिवार आगे निकल जाता और फिर उनको सुदामा के आने का इंतजार करना पड़ता। तीन–चार बार ऐसा हुआ तो गिरधारी का धैर्य जबाब दे गया। वह झल्लाते हुए बोला – "सुदामा, तुमसे नहीं चलो जा रहो तो तुम रुको यहीं, एक दो दिन आराम करबे के बाद आ जाना, हम लोग चलत हैं"

"बापू तुम भी रुक जाओ न, जूही दीदी के साथ ही चलेंगे" कहते हुए रज्जन बिफरा तो गिरधारी ने दो तमाचे उसके गाल पर रसीद कर दिए। वह रोते हुए चुपचाप उनके साथ चलने लगा।

जूही और सुदामा ने पूरा दिन रास्ते में किनारे पर एक टूटे पड़े सीवेज पाइप के अंदर बैठकर गुजारा। पिछली रात का बचा हुआ दलिया दोनों ने मिलकर

खाया। पेट की ज्वाला ठंडी पड़ते और सिर पर छाँव मिलते ही सुदामा की आँख लग गई। जब नींद खुली तो उसे अपेक्षाकृत अच्छा लग रहा था। सूरज के कदम भी तब तक पश्चिम की ओर चल पड़े थे अतः दोनों भी आगे के सफर पर चलने के लिए तैयार हो गए।

अरसेना के निकट पहुँचते ही एक नई समस्या खड़ी हो गई। अँधेरे में सुदामा को सड़क किनारे पड़े पत्थर दिखाई नहीं दिए और ठोकर खाकर औंधे मुँह गिर गया। उसके दाएँ घुटने, कुहनी और माथे पर काफी चोट आई। घुटने और कुहनी पर सूजन आ गई। उठने की कोशिश की तो खड़े होते नहीं बना, वहीं पसर कर बैठ गया। कुछ दयालु यात्रियों ने उसे कुछ दूर बने एक शेड तक पहुँचाया। किसी ने सलाह दी हल्दी–चूना लगाने से आराम मिलेगा। हल्दी तो जूही साथ लेकर आई थी लेकिन चूना, उसने कुछ लोगों से पूछा भी किंतु किसी के पास चूना नहीं मिल सका। हार कर उसने केवल हल्दी का लेप बनाकर यह सोचकर सुदामा के जख्मों पर लगा दिया कि कुछ राहत तो मिलेगी ही। सुबह वह गाँव में चूना तलाशने जाएगी, वहाँ कोई डॉक्टर या वैद्य मिल गया तो दवा भी ले आएगी।

रात भर दर्द के कारण सुदामा को नींद नहीं आई। जूही भी नहीं सो सकी। रात में दोनों ने खाना भी नहीं खाया था। सुबह जूही ने चावल पकाए। दोनों के खा चुकने के बाद जूही बर्तन धोकर थैले में जमाते हुए बोली – "बापू मैं गाँव से चूना लेके आत हूँ, तब तक तुम आराम से लेटे रहियो"

अरसेना वहाँ से ज्यादा दूर नहीं था लेकिन सुदामा जूही को अकेले जाने देना नहीं चाहता था, बोला – "हमऊँ चलत हैं संगे, इते पड़े रहबे से अच्छो है कि गाँव में ही चलकर ठौर ढूँढे।"

"तुम कैसे चलहो बापू, पाँव तो मुड़ नहीं रहो तुमाओ"

"घिसट के चलबी, कछु टैम जादा लग जैहे और तुमाई चिंता भी न रैहे"

मुश्किल से जूही और सुदामा ने एक फर्लांग की दूरी तय की होगी कि साइकिल चलाता हुआ तेरह–चौदह साल का एक बच्चा उनके पास आकर रुका – "क्या हो गया इनको, किसी ने टक्कर मार दी क्या"

"रात में गिर पड़े थे .. तुम क्या इसी गाँव में रहते हो" – जूही ने पूछा।

"हाँ, कहाँ जाना है तुमको, मैं काका को छोड़ दूँगा" – साइकिल वाले बच्चे ने कहा।

"हमें तो बहुत दूर जाना है, गाँव में कोई डॉक्टर हो तो तुम बापू को उनके पास तक ले चलो"

"डॉक्टर है तो लेकिन कई दिनों से उनका दवाखाना बंद है .. हमारे अब्बू कम्पाउंडर हैं, वे काका की पट्टी कर देंगे, लेकिन तुम चलोगी उनके पास"

"तुम ये क्यों पूछ रहे हो"

"बस यूँ ही, लोग कहते हैं कि ये बीमारी हमने फैलाई है"

"अरे ये बीमारी तो चीन से आई है किसी ने नहीं फैलाया है इसे, तुम हमें उनके पास ले चलो। क्या नाम है तुम्हारा?"

"हनीफ" बच्चे ने कहा।

कम्पाउंडर लतीफ कुरैशी से मल्हम पट्टी और टिटनेस का टीका लगवा कर जूही और सुदामा ने एक जर्जर इमारत के अहाते में अपना नया ठिकाना बना लिया। सुदामा को चलने लायक स्थिति में आने के लिए तीन–चार दिन के सख्त आराम की जरूरत थी।

शाम को हनीफ फिर आ गया – "तुम्हें कुछ चाहिए तो बोलो मैं ला दूँगा"

"नहीं सब कुछ है हमारे पास, तुम यहाँ बैठो, देखो मैंने क्या बनाया है, खाओगे तुम"

"तुम खाना बनाना जानती हो, तुम्हारी अम्मी क्या गाँव में रहती हैं"

"अम्मा नहीं हैं, हम और बापू हैं बस"

"कहाँ तक जाना है तुमको"

"बहुत दूर, छः–सात सौ किमी और चलना है अभी"

"इतनी दूर, काका कैसे चल पाएँगे"

"जैसे फरीदाबाद से चलकर आए हैं वैसे ही"

सत्तू का आधा पराठा खाकर हनीफ चला गया। आसपास कुछ और लोगों ने भी अपना डेरा डाल लिया था। रात अपेक्षाकृत आराम से कटी। सुबह कुछ लोग आकर ब्रेड, बिस्किट और नमकीन के पैकेट दे गए। शाम को हनीफ पुलाव लेकर आया – "अम्मी ने बनाया है, कहा है खाने के लिए फोर्स मत करना"

"हम तो जरूर खाएँगे, पर तुम हमारे लिए सबको इतना परेशान क्यों कर रहे हो"

"बहुत दिनों बाद किसी ने हमसे इतने प्यार से बात जो की, तुम बहुत अच्छी हो"

"अच्छा अब तुम जाओ, रात हो रही है"

"ठीक है, कल आऊँगा अब" – कहते हुए हनीफ साइकिल में पैडल मारते हुए चल दिया। जूही उसको जाते हुए देखती रही, पर ये उस ओर क्यों जा रहा है, उसका घर तो दूसरी दिशा में है – सोचा जूही ने – "होगा कोई और काम उसे, करके चला जाएगा घर।"

"तुम भी लेट जाओ, दो दिनन से ठीक से आराम भी न करो तुमने" सुदामा ने जूही से कहा।

"लेटत हैं बापू, सामान समेट के बैग में रख दइये"

लेटते ही जूही के मन में पिछले दो दिनों की घटनाएँ चलचित्र के समान घूमने लगीं। गिरधारी चाचा का नाराज होके जाना और फिर बापू का गिर जाना, कितना डर गई थी वह, लगा था मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा है उस पर। वह रोना चाहती थी पर बापू की हालत देखकर आँसुओं ने बाहर आने से मना कर दिया था। जब जरूरत थी तभी अपने भी साथ छोड़ कर आगे बढ़ गए। अनजान लोगों ने बापू को हाथों पर उठाकर शेड तक पहुँचाया था। अम्मा सही कहती थी कि "एक रास्ता जब बंद होत है तो दूसरो खुल जात है।" हनीफ ने पहाड़ सी मुश्किल को कितना आसान कर दिया। वह नहीं मिला होता तो बाहर गाँव ही पड़े रहते, बापू उसे अकेले जाने नहीं देते और वह साथ चल नहीं सकते थे।

तीन दिन बीत गए। हनीफ रोज मिलने आता और जूही से बतियाता रहता। सुदामा भी अब थोड़ा–थोड़ा चलने लगा था।

"बापू कह रहे हैं कल सुबह निकल चलेंगे यहाँ से" – हनीफ जब शाम को मिलने आया तो जूही ने उससे कहा। सुनकर हनीफ को निराशा हुई, बोला – "एक दिन और रुक जाओ, फिर चली जाना, कल हमारा जन्मदिन है"

जूही ने सुदामा की ओर देखा, फिर बोली – "बापू हाँ कह रहे हैं, हम लोग परसों चले जाएँगे"

अगले दिन हनीफ पूड़ी, सब्जी और शीर कुर्मा लेकर आया। जाने लगा तो रुआँसा होकर बोला – "तुम सुबह चली जाओगी"

"पर तुमको कभी नहीं भूलूँगी, बहुत याद आओगे तुम, तुमसे दोबारा मिलने भी आऊँगी"

"हमारी साइकिल ले जाओ, काका नहीं चल पाएँगे इतनी दूर .. हमें जरूरत नहीं है इसकी, स्कूल भी नहीं खुलेंगे इस बार"

जूही ने आश्चर्य से हनीफ की ओर देखा। वह डरते हुए बोला – "मना मत

करना, मैंने दिन में इसके सारे कलपुर्जे टाइट किए हैं, चेन में आइल डाला है, साथ में पम्प भी लाया हूँ"

"मैं तुम्हारी साइकिल ले गई तो तुम अब्बू से क्या कहोगे"

"मैं उन्हें सच–सच बता दूँगा"

"वह पीटेंगे तुम्हें"

"अम्मी बचा लेंगी"

"मैं नहीं ले जा सकती"

"तुम जब मिलने आओगी तो वापस कर देना, तुम्हें हमारी कसम" – कहते हुए हनीफ साइकिल वहीं छोड़कर अँधेरे में ओझल हो गया। जूही बहुत देर तक एकटक उस दिशा में देखती और सोचती रही – "कौन है हनीफ, क्या पिछले जनम का कोई रिश्ता है उससे, क्यों इतनी चिंता है उसे हमारी, वह अपरिचित होकर भी कितना परिचित सा लगता है, कितने अपनत्व से बातें करता है, कैसे अनूठे बंधन में बांध लिया है उसने हमको, जिंदगी भर के लिए अपना ऋणी बना लिया .."

ऐसे कितने ही विचार जूही के मन में आते रहे। नींद में भी हनीफ ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। उसकी छवि अवचेतन मन में उभरती और एक अस्पष्ट आकृति में विलीन हो जाती, वही अस्पष्ट आकृति, जिसे जूही वर्षों से सपने में देखते आ रही थी, किसकी आकृति है वह, कभी समझ नहीं पाई थी। उसका स्पर्श उसे बहुत आह्लादित करता था। वह जब भी सिर पर हाथ फेरता तो बहुत ही सुरक्षित महसूस करती थी, सोचती काश उसका भाई जीवित होता तो उसके साथ भी वह इसी तरह सुकून और सुरक्षित महसूस करती। वह वर्षों से उस आकृति को सपनों में देखती आ रही थी लेकिन अम्मा के गुजर जाने के बाद से वह कुछ ज्यादा ही सपनों में आने लगा था। वह हमेशा कुछ कहता पर आवाज बहुत स्पष्ट सुनाई नहीं देती थी। एक आभास सा होता था जैसे वह कह रहा हो कि तुम अकेली नहीं हो, मैं हूँ तुम्हारे साथ। इस सफर में भी वह साथ–साथ ही चल रहा था। जब पहले दिन पलवल तक पहुँचते–पहुँचते बापू थकान से निढाल हो गए थे और मैं आशंका से भर गई थी तब उसने ही रात में आकर हिम्मत बँधायी थी। इसके बाद तो वह रोज रात में उसकी पीठ थपथपाने आता रहा, उसके छूते ही सारी थकान छूमंतर हो जाती थी, एक नवीन ऊर्जा का संचरण पूरे शरीर में हो जाता था, पर ये हनीफ क्यों उस आकृति के पीछे जाकर विलीन हो रहा है, क्या वह वर्षों से हनीफ की आकृति को देख रही थी .." विचार कौंधते ही चौंक कर उठ बैठी जूही। उसकी साँसे धौंकनी की तरह चल रही थी, सारा शरीर पसीने से भीग चुका था।

आसपास शोरगुल बढ़ने लगा था, लोग बाग जाग गए थे और चलने की तैयारी में व्यस्त थे। जूही ने सुदामा को जोर से हिला कर जगाया और बड़ी मुश्किल से – "बापू .. हनीफ" बोल पाई।

"कोनऊ बुरो सपनो देखो है तुमने, का भव हनीफ को" – सुदामा ने जूही के माथे से चूँ रहे पसीने को अँगोछे से पौंछते हुए पूछा।

"वो हनीफई है बापू जो हमाए सपने में आत हतो, आज ऊकी साफ–साफ शकल दिखी हमें" – जूही की आवाज अब भी भर्राई हुई थी। सुदामा ने हैरत से उसकी ओर देखा।

"हम सच्ची कहत हैं बापू, चलबे से पहले एक बार हनीफ से मिलने है हमें"

"ठीक है बिट्टू, हम ऊके घर होत चलहें, अबै सुबह होवे में देर है, तनिक और लेट जाओ तुम"

साइकिल पर अपना सामान बाँधकर जूही और सुदामा उस घर के सामने रुके जहाँ हनीफ उनकी मल्हम पट्टी के लिए लेकर आया था। कुछ देर में लतीफ कुरैशी ने दरवाजा खोला और सामने सुदामा को देखकर पूछा – "कैसे हो अब तुम"

"ठीक हैं हम, आज यहाँ से निकल रहे हैं तो सोचा आपसे और आपके बेटे से मिलते चलें"

"मेरा बेटा, मेरे तो कोई बेटा नहीं है, मैं तो यहाँ अकेला रहता हूँ"

"क्या कहा, हनीफ आपका बेटा नहीं है, उसने तो हमें यही बताया था"

"कहा न मेरे कोई बेटा नहीं है, उस लड़के को तो मैंने पहली बार देखा था .. कोई बदमाश होगा जो तुम लोगों को लूटने की फिराक में होगा, लूटपाट की बहुत खबरें आ रही हैं, क्या–क्या लूटकर ले गया है, यदि ज्यादा कुछ नहीं गया है तो मेरी सलाह है, पुलिस के चक्कर में पड़े बिना चले जाओ पर आगे आप लोग संभल कर जाना"

"13–14 साल का बच्चा और लुटेरा, नहीं .. नहीं .. वह लुटेरा नहीं है .. वह किसी को नहीं लूट सकता" – सुदामा मन ही मन बुदबुदाया।

"बापू बैठो, हम चलत हैं यहाँ से" – जूही के स्वर में दृढ़ता के साथ ही आत्मविश्वास की प्रबलता भी थी। सुदामा साइकिल के कैरियर पर जैसे ही दोनों ओर पैर डालकर बैठने को हुआ तो उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने सहारा देकर बैठने में मदद की है।

अगले छः दिनों में जूही ने बिना थके साढ़े छः सौ किमी की यात्रा तय की। वह और सुदामा सकुशल रैपुरा पहुँच चुके हैं। हनीफ कौन था, यह प्रश्न अभी भी अनुत्तरित है .. शायद ऐसे प्रश्नों के उत्तर भी नहीं होते।

पहले पाठक का मत

कोरोना काल में घर से दूर काम की तलाश में गए मजदूरों की मार्मिक कथा है यात्रा। अपने–अपने घरों की और पैदल लौटते मजदूरों की कठिनाइयों, पीड़ा, भय, संवेदनहीनता और दुरूह परिस्थितियों का जीवंत एवं मर्मांतक चित्रण लेखक ने कहानी में किया है। कहानी की मुख्य पात्र जूही और उसके पिता ऐसे ही एक दल के साथ घर जाने के लिए निकल पड़ते हैं। रास्ते में जूही के पिता जी घायल होते हैं और उनके साथ आए लोग उनका साथ छोड़ कर चले जाते हैं तब अनजान हनीफ जो रास्ते में पड़ने वाले गाँव में रहता है, उसकी हर तरह से मदद करता है। पिता के स्वस्थ होते ही वह गायब हो जाता है। जूही के मन में भय मिश्रित कौतूहल जागता है। फिर हनीफ के बारे में जो जानकारी मिलती है वह उसे हत्प्रभ कर जाती है। अंत कुछ ऐसे प्रश्न छोड़ जाता है जिनके उत्तर नहीं होते। कहानी शुरु से अंत तक बांध कर रखती है।

– स्नेहलता पाठक, वरिष्ठ साहित्यकार, रायपुर

❍ ❍ ❍

6

साझा संस्कार

पंच परमेश्वर के अलगू चौधरी और जुम्मन शेख की ही तरह थी मुकुटधर और फतह मोहम्मद की दोस्ती। कुछ मायनों में तो उनसे भी बढ़कर और गहरी। मुकुटधर और फतह मोहम्मद के पिताओं के बीच भी दाँत काटी दोस्ती थी। फतह मोहम्मद के वालिद ताज मोहम्मद के नाम पर ही जीत सिंह ने अपने बेटे का नाम मुकुटधर रखा था। जब ताज मोहम्मद के यहाँ भी बेटे का जन्म हुआ तो उसने भी अपने मित्र जीतू के नाम पर उसका नाम फतह मोहम्मद रख दिया। उन दोनों से चार साल बड़ी थी कुलसुम आपा, ताज मोहम्मद की बेटी। मुकुटधर और फतह को समान प्यार करने वाली और उन दोनों को भी उतनी ही प्रिय। कुलसुम का विवाह फलों के व्यवसायी नियाज मोहम्मद से हुआ था जिसकी पास के ही शहर में ग्यारह नम्बर बस स्टॉप के पास फलों की दुकान थी।

मुकुटधर और फतह मोहम्मद के खेत आपस में जुड़े हुए थे। दोनों के पास दो–दो बीघा जमीन थी, न कोई सीमांकन और न ही कोई बागड़। फतह मोहम्मद ने अपने खेत में दो छोटे–छोटे तालाब खुदवा लिए थे जिनमें वह मछली पालन का काम करता। बाकी बची जगह में सब्जी उगाता। मुकुटधर अपने खेतों में मौसम के अनुसार फसलें बोता। दोनों को अपने खेतों से इतनी आमदनी हो जाती कि जीवनयापन अच्छे से हो जाता, किसी के आगे हाथ फैलाने की जरूरत नहीं पड़ती। जिस साल बारिश अच्छी हो जाती तो थोड़ा बहुत बचत भी हो जाती। शादी के बाद भी दोनों के रिश्ते न केवल आत्मीय बने रहे, बल्कि और घनिष्ठ हो गए। दोनों की पत्नियों, कुसुमलता और नसीमा के बीच भी बहिनों सरीखा स्नेह था। दोनों परिवार साथ मिलकर सभी त्योहार मनाते। कुलसुम आपा भी हर साल रक्षाबंधन पर गाँव जरूर आती। मुकुटधर के पैदा होने के ढाई महीने बाद ही रक्षाबंधन पड़ा था। तब कुलसुम ने उसकी छोटी–छोटी नाजुक कलाइयों पर राखी बाँधने की जो शुरुआत की थी वह तीस सालों बाद भी बदस्तूर जारी थी।

फतह मोहम्मद ने जबसे मछली पालन का काम शुरु किया था, चुन्नी लाल उसका एकमात्र खरीददार था। वह शहर से आता और मछलियाँ लेकर चला जाता। हर हफ्ते इमानदारी से हिसाब–किताब कर देता। फतह मोहम्मद को कभी उससे शिकायत नहीं हुई। वह इसलिए भी चुन्नी लाल से खुश रहता कि बिना भागदौड़ किए उसे नियमित आमदनी होती रहती। सीजन के समय पर वह फिशरीज कार्पोरेशन से मछली के बीज की व्यवस्था भी करवा देता। सुना था चुन्नी लाल मछलियाँ किसी बड़े सेठ को बेंच देता था जो उन्हें आइस–पैक करके कलकत्ता भेजता था। चुन्नी लाल मुकुटधर की भी फसल बेंचने में सहायता करता था। मंडी में उसकी अच्छी पकड़ थी इसलिए मुकुटधर को कभी भी दलालों के चक्कर नहीं काटना पड़े थे। चुन्नी लाल ही ट्राली की व्यवस्था करके ले आता और मुकुटधर का सौदा पक्का करवा देता। कुल मिलाकर चुन्नी लाल उन दोनों के लिए काफी अहमियत रखता था।

मुकुटधर और फतह मोहम्मद के एक–एक बेटा था, नाम शंभू दयाल और जहीर मोहम्मद। शंभू और जहीर बड़े हुए। गाँव के सरकारी स्कूल से दोनों ने आठवीं पास की। इससे ज्यादा पढ़ने की व्यवस्था वहाँ नहीं थी सो आगे की पढ़ाई छोड़ दी और अपने पिताओं के कामों में हाथ बँटाने लगे। पिताओं का काम व्यवस्थित था सो उनके लिए करने के लिए कुछ अधिक था नहीं। कुछ समय में ही उनका इस काम से मोह भंग होने लगा। उनकी इच्छा होती कि वे भी अपने फूफा की तरह शहर में रहें और वहाँ कोई काम धंधा करें। उनकी इस इच्छा को पटवारी का लड़का हवा देता रहता जो शहर में ऑटो चलाता था। वह महीने में एक–दो बार गाँव आता और अपने पैसों की ठसक दिखाकर शहर के ऐसे–ऐसे किस्से सुनाता कि दोनों को गाँव की जिंदगी बेमजा लगने लगी। दोनों एकाधिक बार फूफा के घर भी रहकर आए थे। फलों के ठेले से ही फूफा की अच्छी–खासी आमदनी थी। उनकी जेब में हमेशा पाँच–सात हजार पड़े रहते जबकि गाँव में हाड़तोड़ मेहनत करने के बाद भी महीने में दस हजार से ज्यादा आमदनी नहीं हो पाती। चाहे जब मौसम की मार झेलनी पड़ती और खड़ी फसल चौपट हो जाती। यही हाल मछली पालन का भी था। मछली का जितना बीज आता, उसमें आधा तो खराब निकल जाता। जरा सी चूक हो जाए तो मछलियों को बीमारी लगने का खतरा अलग। रोज–रोज जाल को ठीक करते बैठो।

शंभू और जहीर की शहर जाने की इच्छा पर मुकुटधर और फतह मोहम्मद ने भी एतराज नहीं किया। वह जानते थे कि गाँव के उनके अधिकतर संगी साथी या तो काम की तलाश में शहर का रुख कर गए हैं या फिर आगे पढ़ाई के लिए दूसरे कस्बों में रहने लगे हैं। मुकुटधर और फतह मोहम्मद ने चुन्नी लाल और

नियाज मोहम्मद से सलाह मशविरा किया। चुन्नी लाल ने भरोसा दिलाया कि वह अपने सेठ से बात करके काम पर लगवा देगा। यदि दोनों ड्राइवरी सीख लें तो बैंक से लोडिंग ऑटो या फिर ऑटो रिक्शा के लिए लोन भी मिल जाएगा। लोडिंग ऑटो रहेगा तो घर के भी काम आएगा और किराए पर लगने वाले पैसों की भी बचत होने लगेगी। दोनों को बात जम गई। तय हुआ दोनों ड्रायवरी सीखेंगे और फतह मोहम्मद का बेटा लोडिंग ऑटो लेगा तथा मुकुटधर का बेटा ऑटो रिक्शा।

सारे काम उनकी इच्छानुसार हो गए। शंभू और जहीर कुछ दिनों तक फूफा के साथ ही रहे। जहीर के पास काम की कमी नहीं थी। उसके पास गाँव से मछलियाँ लाने के काम के साथ ही नियाज और उसके कुछ मित्रों के लिए अलसुबह नवबहार मंडी से फलों को लेकर आने का नियमित काम था। दिन में भी उसे ग्यारह नम्बर मार्केट के पास स्थित सरदार जी की शॉप से सामान ग्राहकों के घर पहुँचाने का काम मिलता रहता। चार–पाँच सालों में ही जहीर ने काफी तरक्की कर ली और फूफा के पास ही निजामुद्दीन कॉलोनी में एक ई.डब्ल्यू.एस. बुक कर लिया।

शुरु–शुरु में शंभू दयाल को भी ऑटो चालन से अच्छी कमाई हुई लेकिन जबसे बड़ी–बड़ी कम्पनियों की टैक्सियाँ सड़कों पर दौड़ने लगीं उसकी आय का ग्राफ गिरने लगा। कई बार तो वह स्टेशन पर चार–पाँच घंटे खड़ा रहता और कोई सवारी नहीं मिलती। निजामुद्दीन कॉलोनी से स्टेशन तक आना जाना भी उसे भारी लगने लगा। वह स्टेशन पर नए–नए बने अपने दोस्त रासबिहारी प्रजापति के साथ स्टेशन के पास ही रहने लगा। इसी बीच उसे कुछ बच्चों को मांटेसरी स्कूल लाने–ले जाने का काम मिल गया। बीस–बाइस हजार की नियमित आमदनी का सिलसिला जम गया। दिन में वह घर पर आराम करता या फिर जहीर के साथ उसके ऑटो में घूमता रहता। रात में स्टेशन पर खड़ा हो जाता। एक दो सवारियाँ उसे मिल जाती।

समय अच्छा ही कट रहा था, फिर अचानक सब कुछ ठप्प हो गया। जो जहाँ था वहीं रुक गया। चारों और दहशत ही दहशत। एक कल्पनातीत खौफ। पहले भी वायरस के प्रकोप देखे थे पर ऐसे वायरस के बारे में न कभी सुना था और न कभी उससे मुठभेड़ हुई थी। हर कोई आतंक के साए में जीने को मजबूर, लगता मौत दरवाजे के बाहर खड़ी है, एक पैर बाहर निकाला और दबोच लिया उसने। चारों ओर से डरावनी खबरें आ रहीं थी। लाखों की संख्या में लोग जान हथेली पर लेकर हजारों किलोमीटर के सफर पर सड़कों पर उतर आए थे। बस एक ही इच्छा कि मौत भी आए तो अपनों के बीच आए। पुलिस और प्रशासन की निरंकुशता के बीच कभी–कभी सुखद समाचार भी मिल जाते। लोग स्वेच्छा से लोगों को खाना, दवाएँ और चप्पलें बाँटते दिख जाते। ऐसे दृश्य दिल को सुकून पहुँचाते।

ट्रेनें, बसें, स्कूल सब बंद थे सो शंभू और रासबिहारी घर पर ही पड़े रहते। सारी आमदनी के स्रोत सूख गए। फूफा फोन कर हालचाल लेते रहते। जहीर के हाथों एक बार कुछ पैसे भी भिजवाए थे उन्होंने। मोहल्ले में सब कुछ ठीकठाक नहीं था। रात गहराती तो विचलित करने वाली आवाजें सुनाई देने लगतीं, सुबह लोगों की खुसुर–पुसुर शुरु हो जाती। किन्हीं गजेंद्र भैया की आमद मोहल्ले में बढ़ गई थी। कौन हैं गजेंद्र भैया, अधिकांश लोग नहीं जानते थे उनको, पर बात बहुत पते की करते हैं। ऐसी–ऐसी बातें बताते हैं कि आँखें फटी की फटी रह जाती हैं। गाँव के पटवारी के लड़के ने बताया था शंभू को। तीन–चार दिनों से रासबिहारी आधी रात में बिना बताए निकल जाता और अलसुबह ही लौट कर आता। तबसे ही रासबिहारी बहकी–बहकी बातें करने लगा था। शंभू ने उससे जानने की कोशिश भी की पर वह टाल जाता। एक दिन सुबह जब वह लौटा तो उसके हाथ में कुछ झंडे थे। एक उसने अपने ऑटो पर लगाया और दूसरा शंभू के ऑटो पर। झंडा लगाने पर ऐतराज जताने का कोई कारण शंभू को नजर नहीं आया पर बाद में रासबिहारी ने जो कहा, वह कई दिनों तक उसका गूढ़ार्थ समझने की कोशिश करता रहा – "ये हमारी अस्मिता का ध्वज है, जो इसका सम्मान नहीं करेगा उसे हम यहाँ नहीं रहने देंगे।"

रासबिहारी की बात सुनकर शंभू को किसी बड़ी गड़बड़ी की आशंका नजर आने लगी यद्यपि उसका इशारा किन लोगों की ओर है, वह समझ नहीं पा रहा था। अंदर ही अंदर कुछ सुलग रहा है यह तो वह बहुत दिनों से महसूस कर रहा था। आखिर रासबिहारी करना क्या चाहता है? क्या है उसके मन में? उसने जब भी खोजबीन करने का प्रयास किया, रासबिहारी का एक ही जवाब होता – "कुछ नहीं .. कामधंधा है नहीं, गजेंद्र भैया के काम में हाथ बँटाते हैं हम लोग, खर्चा पानी निकल आता है हमारा।" मन तो रासबिहारी की बात मानने को तैयार नहीं था। दूसरी ओर उसका मन यह भी स्वीकारने के लिए तैयार नहीं था कि रासबिहारी कोई प्लानिंग कर रहा है।

उस दिन जहीर जब चुन्नी लाल का इंतजार कर रहा था कि उसका फोन आया – "जहीर बेटा, आज हम तुम्हारे साथ मछलियाँ लेने नही चल पाएँगे .. जिस सेठ को हम मछलियाँ बेंचते थे उसने मुझसे मछलियाँ लेने से मना कर दिया है। कह रहा है हमारे मजहबी लोग धमका कर गए है कि खबरदार जो किसी काफिर से बिजनेस किया। तुम खुद सेठ से बात कर लो, तुम्हारी बात मान लेगा वह .. उसके मजहबी लोगों को भी ऐतराज नहीं होगा तुमसे मछलियाँ लेने में"

"चाचा, आपने मुझे गोदी में खिलाया है, आपने ही हमें बिजनेस में जमाया है आप हमारे अपने से ज्यादा अपने हैं, हम यह कैसे कर सकते हैं .. आपको छोडने

के बारे में न अब्बू और न ही मुकुट चच्चा कभी तैयार होंगे” – जहीर ने कातरता पूर्वक कहा।

”क्या बताएँ बेटा, ऐसा भी समय देखना बदा था सो देख रहे हैं .. हमने दूसरे सेठ से भी बात की थी वह मछलियाँ लेने को तैयार भी था पर जैसे ही मैंने फतह भाई का नाम लिया उसने साफ मना कर दिया .. कहने लगा केवल अपने लोगों से ही वह मछलियाँ खरीदेगा।” – कहते–कहते चुन्नीलाल की आवाज भर्राने लगी।

”आप धीरज रखिए चाचा”

”कोशिश कर रहा हूँ बेटा .. तुमसे भी विनती है कि अपने पर नियंत्रण रखना और कोई गलत काम मत करना .. ये वायरस तो एक न एक दिन चला जाएगा पर हमारे भीतर एक ऐसा खोखलापन, एक ऐसी तुच्छता को छोड़ जाएगा जिसकी भरपाई करने में वर्षों लग जाएँगे। पता नहीं मानवता की कितनी जलती चिताएँ हमें देखनी पड़ेगीं।”

चुन्नी लाल की आवाज दर्द से भीगी हुई थी। जहीर बहुत देर तक उस दर्द को महसूस करता रहा। मन भारी हुआ तो शंभू से मिलने चला गया।

लॉकडाउन खुलने की शुरुआत हो चुकी थी। सब्जी मंडी में चहल–पहल बढ़ने लगी थी। नियाज अपनी दूकान खोलकर फलों की टोकरियाँ ठेले पर जमा रहे थे। दो लड़के आए, बोले – ”सेव कैसे दिए” और जोर–जोर से छींकने लगे।

”भाई, मुँह उधर करके छींकिए, एक तो आपने मास्क नहीं लगाया और यहाँ छींक भी रहे हैं”

”ओए, जबान संभाल कर बोल, एक तो तू फलों को चाट–चाट कर सबको बेंचता है और हमें सीख देता है” – उनमें से एक लड़का गरजते हुए बोला।

”तौबा–तौबा, यदि मैंने कभी ऐसा किया हो तो अभी इसी वक्त दोजख में जाऊँ”

”तो ले .. तेरी इच्छा पूरी किए देता हूँ” लड़के ने नियाज का कालर पकड़ कर उसे जमीन पर पटक दिया। तभी कुछ और लड़कों का झुंड वहाँ जयकारा लगाते हुए आ गया।

”क्या हो रहा है यह”

”भैया, ये फलों पर अपना थूक मलकर बेचता है .. इसने अपना जुर्म भी कबूल कर लिया है .. अब मरना चाह रहा है सो अपुन इसकी इच्छा पूरी कर रहे हैं”

”ऊपर वाले से खौफ खाओ, इतना सफेद झूठ भी मत बोलो ..” – नियाज जमीन पर बैठते हुए आगंतुक लड़के से बोले – ”तुम तो शंभू के दोस्त हो, कितनी बार हमारी दूकान पर आ चुके हो .. समझाओ इनको, कोई बेजा गलतफहमी हुई है”

"हाँ, शंभू हमारा दोस्त था, आज से वह भाई है हमारा, उसके कहने पर ही हम आए हैं। वह नादान था अब तक, अब अकल आ गई है उसे, कौन अपना है और कौन पराया समझ गया है वह .. अब नहीं आएगा तुम्हारे पास कभी .. आज से अपना बोरिया बिस्तर समेटो और फिर यहाँ मत दिखना"

"तुम अब अपने दोस्त पर ही कीचड़ उछाल रहे हो .. शंभू कभी ऐसा नहीं कह सकता। तीस साल से ज्यादा हो गए हमें यहाँ फल बेंचते हुए, कभी किसी को कोई शिकायत नहीं हुई .. तुम सब हमारे बेटे के समान हो .. हमेशा हमसे फल लेके जाते रहे हो, हमसे कोई भूल हो गई हो तो बताओ, हम सुधारेंगे अपनी भूल" – नियाज गिड़गिड़ाते हुए बोले।

"हमसे रिश्तेदारी गाँठने की जरूरत नहीं है, तोड़ दो हाथ पैर ससुरे के ताकि फिर कभी यहाँ नहीं दिखे"

लड़कों को हिदायत देते हुए रासबिहारी और उसके साथी आगे बढ़ गए। दोनों लड़कों ने नियाज की जमकर ठुकाई की और उसे अधमरी हालत में छोड़कर चले गए। कुछ देर तक नियाज जमीन पर निश्चेष्ट पड़े रहे। लड़कों के जाते ही कुछ तमाशबीन उनके इर्द–गिर्द इकट्ठे हो गए और सहानुभूति का लेप लगाने लगे। किसी ने कुलसुम को खबर कर दी। नियाज से उठते नहीं बन रहा था। कुछ लोगों ने नियाज को उठा कर बैठाया और मुँह पर पानी के छींटे मारे। कुछ घूँट पानी पिलाया। कुलसुम ने उनको इस हालत में देखा तो बेहोश होते–होते बची। जहीर को कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करे। वह अत्यंत डर गया था। शंभू को कई बार मदद के लिए फोन लगाया लेकिन उसका फोन स्विच ऑफ आ रहा था। हारकर जहीर ने लोडिंग ऑटो में नियाज को लिटाया और अस्पताल ले गया। वह तीन–तीन अस्पतालों में भटकता रहा पर किसी भी अस्पताल ने नियाज को एडमिट करने में रुचि नहीं दिखाई। किसी ने पुलिस केस का हवाला दिया तो किसी ने कोविड की निगेटिव रिपोर्ट लाने के पश्चात ही अस्पताल में इलाज करने का नियम बता दिया। जहीर हारकर नियाज को घर ले गया। इत्तफाक से एक कम्पाउंडर पास में ही रहता था। उसने घर आकर देखने की हामीं भर दी। उसकी हाँ किसी वरदान से कम नही थी। कोई फरिश्ता इंसानी रूप धरकर आया था मानो। नियाज की पसलियों में बहुत पीड़ा थी हालाँकि फ्रेक्चर नहीं था। कम्पाउंडर ने दर्द का इंजेक्शन लगा दिया और फोन पर किसी डॉक्टर से सलाह कर कुछ दवाएँ लिख दीं।

दो दिन बाद गाँव भी खबर पहुँच गई। पटवारी के लड़के ने खूब नमक मिर्च लगाकर गाँव में अफवाहों का बाजार गर्म कर दिया। जिन लोगों को मुकुटधर और

फतह मोहम्मद की दोस्ती जरा भी नहीं सुहाती थी उन्होंने इस अवसर का पूरा फायदा उठाया और अपने–अपने ढंग से दोनों के बीच नफरत की दीवार खड़ी करने की कोशिश की। "शंभू एक उन्मादी ब्रिगेड का सरगना बन गया है" .. "ऑटो में झंडा लगाए घूमता है, जहीर ने मना किया था तो उससे मारपीट पर उतारू हो गया था" .. "उसके कहने पर ही उसके कुछ दोस्तों ने नियाज को जान से मारने की कोशिश की" .. "नियाज की किस्मत अच्छी थी कि जिंदा बच गया" .. इनके अलावा भी कुछ कहानियाँ हवा में तैर रहीं थी। "नियाज ने शंभू को घर से निकाल दिया था जिस कारण वह अपने दोस्त के साथ रह रहा था। तभी से वह बदला लेने की फिराक में था" .. "जहीर ने एक बार शंभू को थप्पड़ मार दिया था सो उसने बदला लिया" .. "जहीर ने शंभू के खिलाफ पुलिस में बयान दिया है।" अचानक से इतनी कहानियाँ .. जितने लोग उतने तर्क, तर्क क्या उतने निष्कर्ष, हर घटना की अजीब सी मनमाफिक व्याख्या। पीढ़ियों से चली आ रही मुकुटधर और फतह मोहम्मद की दोस्ती पर संकट के बादल मंडराने लगे।

दोनों ने खुद को अपने घरों में कैद कर लिया। सोच नहीं पा रहे थे कि कैसे एक दूसरे का सामना करें। विश्वास नहीं हो रहा था इन बातों को मानने का, नियाज बाबू पर जानलेवा हमला हुआ है यह सच्चाई है इसलिए लगता है, सभी की सभी कहानियाँ एकदम निराधार नहीं हो सकती। लेकिन इस दुश्मनी की वजह क्या है .. जिन कुलसुम आपा ने मुकुटधर को अपनी गोद में खिलाया हो उसका बेटा उनके सुहाग का दुश्मन हो जाए, कैसे विश्वास किया जाए इस बात पर। नियाज तो स्वयं शंभू को अपने बेटे सरीखा मानता है .. शंभू भी हमेशा फूफी–फूफा की तारीफ करते नहीं अघाता था। फिर ऐसा क्या हो गया? सोच–सोच कर बुद्धि कुंद होने लगती, सिर भारी होने लगता, चक्कर आने लगते। कुसुमलता और नसीमा भी परेशान थीं, कैसे समझाएँ इन लोगों को। बिना सच जाने, पीढ़ियों के साझे संस्कार अर्थहीन न हो जाएँ कहीं।

दो दिनों से दोनों घरों में चूल्हा भी नहीं जला था। जेठ का सूरज भी अपनी किरणों को उन घरों की देहरी के उस पार भेजने में असफल सिद्ध हो रहा था। कहीं ऐसा न हो सूरज अंदर आने की बाट जोहता रहे और अँधेरा तमाम रिश्तों, संवेदनाओं और विश्वास को लील जाए। "जैसा कुछ सुना है वैसा कुछ हो ही नहीं" – मुकुटधर और फतह मोहम्मद के मन में एक विचार कौंधा, एक मद्धिम सी उम्मीद की लकीर मन के भीतरी कोने में टिमटिमाती दिखाई दी। सोचा, सब कुछ नष्ट हो उससे पहले एक बार बात कर ली जाए। मुकुटधर घर से बाहर निकला और उधर से फतह मोहम्मद। दोनों कुछ देर खड़े–खड़े एक दूसरे को ताकते रहे। हाथ भर

की दूरी लेकिन मीलों लम्बा बेगानापन। मुकुटधर ने हिम्मत जुटाई – "फतह क्या तुम्हें लगता है कि हमारा शंभू ऐसा कर सकता है .."

फतह, ऐसा संबोधन तो मुकुटधर के मुँह से पहली बार सुना था, हमेशा फत्ते कहकर बुलाता था। बातचीत में परायापन झलक ही आया। "अरे मैं भी कहाँ पहले सरीखा मुक्कू से तपाक से मिला हूँ" सोचा फतह मोहम्मद ने। बोला – "इस प्रश्न का उत्तर तुम्हीं दो, मैं विश्वास कर लूँगा तुम्हारी बात का"

चुप रह गया मुकुटधर, कुछ बोल नहीं पाया। फतह मोहम्मद का अब भी इतना विश्वास है उस पर। कुछ मिनट बीते कि मोटरसाइकिल रुकने की आवाज सुनाई दी। चुन्नी लाल गाड़ी स्टैण्ड पर खड़ी कर उनकी ही तरफ आ रहा था।

"ऊपरवाले का लाख–लाख शुक्र है .. तुम दोनों को साथ देखकर दिल को कितना सुकून मिला है, बता नहीं सकता" – चुन्नी लाल ने मुकुटधर और फतह मोहम्मद के हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा।

"नियाज भाई कैसे हैं, चुन्नी जी, माहौल खराब है कहकर आप ने हमें आने से रोक दिया था" – दोनों एक साथ बोल पड़े।

"नियाज भाई ठीक हैं, चिंता की कोई बात नहीं है। मेरे एक परिचित डॉक्टर उनको देख रहे हैं एक हफ्ते में भले चंगे हो जाएँगे" – चुन्नी लाल ने कहा – "पर जो हुआ अच्छा नहीं हुआ, वर्षों लग जाएँगे हमारी साझी विरासत को फिर से स्थापित होने में .. तुम दोनों को साथ देखकर उम्मीद जगी है, तुम्हारे संस्कार इतने खोखले नहीं है जितना कुछ सिरफिरे लोगों ने समझ रखा है"

"क्या हुआ था, हमें बताइए चुन्नी जी"

"मैं इसीलिए आया हूँ ताकि तुम्हें सब बता सकूँ, शंभू के साथ उसके दोस्त प्रजापति ने बहुत ही शातिर खेल खेला है। शंभू का दोष केवल इतना है कि वह विकृत मानसिकता वाले अपने इस दोस्त के इरादों को समझ नहीं सका। जिस दिन की यह घटना है उस दिन शंभू अपने कमरे में सो रहा था। प्रजापति ने उसके मोबाइल से सिम निकाली और कमरे के बाहर ताला मार कर अपने मंसूबों को अंजाम देने निकल गया। शंभू की सिम से प्रजापति ने सबको मंडी में तैयारी के साथ उपस्थित रहने की सूचना दी और फिर उन लोगों ने वही किया जो उनसे कहा गया था। जहीर शंभू को फोन करता रहा पर उस तक सूचना पहुँची ही नहीं। दूसरे दिन कुछ लड़के पकड़े गए। शंभू का नाम संदिग्धों में आ गया। रात में पुलिस ने उसे उठा लिया। वह रोता रहा, गिड़गिड़ाता रहा, एक बार फूफा को देखने की मिन्नतें करता रहा पर पुलिस उससे सच उगलवाने के हथकंडे अपनाने में व्यस्त रही।"

"इतना सब घट गया, हमें बताया ही नहीं किसी ने"

"मैंने ही मना किया था जहीर और कुलसुम बहिन को" – चुन्नी लाल ने कहा – "शंभू को छुड़ाना जरूरी था, बड़ी मुश्किल से शंभू की जमानत करा पाया .. मुझे विश्वास था कि शंभू ऐसा कुछ कर ही नहीं सकता .. प्रजापति ने अच्छा जाल बुना था, एक पावरफुल नेता का हाथ भी उस पर था सो पुलिस भी उसपर हाथ नहीं डाल रही थी .. लेकिन हर अपराधी से कोई न कोई गलती हो ही जाती है .. शंभू के नम्बर से काल जरूर किए गए थे पर शंभू के फोन में किसी के नम्बर नहीं मिले, शंभू किसी को जानता भी नहीं था .. वे सारे नम्बर प्रजापति के फोन में मिले .. शंभू की सिम भी प्रजापति के फोन में लगे होने के प्रमाण पुलिस को मिले .. इस अधार पर वकील शंभू को जमानत दिलाने में सफल हो गया। शंभू नियाज भाई जी के यहाँ है। अब सब कुछ ठीक है, इसलिए मैं यहाँ आया हूँ। आप लोग भी एक दो दिन में नियाज भाई को देखने आ सकते हो"

मुकुटधर और फतह मोहम्मद ने आसमान की ओर निहारा। सूरज तेजी से नीचे चला आ रहा था और पल में ड्योढ़ी पार कर कमरे के भीतर अपनी रश्मियाँ बिखेरने लगा। साझा विरासत को ग्रहण लगने से पूर्व ही सूर्य राहू के चंगुल से मुक्त हो चुका था।

पहले पाठक का मत

'साझा संस्कार' कहानी मुंशी प्रेमचंद की परंपरा की कहानी है। कहानी का आरंभ ही प्रेम चंद की कहानी,' पंच परमेश्वर' के उल्लेख से हुआ है। दो विभिन्न संप्रदायों के परिवार जो वर्षों से परस्पर सद्भाव से रहते आए हैं उनमें वैमनस्य के बीज बोने में कट्टरपंथी संगठन सफल हो जाते हैं, लेकिन दोनों पक्षों के समझदार बुजुर्गों द्वारा बात को सुलझा लिया जाता है। चुन्नी लाल इस मसले को सुलझाने में एक अहम भूमिका का निर्वाह करते हैं। कहानीकार ने हर पात्र का प्रभावी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। कहानी की भाषा बहुत सधी हुई है। कहानीकार अपने उद्देश्य में सफल हुआ है।

– गंगा राम राजी, उपन्यासकार एवं कहानीकार, शिमला

❍ ❍ ❍

7

उपकार

उस दिन तुलसी काम पर आई तो उसके साथ उसकी ग्यारह वर्षीय बेटी भी थी। लॉकडाउन के पश्चात वह पहली बार काम पर आई थी। दो दिन पहले ही सोसाइटी की मैनेजिंग कमेटी ने कुछ शर्तों के साथ मेड्सर्वेन्ट्स को सोसाइटी में प्रवेश की इजाजत दी थी। माँ–बेटी दोनों ही मास्क लगाकर आईं थी और घर के अंदर प्रवेश करने से पूर्व दोनों ने अपने हाथ सेनेटाइज किए थे। सोसाइटी के प्रवेश द्वार पर दोनों का तापमान भी लिया गया था और ऑक्सीजन लेवल भी चेक किया गया था, जिसे उनके प्रवेश कार्ड के पृष्ठ भाग पर अंकित भी किया गया था।

मिसेज रोशनी खन्ना ने तुलसी को बेटी के साथ आया देखा तो पूछा – "बेटी को साथ लेकर क्यों आई हो"

"क्या बताऊँ दीदी, तीन महीने से घर में कैद है तो नजर चुराकर बाहर भाग लेती है, बाहर कितना खतरा है इसे समझाती हूँ तो समझती ही नहीं है, सोचा काम पर साथ ले जाऊँगी तो मेरा हाथ बँटाएगी और काम भी सीखेगी"

"तुलसी, तुम्हारी बेटी तो पढ़ती है, फिर क्यूँ इसे अभी से काम में लगाना चाहती हो, इतने छोटे बच्चों से काम कराना कानूनन भी ठीक नहीं है" – रोशनी ने तुलसी को समझाते हुए कहा, फिर उसकी बेटी से पूछा – "क्या नाम है तुम्हारा, किस क्लास में पढ़ती हो"

"रानी" – लड़की बोली – "तीसरी में"

"तुम आगे पढ़ना नहीं चाहती"

"चाहती हूँ मैडम, पर स्कूल बंद हैं"

"स्कूल बंद हैं लेकिन आनलाइन कक्षाएँ लग रही हैं, तुम्हारे स्कूल में नहीं चल रहीं क्या"

"चल रहीं हैं, मैं सुनील के यहाँ उसके मोबाइल पर पढ़ने जाती हूँ पर अम्मा डाँटती हैं"

"क्यों डाँटती हैं अम्मा"

"उनको लगता है मैं झूठ बोलती हूँ"

"तुलसी, तुम्हारी बेटी तो बहुत समझदार और होशियार है। इसकी पढ़ाई मत छुड़ाओ इस तरह"

"दीदी मैं भी चाहती हूँ कि हमारी बेटी पढ़े, पर क्या करूँ .. हमारे मर्द का काम–धंधा बंद है, मुझे भी केवल दो घरों से ही काम के लिए बुलावा आया है, पहले छः घरों का काम करती थी, बाकी लोग अभी इंतजार करने को कह रहे हैं, आठ हजार रुपए में मकान का किराया और खाना–पीना ही पूरा नहीं पड़ता, स्कूल की फीस कहाँ से जमा करें, पढ़ने के लिए अच्छा वाला मोबाइल भी चाहिए, कहाँ से लाएँ इतना पैसा .. स्कूल खुल जाते तो इसकी पढ़ाई क्यों छुड़वाते मैडम जी, अभी मजबूरी है। हमारे मोहल्ले का माहौल भी बहुत खराब हो गया है। कोई न कोई वारदात रोज होती रहती है। लोगों के पास कामधंधा है नहीं, घर में पड़े–पड़े मार–कुटाई, लड़ाई–झगड़ा करते रहते हैं। घर सूना देखकर अंदर घुस जाते हैं। पुलिस आकर सबको परेशान करती है। तीन दिन पहले रानी से भी पूछताछ करके गई है। इस नासपीटी ने कह दिया था कि रजनी चाची का सिर उसके आदमी ने ही दारू के नशे में फोड़ा है। ताड़ के पेड़ जैसी बड़ी हो गई है पर अक्ल धेले भर की नहीं है कि कब क्या बोलना है। घर में छोड़कर आती हूँ तो हमेशा डर लगा रहता है .. इसलिए साथ में काम पर लाने लगी हूँ"" – तुलसी ने एक साँस में अपनी व्यथा सुना दी।

"तुम्हारा आदमी क्या काम करता था"

"नेहरू नगर तिगड्डे पर खोमचे का ठेला लगाता था, तीन–चार सौ रुपए कमा लेता था, चार महीने से एक पैसे की कमाई नहीं हुई"

"उसको बोलो, घर में रहकर बेटी को देखे"

"मर्द है, नहीं सुनता .. बहुत बार बोल चुकी हूँ, लड़ भी चुकी हूँ, सुबह–सुबह घर से निकल जाता है और रघु के टपरे पर बैठा ताश खेलता रहता है"

"तुम्हारे घर की समस्या तो तुम्हें ही सुलझानी होगी तुलसी, इसमें मैं तुम्हारी मदद नहीं कर सकती .. हाँ एक घर में तुम्हें काम जरूर दिलवा सकती हूँ। पीछे वाली कॉलोनी में मेरी एक सहेली रहती है, तुम कहो तो उससे बात करूँ मैं"

"दीदी, रामबाग कॉलोनी है क्या, घूम के जाना पड़ता है वहाँ, लेकिन आप बात करो मैं कर लूँगी"

"पर तुलसी तुम रानी को लेकर यहाँ नहीं आओगी .. घर में छोटा बच्चा है, बाबू जी हैं .. पता है न इंफेक्शन का कितना डर है, हाथ धोते–धुलाते मैं परेशान हो जाती हूँ। ऐसे में मैं कोई रिस्क लेना नहीं चाहती .. अपने आदमी से कहो जब तक तुम काम से लौट कर नहीं आती तब तक घर पर रहा करे"

इसके बाद तुलसी रानी को लेकर नहीं आई लेकिन हर रोज वह अपने साथ अपनी बस्ती की एक कहानी लेकर आती। रोशनी किचिन में काम करती रहती और तुलसी बर्तन धोते हुए उसे कहानी सुनाती जाती।

"मैडम जी, पता है आज क्या हुआ, सुनील का दोस्त है न दिलीप, उसे पुलिस उठाकर ले गई। परसों बिट्टन मार्केट के पास किसी की चैन खींची थी उसने। मैडम स्कूटी से जा रही थी, बीच सड़क पर गिर पड़ी। पाँव टूट गया उनका। पर दिलीप की भी किस्मत खराब निकली .. वो क्या कहें है उसे, टीवी नहीं नहीं शायद सूटीवी .. सीटीवी जैसा कुछ नाम है जिसमें फोटू खिंच जाते हैं, उसमें उसकी फोटू आ गई और धरा गया। पुलिस भी बड़ी मुस्तैद हो गई है इन दिनों, जरा में धर लिया उसे"

"बस्ती में पीछे की ओर जो भीलनी रहती है न कल रात उसके यहाँ अवैध भट्टा पकड़ा गया। पता लगा गुड़ से देसी दारू बनाती थी और बेचती थी। उसी से उसका घर चलता था। रेवती बता रही थी कि पुलिस को सब पता था। कई पुलिस वाले उससे फोकट में ले जाते थे। कल उसकी तबियत खराब थी सो दारू नहीं बनाई थी उसने। एक सिपाही दारू लेने आया तो नहीं दे पाई। जब बनाई नहीं तो कहाँ से देती। रात में पुलिस आई और पकड़ कर ले गई। उसके आस–पड़ोस में रहने वाले सात–आठ लोगों को भी रात भर थाने में बिठा कर रखा"

"मीरा दीदी के यहाँ जो काम करती है न, रज्जो। आप जानती हो न रज्जो को, वही काली सी घुँघराले बाल वाली। कल जब मैं काम करके घर गई तो पता लगा ऊकी लड़की मर गई। कल रात उसने बहुत मारा था उसे .. दो–तीन दिन से उल्टियाँ कर रही थी तो संदेह हुआ। रात में ही रमा ताई को दिखाया। दो हजार में सौदा तय हुआ बच्चा गिराने का। भगवान जाने क्या बिगड़ गया और लड़की चल बसी। रमा ताई तो बहुत अनुभवी दाई है दसियों बच्चों को गिरा चुकी है और जचकी तो सैकड़ों की कराई होगी उसने"

"कल मैडम जी पुलिस का दूसरा ही रूप देखा। नदीमा अर्से से अकेली ही रहती है बस्ती में .. पैंसठ–सत्तर साल की होगी, कोई आगे–पीछे नहीं है। पता नहीं पुलिस को कैसे पता चल गया कि चार दिनों से नदीमा ने कुछ नहीं खाया है। पानी को पी–पी कर काम चला रही है। कल दो सिपाही आए और नदीमा को भोजन करा कर गए और महीने भर का राशन भी दे गए। कॉलोनी में अकेले रहने वाले

हर बुजुर्ग के घर भी यह पता करने गए कि खाने–पीने की उनकी क्या व्यवस्था है .. सच मैडम जी, पुलिस को ऐसा करते न कभी देखा था और न सुना था"

पिछले पंद्रह बीस दिनों से तुलसी नई–नई कहानियाँ रोशनी को सुनाती आ रही थी। रोशनी सुनती रहती लेकिन उसने न कभी टोका और न ही प्रतिप्रश्न किया। उस दिन तुलसी आई नहीं तो रोशनी को चिंता हुई, अब क्या फिर से झाड़ू–पोंछा और बर्तन धोने में खपना पड़ेगा? दो बार फोन भी लगाया पर तुलसी ने उठाया नहीं। रोशनी ने अपनी सहेली से भी पूछा, उसके यहाँ भी नहीं गई थी। मन मार कर रोशनी सारे काम करती रही। सारंग भी आज बिना ब्रेकफास्ट किए चले गए। प्रोडक्ट की क्वालिटी टेस्टिंग को देखने के लिए सी.जी.एम. आने वाले थे। और ये मृदंग, सारे घर में अपने खिलौने, कलर और बुक्स फैला कर रखता है। कितनी बार समझाया है कि खेल कर खिलौने उनके स्थान पर रख दिया करे पर मासूमियत से "सॉरी, भूल गया मम्मा" कहकर कुछ और कहने का अवसर ही नहीं देता। वह भी हँस कर रह जाती है।"

अगले दिन भी तुलसी नहीं आई तो घबराहट होने लगी, "पता नहीं क्या हुआ उसे, ऐसा उसने कभी नहीं किया था। चार साल से काम कर रही है घर में, बोलती कुछ ज्यादा है पर काम अच्छा करती है।"

रोशनी काम निपटा कर बैठी ही थी कि बैंक से ब्रांच मैनेजर का फोन आ गया – "मैडम, आपके खाते में अब छुट्टियाँ शेष नहीं है। पीएल, ईएल, मेडिकल सहित काफी छुट्टियाँ आपने ले ली हैं। अगले हफ्ते आपको ज्वाइन करना जरूरी है .."

शायद ब्रांच मैनेजर आगे भी कुछ कहना चाहता था लेकिन संकोचवश कह नहीं सका। फोन कटने के साथ ही रोशनी सिर पकड़ कर बैठ गई – "अब ये नई मुसीबत, घर का काम भी इतना बढ़ गया है कि फुरसत नहीं मिल रही है और अब बैंक की टेंशन। नौकरी के साथ–साथ कैसे हो पाएँगे इतने काम। अम्मा जी थीं तो चिंता नहीं थी वह मृदंग की देखभाल कर लेती थीं और मैं निश्चिंत होकर बैंक चली जाती थी। पर पल में बदल गया सब कुछ। इसी साल फरबरी की ही तो बात है .. बाथरूम में पाँव फिसला और सिर में ऐसी चोट लगी कि अम्मा जी होश में ही नहीं आ पाई, हफ्ते भर वेंटीलेटर पर रहीं और फिर उनका निर्जीव शरीर ही वापस घर लौटा।"

सोच कर रोशनी का सिर भारी हो गया, एक पल के लिए सोचा नौकरी छोड़ दूँगी पर दूसरे ही पल दिमाग का दूसरा कोना सक्रिय हो गया – "नौकरी कैसे छोड़ सकती हूँ .. नौकरी छोड़ दी तो कैसे मैनेज होंगे घर के खर्चे। मेरी तो पूरी सैलरी ही फ्लैट की किस्त भरने में चली जाती है। सारंग की सैलरी से घर के

सारे खर्चे चलते हैं .. कोई अतिरिक्त खर्च आ जाए तो परेशानी होने लग जाती है .. कितनी बार इंश्योरेंस की किस्त भरने के लिए बाबू जी की पेंशन से पैसे निकालने पड़ जाते हैं। नौकरी तो छोड़ ही नहीं सकती, कैसे भी मैनेज करना होगा। यह तो अच्छा है कि अम्मा जी के जाने के बाद बाबू जी ने अपने को संभाल लिया है, मृदंग के साथ खेलते रहते हैं, जब सारंग को जल्दी जाना होता है तो वही मृदंग के साथ लैपटॉप पर नौ बजे की ऑनलाइन क्लास अटैंड करते हैं। अभी छुट्टियाँ थी तो बाकी क्लासेज मैं देख लेती थी। अब तो बाबू जी को ही पूरे समय बैठना पड़ेगा, कितनी परेशानी हो जाएगी उनको।"

तीन दिन हो गए थे तुलसी नहीं आ रही थी। रोशनी परेशान थी। सारंग को भी समय नहीं मिल पा रहा था कि उसके साथ बैठ कर डिस्कस कर सके कि क्या किया जाए? उस दिन का काम पूरा कर वह ब्रेकफास्ट करने बैठी ही थी कि तुलसी आ गई। रोशनी का चेहरा खिल गया पर तुलसी बदहवासी की स्थिति में थी। पूछा – "क्या हुआ तुलसी, तुम इतने दिनों से आई नहीं, एक फोन भी नहीं किया, न ही मेरे फोन को उठाया तुमने"

"क्या बताऊँ मैडम, रानी तीन दिनों से अस्पताल में भर्ती है, आज उसको छुड़ाना है"

"क्या हुआ रानी को"

"आपने साथ लाने से मना किया तो मैं उसे घर में बंद कर काम करने जाती थी .. उस दिन बिंदू चाची के घर में आग गई जिसका धुआँ हमारे घर में भर गया और रानी बेहोश हो गई। जब मैं घर पहुँची तो पता चला .. तुरंत उसे लेकर अस्पताल भागी .. अब ठीक है वह .. मुझे बारह हजार की जरूरत है, अस्पताल का बिल भरने के लिए, वह रानी को बिना पैसा जमा किए छोड़ने को तैयार नहीं हैं"

"तुम इतनी परेशान रही पर तुमने बताया नहीं .. मैं पैसा देती हूँ तुम्हें, कल से तुम रानी को साथ लेकर आना .."

"कैसे बताती मैडम जी, मेडिकल स्टोर वाले को मोबाइल दो हजार में दिया तब उसने दवा दी"

"दो हजार रुपए और देती हूँ तुम्हें, अपना फोन भी लेती आना उससे"

रोशनी ने राहत की सांस ली। अगले दिन तुलसी रानी को लेकर आई। रानी अब स्वस्थ थी। उसे बिठाकर रोशनी ने बोर्नविटा का दूध पिलाया और बिस्किट खाने को दिए। तुलसी घटना वाले दिन की कहानी पुनः रोशनी को सुनाने लगी। रोशनी ध्यान से उसकी सुनी हुई कहानी दोबारा सुनती रही।

जब तुलसी काम करके जाने को हुई तो रोशनी ने उसे अपने पास बुलाया, कहा – "तुलसी कल से रानी पूरे समय हमारे यहाँ रहेगी .. यहीं खाएगी और मृदंग के साथ खेलेगी। तुम्हें कोई परेशानी तो नहीं"

"कैसी बात कर रही हैं मैडम जी आप, आप तो हम पर इतना बड़ा उपकार कर रही हैं .."

"उपकार" .. तुलसी के कहे शब्द बहुत देर तक रोशनी के कानों में बजते रहे। "कितने भोले होते हैं ये छोटे लोग .. किसी के स्वार्थ को भी परमार्थ के रूप में ले लेते हैं, उसे उपकार मान बैठते हैं।" पर रोशनी के पास इस विषय में ज्यादा सोचने का समय नहीं था। उसके चेहरे पर एक आश्वस्ति, एक निश्चिंतता का भाव उभरा और उसने ब्रांच मैनेजर को फोन लगा कर सूचना दे दी – "सर मैं सोमवार को ज्वाइन करने आ रही हूँ"

पहले पाठक का मत

'उपकार' कोरोना काल के संत्रास से समाज, परिवेश और युगबोध में आए परिवर्तन के साथ दृष्टिगत सामाजिक अस्मिता की चिंता और चेतना, अन्तर्बाह्य सत्य और यथार्थ के तमाम आयामों का समय से साक्षात्कार करती मर्मस्पर्शी रचना है। इस विकट संक्रमण काल में जीने के ढंग बदल गए। अवसन्न हो चुके मस्तिष्क में, अवचेतन में डरावने सपने हैं। त्रासदी से उपजीं जटिल परिस्थितियाँ हैं। श्रमिक वर्ग अधिक विचलित और असुरक्षित महसूस कर रहा है, नित नई समस्याओं से जूझ रहा है तो कुछ को जीवन में आते अभाव और दुश्वारियाँ अपराध के लिए प्रेरित कर रहीं हैं। इसी यथार्थ का प्रगटीकरण, विश्रृंखलित जीवन की पद्धति और सामयिक उद्गिन्ताओं को कुशलता से चित्रित करती कहानी है उपकार। कहानी की महिला पात्र रोशनी और तुलसी की अपनी–अपनी समस्याएँ हैं जो इस संक्रमण काल की आपदा को जीवंत करतीं हैं, जिनमें संवेदना का ताप है। कथा विन्यास में कहीं अनावश्यक बिखराव, अनर्गल विलाप, अर्थहीन शब्दावली नहीं है। कथा का अंत मानव की उस मूलभूत मनोवृत्ति की ओर संकेत कर जाता है जो स्वार्थ के आदान–प्रदान पर अन्योन्याश्रित होती है और त्रासदी को भी व्यवसाय में बदल देने की क्षमता रखती है। एक दूसरे से जुड़ी स्वार्थ पूर्ति, विवश के लिए उपकार होने की रूपात्मकता और तनाव के बीच लेखक कथावस्तु के आशय का अभीष्ट प्राप्त करने में निःसंदेह रूप से सफल है।

– कांति शुक्ला, वरिष्ठ कहानीकार, भोपाल (म.प्र.)

❍ ❍ ❍

8

लॉकडाउन वरदान कथा

पंचशील नगर झुग्गी बस्ती शहर की सबसे पुरानी झुग्गी बस्ती है। इसके दाहिने छोर पर सबसे अंत में बनी है राधाचरन की झोपड़ी। पीछे की ओर नाला बहता है। उसके किनारे नगर निगम द्वारा रोपे गए पोधों ने अब पेड़ों का रूप धारण कर लिया है। थोड़ी सी खाली जगह है हालाँकि उसे खाली जगह कहना नाइंसाफी है। बस्ती के लोगों ने उसे घूरे में तब्दील कर दिया है। तीन–चार समूहों में बँटे घूरों ने सारी खाली जगह को अपने कब्जे में लिया हुआ है और उन घूरों पर भी कुछ सुअरों का कब्जा है। सारे दिन ये सुअर घूरों को उलट–पुलट करते रहते हैं और अजीब सी आवाजें निकालते हुए लोटते रहते हैं।

ये कुछ माह पुरानी तस्वीर है। आज वह खाली जगह घूरों से मुक्त है और सुअरों ने भी नाला पार कर दूसरी ओर अपना बसेरा बना लिया है। खाली जगह में क्यारियाँ बनाई गईं है और उनमें फूलों के पौधे रोपे गए हैं। यह सब किया है राधाचरन, उसकी बीबी बेनी और उसके बच्चों मोहन और सोनी ने। पिछले कई दिनों से घर में कैदियों की तरह रहते हुए राधाचरन ने पहली बार महसूस किया था कि उसका परिवार किस तरह गंदगी के बीच जीवन यापन कर रहा है और क्यों बार–बार बीमारी उसके घर पर दस्तक देती रहती है। जिन साहब लोगों के बंगलों पर वह बगीचों का रख–रखाव करने जाता था वहाँ उसे बिना हाथ धोए खुरपी, फावड़े तक छूने की इजाजत नहीं थी लेकिन घर पर वह इस नियम का पालन न खुद करता था और न ही बच्चे। मोहन सुबह आसपास की कॉलोनियों में पेपर बाँटता था और दिनभर बस्ती के छोकरों के साथ मटरगस्ती करता था। सातवीं में दो बार फेल चुका था सो उसने स्कूल जाना ही छोड़ दिया था। बारह साल की सोनी चौथी में पढ़ती थी और घर के कामों में हाथ बँटाती थी। बेनी नर्मदेश्वर कॉलोनी के तीन घरों में झाडू–पौंछा करने और बर्तन माँजने का काम करती थी। तीन लोग कमाते थे पर घर की गाड़ी मुश्किल से ही चल पाती थी। घर में आए दिन राधाचरन और बेनी में झगड़ा होता रहता। राधाचरन घर की जिम्मेदारियों से

जी चुराता रहता और देर रात को बेसुधी में घर लौटता। कई बार उसे खाना खाने की भी सुध नहीं रहती थी और औंधे मुँह चारपाई पर गिरकर खर्राटे मारने लगता। सोनी बापू को इस हालत में देखती तो खुद में सिमट कर रह जाती। मोहन को ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। राधाचरन भी उससे कुछ बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाता, वह पलट कर जवाब दे देता।

उस दिन राधाचरन अपनी नई–नवेली बगिया में मिट्टी की गुड़ाई कर रहा था कि उसका लंगोटिया यार माखन आ गया। वह दो दिनों से राधाचरन को फोन कर रहा था और ठेके पर आने के लिए कह रहा था पर राधाचरन हाँ कह करके भी वहाँ नहीं पहुँचा था सो सुबह–सुबह वह राधाचरन का हालचाल पूछने चला आया था। दूर खड़ी डरी–सहमी सी सोनी राधाचरन को कातर निगाहों से देख रही थी।

लॉकडाउन लगे एक सप्ताह बीत गया था। हमेशा देर रात लड़खड़ाते हुए ठेके से लौटने वाला राधाचरन एक हफ्ते से घर में ही बंद था। चारपाई पर पड़े–पड़े बीड़ी फूँकता रहता। ऐसा लगता जैसे सारे बदन में भारी–भारी पत्थर बाँध दिए गए हों .. हिलता–डुलता तो कराह निकल जाती, लगता शरीर में जान ही नहीं बची है। मोहन एक दिन बस्ती में चक्कर लगाने गया तो लौट कर ढेर सारी खबरें बटोर लाया। परसों सत्तन चाचा चौराहे तक गए थे कि पुलिस ने पकड़ कर उन्हें ऐसे डण्डे मारे कि अब न लेटते बन रहा है और न बैठते। नूर के अब्बा को बस्ती के ही कुछ लड़कों ने यह कहते हुए पीट दिया कि "तेरी बिरादरी की बजह से हमारी जान सांसत में आ गई है। अपनी खैर चाहते हो तो बस्ती छोड़कर चले जाओ।" नेतराम को कल रात पुलिस पकड़ कर ले गई है, वह विधवा रमा काकी के घर में घुस गया था। उनने शोर मचा दिया और बस्ती में गश्ती पर निकली पुलिस ने आवाज सुनकर उसे दबोच लिया। और भी खबरें थी उसके पास पर उसने बतायी नहीं। उसके दोस्त अच्छन को बाला के साथ उसके ही कुछ दोस्तों ने शाम को नाले में लोटा लिए एक साथ उतर कर पुलिया की ओर जाते देखा था। रामदीन का पोता निहाल तीन दिनों से सुखदेव की झोपड़ी में सोने जा रहा था। सुखदेव कुछ समय पहले ही 376 में जेल की हवा खाकर लौटा था।

वैसे ऐसी खबरें उस बस्ती में आम थीं। गाली–गलौच, लड़ाई–झगड़े, मार–पीट और छेड़–छाड़ के किस्से तो हर दिन ही सुनाई देते थे। अवैध और समलैंगिक सम्बंधों के किस्सों की भी कमी नहीं थी। कुछ स्त्रियों का नाम तो जिन घरों में वे काम करने जाती थीं उनके साहब लोगों से भी जुड़ा हुआ था। पर राधाचरन और बेनी इन सब मामलों से दूर थे। उनके बारे में कभी बस्ती में कोई गलत बात सुनने को नहीं मिलती थी। राधाचरन को दारू पीने की लत जरूर थी पर उसने

कभी किसी गैर स्त्री को बुरी नजर से नहीं देखा था। बेनी भी अपने काम से काम रखती, बेमतलब घर से बाहर कम ही निकलती। घर में झगड़ा केवल राधाचरन की दारूखोरी को लेकर ही होता।

"बापू ऐसे ही चारपाई पर पड़े रहोगे तो बीमार पड़ जाओगे" – हिम्मत कर सोनी ने राधाचरन से कहा था – "हमारी मास्टरनी दीदी ने कहा था कि शरीर से काम न लिया जाए तो उसमें जंग लग जाती है। बापू कुछ काम किया करो"

"क्या करूँ मैं, कहीं बाहर जा नहीं सकता, तुमने सुना नहीं मोहन ने क्या कहा था, सत्तन जरा सा बाहर निकला था कि पुलिस ने उसे बेरहमी से पीट दिया" – राधाचरन ने अपनी व्यथा व्यक्त की लेकिन बेटी के शब्दों ने उसके अंदर के आदमी को झकझोरने का काम कर दिया था। वह दिनभर पड़ा–पड़ा सोचता रहा, सोनी सही ही तो कह रही है। कब तक पड़ा रहेगा ऐसे ही। कुछ काम नहीं करेगा तो आगे भी हिम्मत नहीं होगी कुछ करने की। आलसी बन जाएगा। पर क्या करे वह? बेनी की खाना बनाने में मदद करे, बर्तन धोने में हाथ बँटाए, कपड़े धोने का काम करे या .. कुछ सोच नहीं सका। सुबह सोनी से ही पूछेगा, क्या है उसके मन में, क्या उसके लायक कोई काम सोच रखा है उसने?

सोनी से पूछा तो सोनी भी सोच में पड़ गई। वह इस प्रश्न के लिए तैयार नहीं थी। तभी पीछे से सुअरों के लड़ने की आवाजें सुनाई देने लगी तो वह चहक उठी जैसे पारसमणि हाथ लग गई हो, बोली – "बापू, अपन पीछे की जगह साफ करके उसमें फूल उगाएँगे। तुम ये काम जानते भी हो तो अच्छे से कर लोगे। फुरसत के समय में मैं और अम्मा माला बनाया करेंगे और दादा उसे बेचा करेगा।"

"मुझे पुलिस से पिटना नहीं है, मैं माला–वाला नहीं बेचूँगा" – मोहन ने आपत्ति दर्ज कराई।

"दादा, फूल उगने में ही दो–तीन माह लगेंगे तब तक सब ठीक हो जाएगा .. और तुम अभी अखबार डालने जाते हो कि नहीं, तुम्हें पुलिस ने मारा कभी"

राधाचरन ने हामी भर दी। उसी दिन से उसने और सोनी ने साफ सफाई का काम शुरु कर दिया। एक हफ्ते में सारे घूरों की सफाई हो गई। नाले में पानी नहीं था सो उसकी भी सफाई कर दी गई। नाले की मिट्टी बागवानी के लिए उपयोगी थी सो उसे अलग रख लिया गया। घूरों की सफाई होते ही सुअरों ने नाले के उस तरफ अपना डेरा बना लिया। अगले एक सप्ताह में क्यारियाँ बन कर तैयार हो गईं। मोहन के जिम्मे हैण्डपम्प से पानी लाने का काम था। बेनी शुरु में तो अनमनी दिखी लेकिन फिर काम में हाथ बँटाने लगी। लॉकडाउन का पहला चरण खत्म होते–होते क्यारियों में अंकुर फूटने लगे थे। असमय हुई वर्षा ने भी उनके

इस कार्य को सुगम बना दिया था। राधाचरन को पहली बार घर का काम करते हुए संतोष की अनुभूति हुई, अपनी जिम्मेदारियों का एहसास हुआ। मोहन भी अपने आवारा दोस्तों की संगत से दूर होने लगा। घर का वातावरण एकदम से बदलने लगा। दारू पीकर राधाचरन के आने से घर में जो तनाव पसर जाता था, अब उस तनाव की हलकी सी परछाई भी दिखाई नहीं देती थी। राधाचरन और बेनी के बीच में होने वाला झगड़ा भी नहीं के बराबर रह गया था। बेनी को मात्र शारीरिक क्षुधा शांत करने की मशीन मानने वाले राधाचरन को उसमें एक सुंदर, सुडोल औरत दिखाई देने लगी थी। रात में अब वह उस पर हिंसक पशु की तरह टूटकर निढाल होकर नहीं सोता था, उसकी इच्छाओं का भी सम्मान करने लगा था। जिंदगी में इतने सारे बदलाव आ गए कि सभी एक–दूसरे के महत्व को महसूस करने लगे। बेटी की पिता से मुलाकात हो गई और राधाचरन की परिवार से। फुरसत के समय में चारों साथ बैठते और राधाचरन उन्हें रामायण व महाभारत की कहानियाँ सुनाता। कभी वह भी गाँव की रामलीला में निषादराज, जटायु और वानर का रोल किया करता था सो उसके पास किस्सों की कमी नहीं थी। मूड में आता तो बढ़ा–चढ़ा कर किस्से सुनाता रहता। सोनी "खूब लड़ी मर्दानी" कविता गाकर सुनाती और मोहन बस्ती की खबरें लाकर देता। कभी–कभी चारों मिलकर कौड़ियों से अष्टाचंग या कन्ना गोटी खेलते। सोनी ने कौड़ियों से पहली बार कोई खेल खेला था। इससे पहले तक वह कौड़ियों को पूजा की वस्तु ही समझती थी। अम्मा दिवाली के दिन अपने बटुए से कौड़ियों को निकाल कर उनकी पूजा किया करती थी और भाईदूज के बाद उठाकर वापस बटुए में रखकर संदूक में रख देती थी।

लॉकडाउन है कि खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहा था। बार–बार उसकी अवधि बढ़ जाती और बस्ती के लोग मन मसोस कर रह जाते। स्वच्छंद विचरने वाले लोगों को घर में रहना रास नहीं आ रहा था। राधाचरन के पास दोस्तों के फोन आते रहते और लॉकडाउन को कोसते रहते। कोई कहता – "कितने दिन हो गए यार अपनी महफिल नहीं जमी", तो कोई आहें भरते हुए बताता – "दस दिन हो गए एक बूँद गले में नहीं गई, ननकू बैगा ने भी दारू की भट्टी बंद कर दी, महुआ नहीं बचा उसके पास" तो कोई चहकते हुए बताता – "अपुन को ज्यादा फर्क नहीं पड़ रहा इस लॉकडाउन से, नंदकिशोर को गुड़, यूरिया और आक्सीटोसिन इंजेक्शन लाकर दे दो वह दस रुपए में एक पौआ दे देता है, बड़ी अच्छी रहती है उसकी दारू, चढ़ती भी मस्त है, बस तुम्हारी कमी खलती है।"

शुरु–शुरु में दोस्तों की बातें राधाचरन को विचलित करती थीं, उसका गला सूखने लगता और मन में अजीब सी छटपटाहट होने लगती। इच्छा होती घर के कनस्तर में रखे गुड़ को लेकर भाग जाए और ननकू से एक–दो अद्धे बनवा कर

ले आए। समय बीता तो छटपटाहट कम होती गई। अपनों के साथ समय गुजरने लगा तो पिछली जिंदगी की परछाइयों से मन मुक्त होने लगा। परिवार में मन रमने लगा, जिंदगी रास आने लगी। क्यारी में खिले गेंदे के पहले फूल को देखकर मोहन का जन्म याद आ गया, वैसा ही सुकुमार और गुलगुला। कुछ दिनों बाद बगिया में गेंदे और गुलाब के फूल लहलहाने लगे। अब क्या करें इन फूलों का? विकट प्रश्न था। बाहर बेचने जाने में पिटाई का खतरा था ही, मोहन पहले ही मना कर चुका था। सोचा तो रास्ता भी निकल आया। तय हुआ जिन घरों में मोहन अखबार बाँटने जाता है उन घरों में पूछ्कर पूजा के लिए फूल और बेलपत्री की पुड़ियाँ बनाकर सप्लाई की जाएँगी। नाले के किनारे लगे बेल के पेड़ से बेलपत्री की व्यवस्था होने लगी। कुछ दिनों में सप्लाई की व्यवस्था जम गई, चार फूल और तीन बेलपत्री की एक पुड़िया पाँच रुपए में। शुरु में दस–बारह घरों से ऑर्डर मिला फिर एक हफ्ते में ही यह संख्या चालीस तक जा पहुँची।

परिवार की आय बढ़ाने में अपना योगदान देकर मोहन भी उत्साहित था। बस्ती के दूसरे लोग जब घर में पड़े–पड़े खाने–पीने तक को मोहताज होते जा रहे थे तब राधाचरन ने परिवार के लिए एक नियमित आय की व्यवस्था जमा ली थी। सब खुश थे। लॉकडाउन उनके लिए वरदान सिद्ध हुआ था। लॉकडाउन ने न केवल परिवार को जोड़ा था अपितु आत्मीयता के नए बंधन में बाँधा भी था। परिवार के महत्व को समझाया था, प्यार की ताकत को महसूस कराया था और रिश्तों की टूटती डोर को मजबूत बनाया था।

लॉकडाउन खुला तो लोगों की आवाजाही बढ़ने लगी। काम की तलाश में लोग घरों से बाहर निकलने लगे। ऐसे में खबर मिली कि सरकार ने शराब की दूकानें खोलने की मंजूरी दे दी है। सरकार की खाली तिजोरी शराब से भरी जाएगी, राधाचरन के लिए आश्चर्यचकित करने वाली खबर थी। मोहन के पास अक्सर एक–दो अखबार बच जाते। उनमें छपी खबरों से पता लगता कि लोग शराब के कितने दीवाने हैं। अनेक जगहों पर शराब की दूकानों के सामने लगी लम्बी–लम्बी लाइनों की तस्वीरें भी अखबार में छप रहीं थी। बस्ती से लगी आनंद और राजहर्ष कालोनी में कोरोना के कई मरीज मिलने से पूरा एरिया कंटोनमेंट जोन में शामिल था अतएव बस्ती को लॉकडाउन जैसे हालातों से छुटकारा नहीं मिला था। इस अप्रत्याशित लॉकडाउन से सबसे ज्यादा परेशान तो माखन और सुखदेव जैसे राधाचरन के दोस्त थे। उनकी परेशानी की मुख्य वजह बस्ती के बाहर बने अहाते का बंद रहना था। शहर में दारू के कई अड्डे खुल गए थे लेकिन वह बस्ती से बाहर नहीं जा सकते थे। प्यास लगी थी और नदी भी सामने थी लेकिन पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थी जो नदी तक जाने नहीं दे रही थी। दोनों राधाचरन को फोन

करते और अपने दिल की भड़ास निकालते रहते – "यार, पहली बार किसी सरकार ने बेवड़ों पर भरोसा जताया है और हम हैं कि सरकार की कोई मदद नहीं कर पा रहे हैं .. हमारी बस्ती को किसी की नजर लगी है .. एक महीना हो गया .. अभी तक ससुरी .. क्या कहते हैं .. कंटोन .. अरे यार तुम समझ लो जुबान पर नहीं आ रहा है, हमारी बस्ती फँसी पड़ी है।

सोनी जब भी राधाचरन को अपने दोस्तों से बातें करते सुनती तो अंदर ही अंदर डर जाती। यह कल्पना कर ही उसका मन बेचैनी से भर जाता – "कहीं बापू फिर से पुराने वाले बापू न बन जाएँ जिनके घर में घुसते ही वह और अम्मा दहशत में आ जाते थे और कलह शुरु हो जाता था।" वह प्रार्थना करती कि "लॉकडाउन न खुले। अभी–अभी तो उसने पिता क्या होते हैं, महसूस करना शुरु किया है। पिता जब खुश होते हैं तो घर की दीवारों को चहकते सुना है उसने। पिता जब उसके साथ खेलते हैं तो कौड़ियों में इंद्रधनुष खिलता दिखाई दिया है उसे। बगिया में जब काम करते हैं और पसीने से तर बतर हो जाते हैं तो उस पसीने से उन गुलाबों की खुशबू आती है उसे जिन्हें उनने रोपा है। अम्मा भी कितनी खुश रहने लगी है। पिता का साथ पाकर मुरझाए पीले कनेर की फूल सी दिखने वाली अम्मा दो–तीन महीनों में ही लाल गुलाबाँस के फूल सी खिल गई है। दादा भी बस्ती के आवारा छोकरों के चंगुल से बाहर आ गया है और घर की जिम्मेदारी संभालने लगा है। आनंद के इस संसार को पिता के दोस्त क्यों उजाड़ना चाह रहे हैं, वे क्यों हमारी खुशियों में ग्रहण लगाना चाहते हैं। क्या शराब इतनी जरूरी चीज है कि बापू फिर से दोस्तों के बहकावे में आकर हमें अपने हाल पर छोड़ देंगे। इस बार वह नहीं जाने देगी बापू को, किसी भी कीमत पर .."

21 दिन के अतिरिक्त लॉकडाउन के बाद आसपास की कॉलोनियों में एक भी पॉजिटिव केस नहीं निकला सो उन कॉलोनियों सहित पंचशील नगर बस्ती भी ग्रीन जोन में आ गई। ग्रीन जोन में आने के दो दिनों के भीतर ही आधा किमी दूर बना अहाता भी खुल गया। अहाता क्या खुला, बस्ती की मुसीबत आ गई। शाम से ही बस्ती में आम दिनों की तरह मर्दों की भारी–भरकम आवाज में दारी, हरामजादी, छिनाल सहित माँ–बहिनों वाली गालियों के शब्द हवा में छितराने लगे। बस्ती से डराने वाली खबरें आने लगीं। पैसे न देने पर नत्थू पनवाड़ी ने अपनी बीबी का सिर दीवार से भिड़ा कर लहू–लुहान कर दिया था। मायाराम रात में दारू चढ़ाकर आया और नाले में गिरकर अपना पैर तुड़वा बैठा। वंशीलाल ने अहाते में ही किसी बात को लेकर बृजकिशोर की पिटाई कर दी और दीनदयाल रात भर बेसुध सुअरों के बीच पड़ा रहा।

राधाचरन के पास भी दो दिनों में कई बार माखन और सुखदेव के फोन आ चुके थे। वह हाँ कह कर भी उनसे मिलने नहीं गया था सो उस दिन सुबह–सुबह ही गुस्से से उबलता हुआ माखन आ धमका था। राधाचरन उस समय घर के पीछे बगिया में था। द्वार पर सोनी टकरा गई, बोली – "क्यों बापू को परेशान कर रहे हो चाचा, वह नहीं मिलना चाहते तुमसे तो क्यों पीछे पड़े हो उनके"

"लाड़ो तू अपना काम कर, बड़ों के बीच में न पड़" – माखन किंचित आँखें तरेरते हुए सोनी से बोला – "राधे से बोल जाके, माखन आया है।"

"तुम जाओ चाचा, मैं नहीं बुलाती उनको" – सोनी बोलते हुए घर के पीछे की ओर चली गई।

"ए लड़की ..." – कहते हुए माखन भी सोनी के पीछे–पीछे चल दिया।

"अरे माखन तुम .. कब आए यार" – माखन को वहाँ देखकर राधाचरन ने हाथ में पकड़ी हुई खुरपी वहीं छोड़ दी और उठ खड़ा हुआ।

"मैं तो सोच रहा था तुम्हारी तबियत खराब है सो देखने चला आया, पर तुम तो अच्छे भले हो .. अरे देखो खुद को, ये क्या हालत बना रखी है" – माखन बोला और फिर राधाचरन के नजदीक जाकर फुसफुसाया – "इन तीन–साड़े महीनों ने बस्ती के मर्दों को बिल्ली बना दिया है, ठेके पर भी दो–चार को छोड़कर दो दिनों में कोई मिला ही नहीं .. वापस मर्द बनने में सालों को महीनों लग जाएँगे .. तू भी तो कई बार बुलाने के बावजूद नहीं आया, कहीं तू भी तो .."

"छोड़ यार, कोई ओर बात करते हैं" – राधाचरन ने बात बदलनी चाही।

"पहले तुम ये बताओ, आज शाम को मिलोगे कि नहीं" – माखन ने तल्खी से कहा।

"यार, अभी तो जिंदगी का अर्थ समझ में आया है, मुझे माफ कर दे" – राधाचरन ने शांत रहने की कोशिश करते हुए कहा।

"समझ गया सब, कुछ कहने की जरूरत नहीं है ... घुसा रह अपनी..." माखन, कोई भद्दी सी गाली देना चाहता था, पर बात अधूरी छोड़ कर भुनभुनाता हुआ चला गया। उसने एक बार भी न तो घूरों के बारे में पूछा और न ही गर्मी के मौसम में लहलहाते फूलों की ओर उसका ध्यान गया। माखन के जाते ही राधाचरन फिर अपने काम में लग गया।

सोनी दूर खड़ी–खड़ी सब देख रही थी। वह उड़ना चाहती थी .. पिता ने उसे गर्व करने का अवसर जो दिया था। उसने सिर उठाकर ऊपर की ओर देखा।

अनंत आकाश के समूचे विस्तार में उसे पिता की आकृति दिखाई दी। वह बहुत देर तक अपलक आकाश को निहारती रही ...

पहले पाठक का मत

'लॉकडाउन वरदान कथा' झुग्गी–झोपड़ी में रहने वाले एक निहायत गरीब परिवार की कहानी है। कहानी इस परिवार में लॉकडाउन के दौरान आयी बदलाव की बहार को रेखांकित करती है। परिवार में चार सदस्य हैं, रामचरन, उसकी बीबी बेनी, उनके बच्चे मोहन और सोनी। रामचरन बाग–बगीचों की साफ–सफाई और निदाई–गुड़ाई का काम करता था। बेनी लोगों के यहाँ बर्तन माँजती थी। सातवीं फेल मोहन पेपर बाँटता था और बाकी समय बस्ती में मटरगस्ती करता रहता था। रामचरन को शराब पीने की लत थी। परिवार का गुजारा मुश्किल से होता था, आए दिन कलह होता रहता था। लॉकडाउन ने सबको घर में रहने पर मजबूर कर दिया। सब के पास समय ही समय था। शराब की दुकानें बंद हो गई। सोनी ने रामचरन को आत्ममंथन के लिए प्रेरित किया। झोपड़ी के पास पड़े घूरों की जमीन को सबने मिलकर एक बगिया में बदल दिया। यह बगिया अब उनके आजीविका का जरिया भी बन गई। इस तरह लॉकडाउन उनके लिए वरदान बन गया। कहानी में झुग्गी झोपड़ी के वातावरण का जीवंत चित्रण है। भाषा में प्रवाह और चित्रात्मकता है। कहीं–कहीं तंज़ और व्यंग्य भी मुखर हो रहा है। मूल रूप से कहानी प्रेरक है। आदमी चाहे तो वह अभिशाप को वरदान में बदल सकता है, यही कहानी का प्रतिपाद्य है।

– गोविंद सेन, कहानीकार, मनावर–454446 (म.प्र.)

❍ ❍ ❍

9

उदास क्यों रहती है जोजो

आज बहुत उदास है जोजो। जोजो जब उदास होती है, इसी तरह चर्च के दाहिनी तरफ बने छोटे से सरोवर के किनारे पड़ी बेंच पर घंटों बैठी रहती है, शून्य में ताकती, उड़ती तितलियों को निहारती तथा बत्तखों के बच्चों को अठखेलियाँ करते देखते हुए। जब मन शांत हो जाता और चर्च में चहल–पहल बढ़ने लगती तो उठ कर प्रार्थना में भाग लेने चली जाती। कभी मन नहीं होता तो अपने कमरे में आ जाती।

फ़ादर एटकिंस जब भी उसे इस तरह बैठे देखते हैं वह समझ जाते हैं कि जोजो आज फिर किसी बात को लेकर आहत हुई है। वह विह्वल है। वह उसे टोकते भी नहीं है क्योंकि वह समझ चुके हैं कि जोजो के मन को शांति इसी बेंच पर एक–दो घंटे गुजारने के बाद अक्सर मिल जाती है। वह पहले कितनी बार जोजो से कह कर देख चुके हैं कि "डियर चाइल्ड, मन जब व्यथित हो, कुछ सूझ न रहा हो कि क्या करें, कोई ऐसी गलती हो गई हो जो तुम्हें खुद समझ में न रही हो, तब तुम ईशू के पास जाकर उनसे बात किया करो। अपनी जानी–अनजानी गलतियों के लिए कन्फेस करना सीखो। ईशू बहुत दयालू हैं वह सब पर दया करते हैं।" पर जोजो "फादर जब समय आएगा कन्फेस जरूर करुँगी" कह कर सरोवर किनारे लगी बेंच पर बैठ जाती।

कौन है जोजो। जोजो यानि कि जोसलिन जो। वह जब बमुश्किल चार पाँच दिन की रही होगी तभी कोई उसे चर्च के बाहर छोड़ गया था। किसी अभागी माँ की औलाद है जोजो। फादर एटकिंस ने प्रशासनिक औपचारिकताएँ पूरी कर उसे चर्च में ही रख लिया था। सिस्टर रचैल के रूप में उसे मदर और पालनहार मिल गया। जोजो चर्च में रहने वाले दूसरे बच्चों से शीघ्र हिल मिल गई पर वह खेलते, उछल–कूद करते अक्सर कहीं खो जाती। बच्चे उसे "ओए जोजो, क्या हुआ, कहाँ खो गई" कहते हुए झूमाझटकी कर बैठते। दिन बीतते गए। जोजो अठारह वर्ष की हो गई। दोपहर में चर्च में उसके लिए विशेष प्रार्थना रखी गई थी। केक काटा गया

और फिर बच्चों का रंगारंग धमाल शुरु हो गया। चर्च में रहने वाले हर बच्चे का जन्मदिन वहाँ इसी तरह मनाते हैं। यह परम्परा फादर एटकिंस ने शुरु की थी। उनका मानना है कि सामाजिक मर्यादा के खिलाफ जाकर जन्में इन बच्चों के हिस्से में जितनी खुशी आ सके उसके लिए प्रयास करते रहना चाहिए।

जोजो को कोई मानसिक बीमारी नहीं है। उसका पूरा चेकअप मिशन अस्पताल में एकाधिक बार हो चुका है। वह पढ़ने में बहुत अच्छी है। कक्षा में हमेशा पहले या दूसरे स्थान पर आती है। प्रकृति से उसे सहज लगाव है। सुंदर लैंडस्केप बनाती है। बड़ी हुई तो उसकी पेंटिंग में यदा–कदा पेड़ों से झरते पत्तों के बीच उदास लड़कियों के चेहरे दिखाई देने लगे। क्यों? इसका उत्तर जोजो के भी पास नहीं है। ये चित्र अनायास बन जाते हैं। सायास बनाना चाहे तो नहीं बना पाती। जोजो चपल भी बहुत है। हर काम तेज गति से करती है। उसके साथी कैम्पस ग्राउंड में ही बैडमिण्टन या क्रिकेट खेलते है लेकिन उसे खो–खो खेलना पसंद है। उसके साथी जो–जो और खो–खो की तुक मिलाकर अक्सर उसे छेड़ते रहते हैं – देखो जोजो, खेलने चली खोखो या ऐसा ही कुछ और।

उस दिन जोजो के हाथों में एक अखबार था जो आते समय वहीं बेंच के नीचे छूट गया था और जोजो उठाना भूल गई थी। अगले दिन सफाई कर्मचारियों को मुड़ा–तुड़ा वह अखबार वहाँ पड़ा मिला तो जैनी समझ गई कि यह अवश्य ही जोजो का होगा। उसने उसे ले जाकर मदर रचैल को दे दिया। मदर ने उस समय तो ध्यान नहीं दिया लेकिन उसे जोजो को देने के लिए रख लिया।

दिन बीतते रहे जोजो का अचानक उदास हो जाना जारी रहा। अंदर का तूफान जब ज्यादा मचलने लगता, वह उसी सरोवर के किनारे आकर बैठ जाती। इतने सालों में उसने समझ लिया है कि प्रकृति में हर दुख को हरने की अपरिमित क्षमता है। फूल, तितलियों, चिड़ियों और बत्तखों के बीच कुछ समय बिताने से उसका मन शांत हो जाता है। प्रफुल्लित भले ही न लगे पर संयमित नजर आने लगती है जोजो। कई बार वह सोचती है कि उसे फादर की बात माननी चाहिए, वैसे हर बात मानती है उनकी, पर न जाने क्यों उनके कहने पर ईशू के सामने कन्फेस करने की हिम्मत नहीं जुटा पाती। सोचती है किस बात के लिए कन्फेशन करूँ, उसने कुछ किया भी तो नहीं, ईशू दयालू हैं तो क्या बात–बात पर ईशू को परेशान करना उचित है। पर फादर नहीं समझते। कहते हैं ईशू कभी परेशान नहीं होते। हमसे अनजाने में बहुत सी गलतियाँ हो जाती हैं जिनके बारे में हमें उस समय पता नहीं चलता, ईश्वर के सामने कन्फेस करने से मन को शांति मिलती है। मन हल्का हो जाता है। मन में मानव–कल्याण का भाव आ जाता है। सब कुछ भला लगने लगता है। जोजो को यह सब तो सरोवर के किनारे मिल जाता है। जिस दिन उसे

वहाँ शांति नहीं मिलेगी उस दिन वह जरूर ईशू के सामने कन्फेस करने जाएगी। पर फिर दुविधा, कन्फेस करेगी या ईशू से पूछेगी कि उसका मन इतना अस्थिर क्यों है, इतनी जल्दी विचलित क्यों हो जाता है। मन तो होता ही चंचल है। ईशू मन की प्रकृति को क्यों बदलना चाहेंगे? उसे शांत रखने की कोई अदृश्य प्रेरणा ही दे सकते हैं वह। तो उसे पता है मन को कहाँ शांति मिलती है? जोजो मन ही मन सोचती बहुत है और फिर उनके तार्किक उत्तर भी मन में ही खोज लेती है।

मदर रचैल अगले दिन दोपहर में जोजो के कमरे में वह मुड़ा–तुड़ा अखबार रखने गईं। जोजो उस समय कॉलेज में थी। डायरी के बीच में वह अखबार रखकर पलटी ही थीं कि डायरी से कुछ और पेपर की कटिंग्स नीचे आ गिरीं। मदर ने उन्हें उठाया, मन में उत्सुकता जगी कि देखें क्या कटिंग्स हैं ये, पर उन्हीं ने जोजो को सिखाया था कि किसी दूसरे व्यक्ति की चीजें उसकी अनुमति के वगैर नहीं छूनी चाहिए। उन्होंने सभी कटिंग्स को सम्भाल कर डायरी में रख दिया। रखते–रखते एक कटिंग की हेडलाइन पर न चाहते हुए भी उनकी नजर पड़ गई – 16 दिसम्बर 2012 को घटित निर्भया कांड के समाचार की कटिंग थी वह। इसके बाद तो रचैल ने सारी कटिंग्स उलट–पुलट डाली। हर कटिंग में किसी न किसी के साथ हुए नृशंस बलात्कार और हत्याओं के समाचार थे। यह देखकर मदर के भीतर एक अनजाना डर समा गया कि जोजो के अवचेतन में कहीं यह बात तो घर नहीं कर गई कि वह किसी बलात्कारी की संतान है। बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तो उन्हें स्वतः ही समझ में आने लगता है कि वे या तो अनाथ हैं या नाजायज। जोजो ने भी खुद के बारे में ऐसी ही धारणा बना ली है शायद। मदर के सामने जोजो के अचानक उदास हो जाने के अनेक प्रकरण साकार होने लगे। उन्हें जोजो की उदासी का कारण समझ में आने लगा। जोजो जब भी ऐसे समाचार पढ़ती होगी तो अंदर से विह्वल हो जाती होगी और उदासी के अंधेरों में भटकने लगती होगी। "जोजो से बात करूँगी शाम को", सोचा मदर ने फिर विचार बदल दिया – "ये ठीक नहीं होगा, फादर को पहले बताना चाहिए। वह कोई न कोई रास्ता जरूर सुझाएँगे। वही जोजो को उदासी के इस भँवरजाल से बाहर ला सकते हैं।"

"अभी अनुमान के आधार पर जोजो से बात करना उचित नहीं होगा, वह बच्ची नहीं है अब, कॉलेज में पढ़ती है, उसके पास स्वयं का भला–बुरा समझने की प्रतिभा है, हम उससे अपने मन की शंका के समाधान के लिए गैरवाजिब प्रश्न नहीं पूछ सकते। हमें इंतजार करना चाहिए और जोजो पर नजर भी रखनी होगी। यदि रेप केसेज के साथ उसकी उदासी का कोई स्पष्ट दृष्टांत सामने आता है तो हमें हर स्थिति पर विचार करके ही कोई रास्ता खोजना होगा" – फादर ने मदर रचैल को समझाया, जिनने शाम की प्रेयर के बाद फादर को पूरी कहानी सुनाई थी।

"जी फादर" – कहकर मदर चुप हो गईं।

"तुम नील को जानती हो मदर, वह जोजो के साथ अक्सर दिखाई देता है, संडे प्रेयर में भी दोनों साथ ही आते हैं आजकल .. सावधानी से पता करो कि जोजो ने कभी उससे अपनी परेशानियों के बारे में कुछ शेयर किया हो" – फादर ने चलते हुए मदर रचैल से कहा।

"जी फादर, नील वेलिंगटन स्कूल की बायोलॉजी टीचर मार्था का बेटा है। उसके पिताजी आर्मी में थे जो 2003 या 2004 में अखनूर में फौजी शिविर पर हुए आतंकवादी हमले में शहीद हो गए थे। नील स्कूल के दिनों से जोजो का दोस्त है। दोनों एक ही क्लास में पढ़ते थे। आजकल वह बी.बी.ए. कर रहा है।"

"मदर, तुमको तो नील के बारे में इतनी जानकारी है, किससे पता चला ये सब"

"जोजो ने ही बताया है .. नील उसे पसंद करता है और वह नील को"

"तो जोजो नील से जरूर अपनी बातें, परेशानियाँ और खुशियाँ शेयर करती होगी .. अगले रविवार को जब नील चर्च में आए तो मुझे मिलवाना उससे"

"जी फादर"

रविवार को नील अपनी माँ के साथ चर्च आया। मदर रचैल उससे बात करने का मौका तलाश कर पाती, उससे पहले ही जोजो सामने आ गई। बोली – "मदर, प्रेयर के बाद मैं नील के साथ मार्केट जाऊँगी, मुझे पेन्टिंग का कुछ सामान लेना है। मेरे फिल्बर्ट और मॉप ब्रश खराब हो गए हैं .. कुछ पेस्टल कलर्स और ड्राइंग शीट्स भी लेनी हैं।''

"ओके माई चाइल्ड" – मदर बोली। यह कहने के अतिरिक्त उनके पास कोई विकल्प भी नहीं था। अब उन्हें अगले रविवार का इंतजार करना था।

जोजो लौट कर आई तो कुछ ज्यादा ही अपसेट थी। वह उदास नहीं थी इस बार, उदास होती तो सरोवर किनारे जाकर बैठ जाती। वह अपसेट थी। उसने लापरवाही से सामान टेबल पर रखा और अपने कमरे में चली गई। मदर रचैल को अचम्भा हुआ। जोजो, जो हमेशा नील के साथ वक्त बिताकर खुश नजर आती थी, आज वह नाराजगी से भरी हुई थी। मदर से रहा नहीं गया, उनके हृदय की धड़कनें बढ़ने लगी। वह जोजो के कमरे में आ गईं – "क्या हुआ डियर चाइल्ड, तुम इतना अपसेट क्यों हों।"

"मैं आपको नहीं बता सकती मदर" – कहते हुए जोजो मदर से जोर से लिपट गई और सुबकने लगी। मदर चुपचाप उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए मौन सान्तवना दिए जा रहीं थी। यह पहला मौका था जब जोजो इस तरह से मदर

के सामने फूट–फूट कर रो रही थी। मदर सोच रहीं थी, "नील ने ऐसा क्या कह दिया होगा जिसने जोजो को इतना दुखी कर दिया।" फिर उनने अपने सोच की दिशा बदलने की कोशिश की – "शायद कुछ अच्छा होने जा रहा है। आँसुओं के साथ यदि जोजो के अंदर के तूफान ने भी बाहर निकलने का रास्ता खोज लिया तो सब कुछ ठीक हो जाएगा। उसे जी भर कर रो लेने दो। इस समय उससे कुछ कहना उचित नहीं है उसे केवल स्नेहिल और अपनत्व के स्पर्श की जरूरत है।" मदर बीच–बीच में उसकी पीठ सहलाते हुए उसके आँसू भी पोछती जा रही थी।

जोजो सुबकते–सुबकते कब सो गई, मदर को पता ही नहीं चला। वह उसका सिर अपनी गोदी में रखे, डायरी में रखी कटिंग्स के बारे में सोच रही थी कि "कौन सा सूत्र पकड़ कर जोजो से इस बारे में बात की जा सकती है। उन कटिंग्स में केवल बच्चियों के साथ हुए बलात्कार के समाचार ही नहीं थे अपितु लिंचिंग, ऑनर किलिंग और लव जिहाद सहित बहुत सी अमानवीय घटनाओं के समाचार भी थे। कुछ कटिंग्स महिलाओं के लिए संघर्ष करने वाली मानसी प्रधान और मलाला युसुफजई जैसी सख्शियतों के बारे में थी तो कुछ में महिलाओं के विरुद्ध क्राइम के आंकड़ों की पड़ताल थी। इन सब कटिंग्स के बारे में मदर जब भी सोचती, डर से भर जाती – "जोजो क्यों ये सब सहेज कर रखती है, क्या चलता रहता है उसके मन में। उस जैसी प्यारी बच्ची को क्या लेना–देना इन बातों से।" सोचते–सोचते मदर उसके भविष्य को लेकर शंकित हो उठती।

जोजो रात भर सोती रही। सुबह उठी तो अपेक्षाकृत तरोताजा थी। मदर ने उसे आवाज दी – "जोजो, मैंने भी अभी तक कॉफी नहीं पी है, सोच रही थी, तुम उठोगी तो साथ में पिएगें।"

"माई स्वीट मदर, हाऊ गुड आर यू, मेरा इतना ख्याल रखती हो और मैं हमेशा आपको दुखी कर देती हूँ" – जोजो बोली – "आज मैं कॉफी बनाती हूँ"

मदर को सुनकर अच्छा लगा। उनके अंदर से आवाज आई – "अब चिंता की बात नहीं है, जोजो बदल रही है, उसने अपने अंधेरों से निकलने का प्रयास शुरु कर दिया है।"

"मदर, आपसे कुछ पूछना है"

"फील फ्री माई डियर, जो कहना चाहती हो कहो"

"मैं कौन हूँ"

सुनकर क्षणभर के लिए आवाक रह गईं मदर। फिर खुद को संभालते हुए बोली – "तुम ईश्वर की सबसे सुंदर कृति हो और मैं इस दुनिया की सबसे सौभाग्यशाली माँ हूँ।"

"मैं जानती हूँ मदर, मुझे इससे इंकार नहीं है कि आप दुनिया की श्रेष्ठतम माँ हैं पर मन है कि तरह तरह के प्रश्न करता है। कभी लगता है कि नाजायज संबन्धों से जन्मी सन्तान हूँ मैं .. तो कभी बलात्कार की शिकार किसी बेबस माँ की कोख से उपजी अभागी औलाद हूँ, आप बताइए मदर, मुझे अब कतई बुरा नहीं लगेगा .. मैंने इस दुनिया के बहुत से गंदे और उजले चेहरों को देख लिया है"

"मुझे खुद भी नहीं पता कि सच क्या है, सच पता चलता भी कैसे, पता करने की जरूरत ही नहीं समझी कभी .. यहाँ जो आता है उसे ईशू का उपहार समझ कर रख लिया जाता है .. तुम्हें हमसे कोई शिकायत है तो जरूर बोलो, पर ये मन से निकाल दो मेरे बच्चे कि तुम अभागी हो, नाजायज हो। हर बच्चा ईश्वर का प्रतिरूप है जिसे पाकर हम धन्य महसूस करते हैं" – मदर भावविह्वल होते हुए बोली।

"आप सही कहती हैं मदर, आज के बाद कभी ये बात अपने दिल में नहीं आने दूँगी .. प्रॉमिस है मेरा" – जोजो चिरपरिचित अंदाज से भिन्न स्वर में बोली।

सुनकर मदर रचैल के चेहरे की आभा द्विगुणित हो गई। जोजो के शब्दों का जादुई असर हुआ उनपर। "थैंक्स माई डियर" ही कह सकीं वह। जोजो ने उठकर उन्हें पानी पिलाया और उनकी गोदी में सिर रखकर बैठ गई। मदर उसके घुँघराले बालों में अपनी उँगलियाँ फिराने लगी।

"मदर, फादर हमेशा कहते हैं कन्फेस करने को, तो मैं सोचती थी फादर ऐसा क्यों कहते हैं .. कन्फेशन तो गलतियों का होता है, बुरी आदतों का होता है, पापों का होता है। मुझे लगता था मैंने कभी कोई गलती की ही नहीं, कोई बुरी आदत भी नहीं है मुझमें। अब सोचती हूँ कि शाम की प्रेयर के बाद प्रभु से कन्फेस कर लूँगी .. बहुत दुख दिया है मैंने आपको, मदर .. माँ"

"नहीं बच्चे, माँ केवल तभी दुखी होती है जब उसका बच्चा दुख में हो, माँ तो बच्चे की एक झलक देखकर ही प्रफुल्लित हो जाती है"

"आप सचमुच महान हैं माँ"

जोजो के मुँह से बार–बार अपने लिए माँ का संबोधन सुनकर मदर भावुक हो उठीं। उनके लिए जब अपनी भावनाएँ छुपा पाना मुश्किल हो गया, तो बोली – "आज कॉलेज नहीं जाना क्या"

"आज की छुट्टी, आज मैं पूरा दिन आपके साथ बिताना चाहती हूँ, यहाँ इसी तरह बैठे–बैठे" जोजो फिर कुछ सोचते हुए बोली – "आपके मन में भी बहुत से प्रश्न होंगे लेकिन आप पूछ नहीं रही हैं, आपको कितना विश्वास है अपनी बेटी पर"

"विश्वास और प्रेम दो ही चीजें इस दुनिया की अमूल्य निधि हैं, जिसके पास ये दोनों निधियाँ हैं उससे अधिक धनी कोई और व्यक्ति इस दुनिया में नहीं है .. सच है मैं बहुत कुछ जानना चाहती थी तुमसे, पर अब मैं तुम्हें दुखी देखना नहीं चाहती, तुम सदा खुश रहो मेरे बच्चे"

"लेकिन माँ से कुछ छुपाना भी नहीं चाहिए .. मैंने अपनी जिंदगी से बहुत कुछ सीखा है .. सब कुछ शायद मैं आपको खुलकर बता भी नहीं सकूँगी, पर आपका जानना भी जरूरी है" जोजो उठी और अपने कमरे में जाकर अपनी डायरी उठा लाई – "इसमें आपको सारे प्रश्नों के उत्तर मिल जाएँगे .. आप जब समय मिले पढ़िए इसे .. मैं ब्रेकफास्ट तैयार करती हूँ"

जोजो किचन में चली गई। डायरी का पहला पृष्ठ खोलते हुए मदर रचैल के हाथ काँप रहे थे। उन्होंने ईशू का स्मरण किया और पहला पन्ना पढ़ने लगी।

अक्टूबर 7, 2012 : मेरा 10वाँ जन्मदिन। पहली बार मेरे मन में आया कि पता नही मेरे जन्म की ये तारीख सही भी है या नहीं। मेरी दोस्त रोजी ने समझाया तुम्हें इससे क्या फर्क पड़ता है। फादर कबसे तुम्हारा जन्मदिन इसी दिन मनाते आ रहे हैं फिर इस बार इतना क्यूँ सोचना, इस बारे में। शाम को सबने मिलकर बहुत एन्जॉय किया।

अक्टूबर 9, 2012 : मेरी जिंदगी का सबसे खराब दिन है यह, मैं कमरे में पड़ी–पड़ी बहुत देर तक फूट–फूट कर रोती रही। शाम को पहली बार सरोवर के किनारे बैठ कर दो घंटे से अधिक सोचती रही। बच्चियों की शिक्षा के पक्ष में आवाज उठाने के लिए तालिबानी आतंकवादियों ने 15 साल की लड़की मलाला युसुफजई के सिर में गोली मार दी थी। मैं उस दृश्य की कल्पना करके ही सिहर गई थी। क्यों जन्म लेती है लड़कियाँ ऐसे संसार में जहाँ उनको पढ़ने के लिए भी संघर्ष करना पड़े।

अक्टूबर 15, 2012 : एक सप्ताह लग गया मुझे इस सदमे से बाहर आने में। आज रोजी ने मुझे यू–ट्यूब पर मलाला पर बनी फिल्म "ए स्कूलगर्ल्स ओडिसी" दिखाई। मलाला को सलाम करने का जी चाहा और इस उपक्रम में मैंने रोजी के गालों को चूम लिया।

फिर कुछ खाली तारीखें या एक–दो पंक्तियों में सामान्य सी बातें। दिसम्बर की 16 तारीख पर उनकी नजर ठहर गई। बड़ी सी दास्तान लिखी थी उस पन्ने पर। दिल्ली रेप कांड का दिन था वह। निर्भया कांड के नाम से जो वर्षों सुर्खियों में रहा था। जोजो के शब्दो में "मुझे जब पता चला कि इस घिनौने कार्य को अंजाम देने वालों में नाबालिग भी शामिल हैं तो मुझे कितना आघात पहुँचा है कह नहीं सकती। शेम ऑन यू।"

"मुझे उदास देखकर फादर ने आज फिर कहा है कि ईशू के सामने जाकर कन्फेस करो, सारी परेशानी दूर हो जाएगी। अब फादर से कैसे कहूँ कि ऐसी दुनिया ईशू बनाते ही क्यों हैं।"

फिर कुछ खाली तारीखें या यार–दोस्तों की बातें। शैतानियों का वर्णन, स्कूल फंक्शन का उल्लेख, रोजी की सिंगिंग की तारीफ और क्लास में प्रथम आने की खुशी का जिक्र। अगले बर्थ डे पर डेनिस का विशेष उल्लेख। डेनिस उसके साथ ही पढ़ता था और बेसबाल का अच्छा खिलाड़ी था। जोजो लिखती है – "डेनिस ने मुझे ग्रीटिंग कार्ड और कैडबरी की बड़ी चॉकलेट गिफ्ट में दी, मुझे अच्छा लगा। रोजी भी मेरे लिए पेस्टी लेकर आई थी जिसे हम तीनों ने मिलकर खाया। दोपहर के केक–कटिंग, सिंगिंग व डांस कार्यक्रम को सबने खूब एंजाय किया।"

"अगले दिन रोजी ने यह कहकर मेरे होश उड़ा दिए कि डेनिस से दूर रहा करो, वह अच्छा लड़का नहीं है।" उसने रोजी की छातियों पर हाथ रखते हुए कहा था, टेबल टेनिस की गेंद सरीखी हैं अभी और बेशर्मी से हँस दिया था। कितना पीड़ादायी होता है ऐसी स्थितियों से गुजरना और फिर मन को वापस स्थिर कर पाना। कई दिनों तक मेरे दिमाग में रोजी के कहे शब्द गूँजते रहे थे। मेरे बारे में भी उसके इतने ही गंदे ख्यालात होंगे। जब 12–13 साल के लड़के के मन में भी ऐसी गंदगी भर सकती है तो क्या हर मर्द औरत को केवल उपभोग की ही दृष्टि से देखता है। मेरे न कोई भाई है और न ही पिता का सान्निध्य मिला है मुझे, मैं कभी उनके वात्सल्य और प्रेम को समझ ही नहीं पाऊँगी। मुझे पहले ही डेनिस के बारे में समझ जाना चाहिए था जब वह बार–बार बेढंगे जोक सुना कर मुस्कराने लगता था। एक बार तो उसने सुनिधि मैडम व बैंजामिन सर के करैक्टर पर उँगली उठाई थी। मुझे उससे तभी दूर हो जाना चाहिए था पर गलती हुई है मुझसे .. लेकिन क्या ये सच में मेरी गलती है या इस समाज के विद्रूप होते चेहरे की खौफनाक सच्चाई इस तरह सामने आ गई थी।"

पढ़ते हुए मदर की आँखे गीली हो गई। नैपकिन से पोछते हुए मदर ने पन्ना पलट दिया।

इसके बाद उदास होने की अनेक घटनाओं का जिक्र था जिनमें मुम्बई, कठुआ और उन्नाव रैप काण्ड से लेकर हाल में उत्तर प्रदेश, हरियाणा और राजस्थान में मासूमों के संग हुई नृशंसता की कहानियाँ थी और उन्हें लेकर राजनेताओं के घटिया बयान। दो दिन पहले की पोस्ट थी वह। मदर पढ़ने लगी – "पिछले दस–पंद्रह दिनों में घटी घटनाओं को कोई दलित और सवर्ण का मुद्दा बनाना चाहता है तो कोई ठाकुर और ब्राह्मणों के विरुद्ध षड़यंत्र निरूपित करने में व्यस्त है तो कोई हिंदु–मुसलमान का रंग देने की कोशिश में जुटा हुआ है। एक राजनेता बोल रहा है कि आपको उत्तरप्रदेश में हुए बलात्कार दिखते हैं पर राजस्थान के बलात्कारों पर चुप रहते हैं। बंद करो यह बकवास। घृणा होती यह सब देख–सुन कर। कितने अमानवीय हो गए हैं हम .. किसी को लड़की का रौंदा हुआ शरीर और लहू–लुहान आत्मा दिखाई नहीं दे रही है। धिक्कार है तुम्हें। शर्म आती है तुम्हें देखकर। खुद को इंसान समझने की शक्ति नहीं रह गई है मेरे पास।"

"मन बहुत विचलित है। सरोवर किनारे आज तीन घंटे से अधिक बैठी रही पर चैन नहीं मिला। कल रविवार है। नील से भेंट होगी तो शायद मन की बेचैनी कुछ कम हो जाए। उसके साथ समय बिताना अच्छा लगता है मुझे। कल मदर से कहकर उसके साथ मार्केट जाकर शॉपिंग करके आऊँगी।"

इसके बाद थी अंतिम पोस्ट –

"रात के तीन बजे हैं। नील के साथ सारी शॉपिंग की। इस बीच वह कई बार घड़ी की ओर देख चुका था, लगा उसे जल्दी है। शॉपिंग करके मैं किसी रेस्त्रां में बैठकर कॉफी पीना चाहती थी कि नील मेरा हाथ अपने हाथ में पकड़ते हुए बोला – 'जो, घर चलते हैं। आज ममा भी अपने किसी दोस्त के साथ गई है। कोई नहीं है घर पर .. अकेले होंगे हम दोनों .. समझ रही हो न मैं क्या कहना चाह रहा हूँ।' सुनकर मैं हतप्रभ रह गई – ये कौन सा नील बोल रहा है .. दोस्त या केवल मर्द .. दोस्त से पहले वह भी केवल एक मर्द है, यह सिद्ध कर चुका है वह। कानों पर विश्वास नहीं हुआ .. ऐसी बेशर्मी, ऐसी धृष्टता और वो भी इतनी बेबाकी से। मैंने उसका हाथ झटक दिया और चली आई। वह आवाज देता रहा .. मैं यंत्रवत् चलती रही .. इसके बाद मुझे ध्यान ही नहीं कि क्या हुआ। कब यहाँ पहुँची और सो गई।"

"भूख भी लग रही है। मदर सो रही हैं सो उनकी नींद में विघ्न नहीं डाल सकती। याद आता है कि बैग में डार्क चॉकलेट रखी है वही निकाल कर खा रही हूँ। अब मैं भयमुक्त हूँ .. सारा डर, सारी उदासी जाती रही। इस दुनिया में जीना है तो डर और उदासी की कोई जगह नहीं है यहाँ। निर्बल मन के साथ जानवरों के

बीच कोई नहीं रह सकता। मैं कल मदर को सब बता दूँगी और ईशू से भी कन्फेस कर लूँगी कि मैंने लोगों को पहिचानने की भूल की है। इस भूल के लिए क्षमा करें।"

मदर ने भरी आँखों से डायरी बंद करके जोजो की ओर देखा जो ब्रेकफास्ट तैयार कर डायनिंग टेबल पर लगा रही थी।

पहले पाठक का मत

जोजो एक अति संवेदनशील किशोरी है जिसे अपने अनाथ होने की पीड़ा के साथ शंका बनी रहती है कि कहीं वह भी बलात्कार की उपज तो नहीं। जोजो बहुत उदास रहती है। फादर और मदर रिचैल उसे लेकर चिंतित हैं। उसे अवसाद से निकालने की कोशिश में लगे रहते हैं। उसे उदास देखकर कर फादर उसे कन्फेशन करने के लिए कहते हैं। जोजो का जवाब उतना ही मासूम पर आध्यात्मिक चेतना को झकझोरने वाला है – "फादर से कैसे कहूँ कि ऐसी दुनिया ईशू बनाते ही क्यों हैं।" दरअसल लड़की की पवित्र चेतना में उठा सवाल है यह। उन सब चिंतनशील लोगों की चेतना से उठा सवाल है जो दुनिया को सारे अवांछित, दूषित घटनाओं से मुक्त देखना चाहते हैं और इसके लिए अपनी–अपनी तरह से संघर्ष करते आ रहे हैं। जोजो जिस नील पर विश्वास करती है तथा उसे एक सच्चा दोस्त व एक नेक इंसान समझती है लेकिन जब उसके भीतर से एक शैतान कामुक पुरुष प्रकट होता है तो जोजो को विश्वास नहीं होता कि यही उसका दोस्त है। वह घृणा से भर उठती है और फिर कन्फेशन करने को तैयार होती है कि मैंने लोगों को पहचानने में भूल की है। कहानी एक चल चित्र की तरह आँखों के आगे चलती है और बहुत सोचने को विवश करती है। यही कहानी की सफलता है।

– कुसुम भट्ट, वरिष्ठ कहानीकार, देहरादून

❍❍❍

10

सद्गति

शिवरतन यादव, आई.ए.एस.।

हमेशा सादगीपूर्ण लेकिन मान–सम्मान का जीवन जीने वाले, अपने पूरे सेवाकाल में कभी सच्चाई के पथ से नहीं डिगे, ईमानदारी से बिना भेदभाव किए सबके काम नियमानुसार करते रहे। जहाँ रहे लोगों का भरपूर प्यार मिला, उनका विश्वास जीता। पर शायद ही कोई जानता है कि अंदर से कितने अकेले और टूटे हुए हैं वह। उम्र के सातवें दशक की अंतिम पायदान पर आकर उनका यह अकेलापन और गहरा गया है तथा मन पर बोझ भी बढ़ गया है। फुरसत के पलों में अक्सर उन्हें दादी की कही एक–एक बात याद आने लगती है। दादी का दिया शाप जीवन भर उनके साथ–साथ चलता रहा है और इस मुकाम पर तो जैसे वह कुंडली मारकर ही बैठ गया है, हर पल फुफकारते हुए शाप की याद दिलाता रहता है। वह उसे पास आने से झिड़कने की कोशिश में बैजनाथ से फोन पर बात करने लगते हैं। मन ही मन उन्होंने संकल्प ले लिया है कि अब इस विचार को अपने पास नहीं फटकने देंगे।

आजकल वह अस्पताल में भर्ती हैं। धीरे–धीरे स्वस्थ हो रहे हैं। साँस लेने की तकलीफ में कमी आई है। पहले उनको जहाँ आठ लीटर से ज्यादा आक्सीजन दी जा रही थी वहीं अब उनको एक लीटर ही दी जा रही है। बीच–बीच में दो घंटे के लिए ऑक्सीजन–नलिका निकाल दी जाती है और उनको ऑब्जरवेशन में रखा जाता है। इस अवधि को भी वह निर्बाध रूप से पार कर रहे हैं। डॉक्टर परवेज ने एक हफ्ते में उन्हें पूर्ण स्वस्थ हो जाने और अस्पताल से छुट्टी देने का आश्वासन दिया है। यह डॉक्टर का ही कमाल है कि उन्होंने उनमें मानसिक रूप से टूट चुकने के बाद भी बीमारी से लड़ने की इच्छाशक्ति और ताकत पैदा की। हर दिन सुबह जब डॉक्टर राउंड पर आते हैं, उनके लिए अतिरिक्त समय निकाल कर कुछ मिनट बात जरूर करते हैं तथा अपने जूनियर व सिस्टर को विशेष ध्यान रखने के लिए

कह कर जाते हैं। शाम को एक बार उनका फोन आता ही है और जब वह "शिव जी, कैसे हैं" पूछते तो मन में छाई मुर्दनी के बादल विलोपित होने लगते हैं। सिस्टर बताती है कि हर मरीज के साथ वह एक आत्मीय रिश्ता बना लेते हैं और बहुत से मरीज तो उनकी बातों से ही आधे ठीक हो जाते हैं। तो ऐसे होते हैं कुछ डॉक्टर भी, जो डॉक्टरी को पेशे की तरह कम लेते हैं और मनुष्यता में विश्वास रखते हैं।

शिवरतन आज प्रफुल्लित हैं, सुबह के राउंड पर आए डॉक्टर परवेज उन्हें डिस्चार्ज करने के लिए कह कर गए हैं। इक्कीस दिनों के अस्पताल–प्रवास में एक अजीब सा आत्मीय रिश्ता बन गया है उनके और डॉक्टर के बीच। डॉक्टर ने अपना व्यक्तिगत नम्बर भी उन्हें दिया है और जब भी आवश्यकता लगे निःसंकोच बात करने के लिए कहा है। एक अपरिचित डॉक्टर से उन्हें इतना अपनापन मिला और अपनों ने पल में ही उन्हें पराया बना दिया था। वैसे भी अपरिचित और जरूरतमंद लोगों से उन्हें प्यार और आदर तो पहले भी खूब मिला है लेकिन उनके अपनों ने ही उन्हें पूरी तरह भुला दिया है। अजीब है ये दुनिया, इसकी चाल और इसके रीति–रिवाज। क्या सचमुच उनने कोई पाप किया था जिसकी छाया उम्र भर उनके पीछे लगी रही? उनके दिमाग में जीवन के उस कालखंड की स्मृतियाँ फिर से साकार हो उठी हैं जिसे वह भूलना चाहकर भी कभी भूल नहीं पाए थे। उन्होंने जैबुन्निसा से शादी क्या की, घर में तूफान आ गया था। इसका अंदेशा उन्हें पहले से था पर घर में इतनी तीखी प्रतिक्रिया होगी, इसका पूर्वानुमान नहीं लगा सके थे वह। उनका सोचना था कि घरवाले कुछ समय के लिए रुष्ट जरूर हो जाएँगे, फिर इस रिश्ते को स्वीकार लेंगे। सोच और यथार्थ में बहुत फर्क होता है। तकरीबन पैतालीस वर्षों बाद भी उनके परिवार ने उन्हें माफ नहीं किया है जबकि जैबुन्निसा को गुजरे हुए भी अर्सा बीत गया है।

दादी की कही एक–एक बात आज भी शिवरतन के कानों में चुभती है जब उनके विवाह की बात सुनकर दादी ने यहाँ तक कह दिया था कि "मेरे मरने पर शिब्बू मेरी लाश को हाथ भी न लगाने पाए। हमारे सात जन्मों के अर्जित पुण्यों को चौपट कर दिया है इस म्लेच्छ ने। इसने यदि धोखे से भी छू लिया तो सद्गति तो दूर पता नहीं कितनी योनियों में और भटकना पड़ेगा .. इसने ऐसा पाप किया है कि इसे पानी देने वाला भी नहीं मिलेगा और सद्गति अगले सात जन्मों के बाद भी प्राप्त नहीं होगी।"

शिवरतन की कल्पना से परे था यह सब। दादी जिनके सबसे ज्यादा दुलारे थे वह, उनने इतने कठोर शब्द भी बड़ी सहजता से कह दिए थे। ऐसा शाप भी कोई अपनों को देता है, आज भी सोच कर मन भर आता है। नाराज अम्मा–बाबू

जी भी थे। उन्होंने जाहिरा तौर पर भला–बुरा नहीं कहा था लेकिन बाबू जी को कितना गहरा सदमा पहुँचा है यह तीन महीने बाद पता चला जब उन्हें दिल का दौरा पड़ा और वह दुनिया से विदा हो गए। दादी ने उस समय भी उन्हें घर में नहीं घुसने दिया था, उनने जिद पकड़ ली थी – "अगर इस कलमुँहे ने सोहन की लाश को हाथ भी लगाया तो मैं अन्न जल त्याग दूँगी।" शिवरतन कैसे रुकते वहाँ, सुनकर स्वयं वहाँ से चले गए थे। रास्ते में खड़े होकर उनने दूर से ही पिता की मृत देह के दर्शन किए और मन ही मन पिता से कहा था – "यदि प्रेम विवाह करना पाप है तो यह पाप मैंने किया है, आप इस पाप की छाया से मुक्त रहें। आपको सद्गति प्राप्त हो।" कहते हुए उनकी आँखें भर आईं और मुँह दूसरी ओर करते हुए फफक कर रो दिए थे वह।

एक समय था जब सारे गाँव के चहेते थे शिवरतन, आठवीं में सम्पूर्ण जिले में प्रथम आकर गाँव का गौरव जो बढ़ाया था। पंचायत द्वारा आयोजित सम्मान समारोह में पूरा गाँव उमड़ आया था आशीष देने। अम्मा–बाबू जी स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहे थे। अनपढ़ दादी ने भी आशीषों की झड़ी लगा दी थी – "सच्चे कुलदीपक हो तुम, खूब तरक्की करो, सदा खुश रहो"

आठवीं के बाद गाँव में आगे पढ़ने की व्यवस्था नहीं थी। रामरतन भैया भी पवई में रहकर ग्यारहवीं की पढ़ाई कर रहे थे। अतः शिवरतन भी आगे की पढ़ाई के लिए पवई भेज दिए गए। ग्यारहवीं वहीं से पास किया उन्होंने। 83 प्रतिशत अंक उन्हें किसी भी इंजीनियरिंग कॉलेज में एडमीशन दिलाने के लिए बहुत थे। पर दादी ने रीवा, ग्वालियर या जबलपुर कहीं भी भेजने से मना कर दिया था – "नजरों से दूर जाकर लड़के बिगड़ जाते हैं" उनका एक ही तर्क था – "दुर्गा दीदी का पोता बाहर पढ़ने गया और मारपीट के चक्कर में दो दिन जेल की हवा खा आया .. भाड़ में जाए ऐसी पढ़ाई जिसमें जेल जाना पड़े।" पिताजी कभी उनकी बात नहीं टालते थे सो ये बात भी मान गए। पन्ना में बी.एससी. में एडमीशन हो गया। छतरपुर से फिजिक्स में एम.एससी. पास कर पी.एस.सी. की परीक्षा दी तो पहले ही अटेम्प्ट में डिप्टी कलेक्टर के लिए सेलेक्ट हो गए।

लालबहादुर शास्त्री संस्थान में ट्रेनिंग के दौरान ही उनकी भेंट जैबुन्निसा अख्तर से हुई थी। पहली नजर में ही दोनों ने अपने भीतर कुछ अलग किंतु सुखद सा महसूस किया। तीन माह की ट्रेनिंग के दौरान दोनों एक दूसरे के काफी नजदीक आ गए। जैबुन्निसा गाहे–बगाहे उनके सपनों में आकर उनकी नींद हर ले जाती। जैबुन्निसा के साथ भी कुछ–कुछ ऐसा ही हो रहा था। शिवरतन भी उसके सपनों में जाकर उसकी नींद अपने साथ ले आते। दोनों और पास आए तो सपनों की

बातें शेयर करने लगे और फिर सपने हकीकत में बदलने के सपने देखने लगे। ट्रेनिंग के बाद जब उनके पोस्टिंग ऑर्डर निकले तो दोनों सुखद आश्चर्य से भर गए। दोनों की पोस्टिंग रतलाम हुई थी। इस संयोग ने उनकी इस मान्यता को बल प्रदान किया कि उनका मिलन अप्रत्याशित नहीं है, उनके सपने केवल सपने नहीं हैं .. भविष्य की तस्वीर हैं। ऊपरवाले ने भी तो उनके साथ पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगा दी है। वह भी नहीं चाहता कि जिस जोड़ी को उसने बनाकर भेजा है वह अलग–अलग शहरों में रहें।

दोनों दो साल रतलाम में रहे। पोलो ग्राउंड के पास ही दोनों ने अगल–बगल घर ले लिए थे। जैबुन्निसा उनके लिए लंच बनाकर ले आती लेकिन शाम को वह घर पर स्वयं खाना पकाते। पढ़ाई के दौरान अकेले रहते हुए उनने खाना बनाना सीख लिया था। दो साल बाद शिवरतन की पोस्टिंग उज्जैन हो गई। अलग होने से पहले दोनों ने एक होने का निर्णय कर लिया। दोनों ही जानते थे कि उनके घरवाले इस रिश्ते के लिए कतई तैयार नहीं होंगे पर यह विश्वास भी था कि कुछ समय की नाराजगी के बाद उनके रिश्ते को स्वीकार लेंगे। शिवरतन ने रामरतन भैया को चिट्ठी लिखकर हिंट दे दिया था। प्रत्युत्तर में "आज के बाद संबंध समाप्त" का ह्रदय विदारक पत्र पाकर भी उनने उसे गंभीरता से नहीं लिया था। उन्हें लगा था कि भैया केवल डराने के उद्देश्य से यह बात कह रहे हैं ताकि वह ऐसे किसी रिश्ते में बँधने से पूर्व ही पीछे हट जाए। दादी के बारे में तो उन्हें पता ही था। उनका छुआछूत में इतना अधिक विश्वास था कि वह धोबी तक का छुआ पानी नहीं पीती थीं। उनके जैबुन्निसा को स्वीकारने का सवाल ही नहीं था।

जैबुन्निसा के घर का आलम भी अलग नहीं था। उसके चचा जान मोहल्ले की मस्जिद के इमाम थे। भाई वैसे तो इंजीनियर था, प्रगतिशील विचारों का भी था लेकिन जबसे चच्चा ने उसे उसकी पसंद की लड़की से निकाह नहीं करने दिया था तबसे उसके व्यवहार में भी कट्टरपन आ गया था। भाई जिस लड़की को चाहता था, वह मुस्लिम समुदाय की ही थी – मेहर बेग, लेकिन चच्चा नहीं चाहते थे कि उसकी शादी बेग में हो। उनने उसके लिए चच्ची की बहिन की बेटी को पसंद कर रखा था। अब्बू के न रहने पर चच्चा ने उन्हें काफी सहारा दिया था अतएव अम्मी भी हर काम चच्चा की सलाह से ही करती थीं। चच्चा किसी भी स्थिति में उसके रिश्ते को स्वीकार नहीं करेंगे, यह तय था और अब तो भाई पर भी संदेह था कि उसका पक्ष लेगा। उसने भी तो भाई के लिए चच्चा का विरोध नहीं किया था, अब किस हक से भाई से अपेक्षा रखे।

दोनों को अहसास हो गया था कि वर्फ आसानी से नहीं पिघलने वाली। वर्फ पिघलाने की कोशिश करना भी अभी बेवकूफी होगी। अतएव दोनों ने कोर्ट

मैरिज कर ली। साथियों ने गवाह के रूप में हस्ताक्षर किए और कलेक्टर ने दोनों को समाज के सामने अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए बधाई के साथ शाबाशी भी दी।

शादी के ढाई महीने बाद हिम्मत करके शिवरतन ने भाई को पत्र लिखा कि उन्होंने शादी कर ली है और वह अपनी बीबी के साथ सबसे मिलने आना चाहते हैं। जवाब में जो खत आया उसने उनके पैरों के नीचे से जमीन खिसका दी। दादी ने गुस्से में जो जो कहा होगा भैया ने वैसे ही लिखकर भेज दिया था और अंत में हिदायत भी दी थी कि यहाँ आने की वह सोचे भी नहीं। कुछ दिन और गुजरे होंगे कि उनके गाँव से ट्रंककाल आया। ट्रंककाल शब्द सुनकर उन्हें लगा कि शायद घरवालों ने माफ कर दिया है और उनसे मिलना चाहते हैं। रिसीवर उठाते ही दूसरी तरफ से आवाज आई – "मैं बैजू बोलत हूँ, तुमाए पिताजी की तबियत बहुतई खराब है, शायदई बचें, तुम एक बार देख जाओ उनको"

"ठीक है बैजू .. मैं रहा हूँ"

बैजू उर्फ बैजनाथ, शिवरतन का बचपन का दोस्त। गाँव में वही एकमात्र शुभचिंतक था उनका। दो–तीन महीने में उसका पत्र आता रहता था तो घर और गाँव के समाचार मिल जाते थे।

शिवरतन ने जैबुन्निसा को खबर दी और अकेले ही गाँव के लिए निकल गए। सफर लम्बा था, उस समय उज्जैन से भोपाल के बीच केवल एक ट्रेन चला करती थी – इंदौर–बिलासपुर पैसेंजर। सुबह भोपाल स्टेशन पर उतर कर उन्होंने पन्ना के लिए बस ली। रात में ग्यारह बजे पन्ना पहुँचे लेकिन तब तक पवई के लिए उपलब्ध आखिरी बस निकल चुकी थी। बेबस हो कर उन्हें पन्ना में ही रुकना पड़ा। अगले दिन वह पवई पहुँचे और वहाँ से आठ किलोमीटर दूर अपने गाँव तक की यात्रा पहले साइकिल पर और फिर पैदल चलकर पूरी की। जब वह घर पहुँचे उस समय पिताजी की अर्थी सजाई जा रही थी। उनके पहुँचते ही वहाँ उपस्थित लोगों के बीच हलचल होने लगी। रामरतन भैया ने उन्हें वहीं रुक जाने को कहा। तब तक दादी को खबर मिल चुकी थी और फिर उनने जो कहा उसे सुनकर उनकी आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं हुई।

गाँव की न भूलने वाली यात्रा से लौटकर वह बीमार पड़ गए। जैबुन्निसा को उन्होंने सारा वृतांत सुना दिया था। जैबुन्निसा छुट्टी लेकर उनके पास आ गई। उसकी देखभाल के बावजूद पूरी तरह स्वस्थ होने में उन्हें एक सप्ताह का समय लग गया। बाबू जी के जाने के बाद अम्मा भी छः महीनों के भीतर चल बसीं। उनके परलोकगमन की सूचना तो उन्हें मिल ही नहीं सकी। यह तो बाद में पता चला

कि बैजनाथ उस समय अपने कुछ साथियों के साथ चित्रकूट पंचकोशी परिक्रमा के लिए पैदल गया था, सो वह उनको सूचना नहीं दे सका था। घरवालों के लिए वह इतना गैर हो चुके हैं, यह सोचकर वह हफ्तों परेशान होते रहे थे।

उज्जैन और रतलाम आस–पास ही थे अतएव वीक–एंड पर शिवरतन और जैबुन्निसा की मुलाकात हो जाती। लेकिन ऐसा कब तक चल सकता था। जैबुन्निसा को तीन साल रतलाम में होने वाले थे और इस बार उसके ट्रांसफर की पूरी संभावना थी। दोनों ने मंत्रालय में पोस्टिंग का आवेदन दे दिया। दोनों की किस्मत अच्छी थी कि उनके आवेदन पर उनकी पोस्टिंग मंत्रालय में अंडर सेक्रेटरी के पदों पर कर दी गई।

जिंदगी अच्छी–भली चल रही थी। दुख था तो केवल एक। शादी के बारह साल बाद भी उनकी क्यारी में फूल नहीं खिला था। जैबुन्निसा इस कारण दुखी रहती। कई डॉक्टरों को दिखा चुकी थी पर किसी भी डॉक्टर ने निष्कर्षात्मक तरीके से कुछ नहीं कहा था। शिवरतन ने भी स्वयं का चेकअप कराया किंतु सब कुछ ठीक–ठाक निकला। कभी–कभी एकांत के क्षणों में उन्हें दादी की कही बात याद आने लगती – "इसे पानी देने वाला भी नहीं मिलेगा" .. "तो क्या दादी का शाप फलीभूत हो रहा है। क्या उनकी किस्मत में औलाद का सुख नहीं है।" दूसरे ही पल वह खुद को सान्तवना देने लगते – "दादी ने उन्हें सदा खुश रहने का आशीष भी तो दिया था .. तो क्या उनका आशीष झूठा था और शाप सच्चा।" फिर सोचते – "दुनिया में सभी को संतान सुख नहीं मिलता, तो क्या वे भी अपनी दादियों के शाप से पीड़ित हैं, क्या उन्हें भी सद्गति प्राप्त नहीं होती? ये शाप–वाप कुछ नहीं होता, सब मन को उलझन में डालने के, भ्रमित करने के तरीके हैं .. जैबुन्निसा को पता चलेगा कि मैं ऐसा भी सोचता हूँ तो उस बेचारी को कितना मानसिक संताप पहुँचेगा।"

कुछ समय और गुजरा। एक दिन अचानक जैबुन्निसा बेहोश हो गई। कई दिनों से वह सिरदर्द की शिकायत कर रही थी जो दवा लेने के बाद ठीक हो जाता था। एक सप्ताह वह अस्पताल में भर्ती रही। डॉक्टर ने अनेकों टेस्ट किए और फिर शिवरतन को बुलाकर परामर्श दिया कि मैडम को एक बार दिल्ली या बम्बई दिखा आइए, हमारे यहाँ एडवांस टेस्ट्स की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं है। टाटा मेमोरियल से समय लेने में ही पंद्रह दिन लग गए। जैबुन्निसा को ब्रेन में ट्यूमर निकला। ऑपरेशन में जीवन का रिस्क था पर ऑपरेशन के अलावा दूसरा विकल्प भी नहीं था। ऑपरेशन हुआ और जैबुन्निसा नहीं रही। शिवरतन अकेले रह गए। लोगों ने दूसरी शादी की सलाह देनी शुरु कर दी। रामरतन भैया का भी पत्र आया – "देख लिया न तुमने, अपनों की हाय लगने से कभी सुकून नहीं मिलता .. कैसा कैसा

अमंगल होता है .. तुम घर आ जाओ, पश्चाताप तो हो ही रहा होगा तुम्हें .. हम तुम्हारा शुद्धिकरण करवा कर दूसरी शादी करवा देंगे"

भैया का पत्र किसी आघात से कम नहीं था। उन्होंने किसी से प्यार किया होता तो वह समझ पाते प्यार का मतलब। प्यार किसी बंधन का नाम नहीं है प्यार तो बाँधने का काम करता है, एक ऐसे अटूट बंधन में जिसे कोई नहीं तोड़ सकता, न समय और न ही परिस्थितियाँ। आज जैबुन्निसा नहीं है पर उसका प्यार तो अब भी उनके साथ है, उसकी याद करके अब भी उनकी साँसें महकने लगती हैं। ये कैसा समाज है हमारा, जो प्यार को भी बाँट कर मजहब के आइने में देखता है। गैर धर्म में शादी करो तो समाज अधर्मी कह देता है, घरवाले कुलनाशक की छाप लगा देते हैं और परिचित अजीब सा व्यवहार करने लगते हैं। फिर अधर्मी के लिए शुद्धि करण का विकल्प भी है, मन का हो न हो पर शरीर का शुद्धिकरण कराकर वापस उसी धर्म और परिजनों के बीच लौट कर पुराना स्थान पा लो। धन्य है ये समाज और इसके रीति–रिवाज, जैसे इंसान, इंसान न हो, कठपुतली हो कोई और जिसे जब चाहे तब संकीर्णता की उँगलियों में बंधे धागे से मनचाहे ढंग से नचाते रहो।

शिवरतन के लिए जैबुन्निसा को भूल पाना असह्य था। उनकी जिंदगी से जैसे रौनक ही चली गई थी। मंत्रालय से घर आते तो जैसे सारा घर ही काटने को दौड़ता। ऐसे में उनका साथ दिया बैजनाथ ने। गाँव से उसने आकर शिवरतन को संभाल लिया। उसने शादी नहीं की थी, अकेला था सो जैसे गाँव में रह रहा था वैसे ही शिवरतन के साथ रहने लगा। बैजनाथ का साथ पाकर शिवरतन के दुख की परछाइयाँ छोटी होने लगीं। उन्हें लगने लगा कि इतने बड़े संसार में उन्हें निस्वार्थ रूप से चाहने वाला अब भी कोई है।

पाँच साल बीत गए जैबुन्निसा को गए हुए। उस दिन उसका जन्मदिन था, जीवित होती तो सैतालीस साल की होती। जैबुन्निसा के हर जन्मदिन पर वह उसकी पसंदीदा चीजें बनवाते थे और उसके नाम का पहला कौर तोड़कर रख लेते थे। अनाथालय और वृद्धाश्रम में उपहार देकर आते। आज जब वह ऑफिस पहुँचे तो सभी उनका इंतजार कर रहे थे। उन्हें आई.ए.एस. अवार्ड हुआ था और उनको ट्रेनिंग के लिए शिमला जाना था।

शिमला से लौटकर उनकी पोस्टिंग कलेक्टर सतना के रूप में घर के पास ही हो गई। सुनकर बैजनाथ बहुत खुश था पर वह निर्विकार बने रहे। सतना भी उनके लिए प्रदेश के अन्य जिलों की ही तरह था, क्या घर के पास और क्या दूर। समय–समय पर कई जिलों में उनकी पोस्टिंग होती रही। रिटायरमेंट के समय वह मंत्रालय में अतिरिक्त सचिव के पद पर थे। रिटायर होने के दो माह के अंदर

ही उन्हें सरकार की तरफ से साडा में नियुक्ति का आफर आया। उन्होंने मना कर दिया। बैजनाथ ने कहा भी था "जुआइन कर लो, समय अच्छे से कट जैहे" पर उनका मन नहीं हुआ।

रिटायरमेंट के बाद दस साल गुजर गए। सारी दुनिया में एक अदने से वायरस ने हडकंप मचा रखा था। पता नहीं वह कैसे इस जानलेवा वायरस की चपेट में आ गए। दो दिन पहले वह बैंक से पेंशन लेने गए थे शायद वहीं से वायरस भी उनके पीछे–पीछे चला आया था। तीन दिनों तक घरेलू इलाज करते रहे लेकिन न बुखार उतरा, न खाँसी कम हुई। डॉक्टर को दिखाया तो उसने तुरंत टेस्ट कराने की सलाह दी। रेपिड एंटीजन टेस्ट पॉजिटिव आया, दो दिन बाद पी.सी.आर. टेस्ट की रिपोर्ट भी पॉजिटिव आ गई। डॉक्टर ने उन्हें अस्पताल में भर्ती होने की सलाह दी। यहाँ उनका आई.ए.एस. होना काम आया। पलंग की मारामारी के बीच उन्हें एक अस्पताल में प्राइवेट वार्ड मिल गया। एम्बुलेंस उन्हें लेने आई तो बैजनाथ फफक–फफक कर रो दिया। उसने उनका बैग एम्बुलेंस में रखते हुए कहा – "शिब्बू भैया, बैग में सारो सामान रख दओ है। गंगाजल की शीशी भी धरी है अगली जेब में। आप ख्याल से भोर में और रात में दो–दो बूँद गंगाजल जरूर लेत रहियो"

"गंगाजल, किसलिए बैजू"

बैजनाथ चुप रहा, कुछ नहीं बोला लेकिन उसकी चुप्पी ने बहुत कुछ कह दिया। वह जो कहना चाहकर भी नहीं कह पा रहा था, शिवरतन समझ गए – "मुझे अस्पताल जाते देखकर बहुत डर रहा है, सोचता होगा कि कहीं कुछ अनहोनी हो गई तो, अंतिम समय में गंगाजल पिएँगे तो सद्गति मिलेगी" – पागल है बैजनाथ, इतनी चिंता तो कभी उसके अपनों ने नहीं की उसकी। रामरतन भैया का बेटा ब्रजेश तीन साल तक शहर में रहकर डिप्लोमा करता रहा पर वह भी कभी मिलने नहीं आया।"

अस्पताल पहुँच कर शिवरतन ने बैजनाथ को फोन किया – "बैजू, खाना खा लिया तुमने, मैं ठीक हूँ यहाँ, तुम चिंता मत करो मैं लौटकर जरूर आऊँगा, कुछ नहीं होगा मुझे"

जिस दिन शिवरतन अस्पताल से डिस्चार्ज होने वाले थे, बैजू ने बताया कि कुछ खास मेहमान आपका इंतजार कर रहे हैं। उन्होंने पूछा भी, कौन है। बैजनाथ यह कहते हुए बात को टाल गया कि आप खुदई आके मिल लैयो।

शिवरतन एम्बुलेंस से उतरे ही थे कि पोर्च में रामरतन भैया, भाभी, ब्रजेश और कुछ और लोगों के साथ तकरीबन नब्बे साल की झुकी कमर वाली कोई अपरिचित औरत भी वहाँ लाठी के सहारे खड़ी थी।

रामरतन भैया ने आगे बढ़कर शिवरतन को गले लगा लिया – "शिब्बू तुम जीत गए, तुम्हारा प्यार जीत गया, हमारा हठ हार गया, हमें माफ कर दो .. दो दिनों से तुम्हारे घर पर रुके हैं हम लोग, सच्चे प्यार की ताकत को महसूस किया है हमने यहाँ रहकर .. प्यार को पूजा क्यों कहा जाता है समझा है यहाँ पर" फिर उनने ही शिवरतन को बाकी लोगों से मिलवाया – "ये सरफराज हैं, बहू के बड़े भाई और ये अम्मी हैं उसकी"

शिवरतन ने अम्मी के पैर छुए तो वह बहुत देर तक शिवरतन का सिर सहलाती रहीं, बोलीं – "आज मैं बेइंतहा खुश हूँ एक फरिश्ते को सामने पाकर .. अल्लाताला की शुक्रगुजार हूँ कि उसने इतनी रहमत बख्शी .. यहाँ आके लगा ही नहीं कि हमारी जैबू अब नहीं है, इस घर के हर कोने में उसकी महक बसी है, हम मजहब की चारदीवार में उलझे रहे और इंसानियत को भूल गए, खुदा रहम करे"

शिवरतन आश्चर्यचकित थे कि इन सबको कैसे पता चला कि मैं बीमार हूँ और सभी अचानक मिलने चले आए। सोचते हुए उन्होंने प्रश्नवाचक दृष्टि से बैजनाथ की ओर देखा तो वह हड़बड़ा गया – "हमने गाँव में सिरफ अपने दोस्त सियाराम को बताओ हतो, ऊने ही भैया को खबर दे दई और भैया चले आए।"

"यह इत्तफाक है कि हम यहाँ हैं। अम्मी कई दिनों से लगी थीं कि मरने से पहले एक बार दुल्हे मियाँ को देखना है, उसे देख लूँगी तो ऊपर जाकर बेटी को मुँह दिखा सकूँगी। हमसे उनका दुख देखा नहीं गया और यहाँ चले आए। आकर पता चला कि आप अस्पताल में भर्ती हैं तो हम रुक गए। अम्मी यहीं घर पर रुकी रहीं और हम होटल हजरत महल में रुकने चले गए" – सरफराज ने शिवरतन का असमंजस दूर करने के लिए पूरी कहानी सुना दी।

सभी लोग आठ–दस दिन वहाँ रहे। रामरतन भैया कमजोरी दूर होते ही गाँव आने की कहकर चले गए। सरफराज दस दिनों बाद आकर अम्मी को ले गया। उसने भी शिवरतन को घर आने का निमंत्रण दिया।

सबके जाने पर शिवरतन ने बैजनाथ को छेड़ा – "तू तो मुझे अस्पताल में ही सद्गति देना चाहता था, वहाँ कुछ हो जाता तो अपनों से कैसे मिल पाता"

"हम बहुतई डर गए हते .. टीवी में देख–देख के हमाओ डर और बढ़ गओ हतो .. वे चिल्ला चिल्ला के बतात हते कि फलानो अस्पताल गओ और फिर प्लास्टिक में लिपट के ही आओ .. घर वाले तक अंतिम दर्शनन खां तरस गए .. तो हम का करते" – बैजनाथ ने कहा – "हम जादा पढे–लिखे तो हैं नईं जो समझ पाते .. पर हमें सब समझ में आ गओ .. सद्गति कर्मकांडो से न मिले, वाके लाने अच्छो और सच्चो इंसान होवो जरूरी है "

शिवरतन के पास कोई उत्तर नहीं था। वह बहुत देर तक बैजनाथ के निःस्वार्थ चेहरे को ताकते रहे।

पहले पाठक का मत

दो धर्मों के बीच सौहार्द–कामना की दृष्टि से लिखी गई यह कहानी शिवरतन और जैबुन्निसा अख्तर के प्रेम–विवाह के उपरांत उत्पन्न विषादपूर्ण परिस्थितियों से शुरू होती हैं। अच्छी बात यह है कि इस कहानी में समाज प्रकट रूप में नहीं है। उज्जैन–रतलाम और पन्ना की पृष्ठभूमि पर कथा बारह वर्ष के प्रेममय जीवन के बीच अंतर्द्वंद की बारीक रेखा खींचते हुए आगे बढ़ती जाती है। वैचारिक धरातल पर यह कहानी शुद्ध दृष्टि से लिखी गई है जिसमें कई दृश्य जीवंतता से चित्रित किए गए हैं। बैजू का पात्र इस कथा में सम्बन्धों की गर्मी बनाकर रखता है। जैबुन्निसा के जाने के बाद भैया का पत्र आना और शुद्धिकरण की बात करने के पीछे जो मानसिकता है वह हताशा जनक है। लेकिन इन सब बातों से प्रभावित न होकर शिवरतन का अपने प्रेम के प्रति मान बनाए रखना इस कहानी को बड़े फलक पर लेकर जाता है। कहते हैं कि रचना अपने समय का दस्तावेज होती है, इस दृष्टि से भी सुखांत रचते हुए यह कहानी कोरोना काल में समाज की छटपटाहट को भी सहेजने का कार्य करती है। कहानीकार अरूण अर्णव खरे की यह कहानी भी उनकी अन्य कहानियों की तरह समाज की एक मुक्कमल तस्वीर पेश करती है।

– कान्ता रॉय, कहानीकार एवं सम्पादक (लघुकथा वृत), भोपाल

❍ ❍ ❍

11

ऋण

छाया ने जबसे सुना था कि भैया रिपुदमन सिंह बहुत बीमार हैं और अस्पताल में भर्ती हैं, तभी से वह बहुत बेचैन थी। आज बहुत राहत महसूस कर रही है। उसे सूचना मिल गई है कि भैया का वेंटीलेटर हट गया है और वह जनरल वार्ड में शिफ्ट कर दिए गए हैं।

उसे याद आ रहा है वह दिन जब गाँव से बीज खरीदने शहर आया बृजभान उससे न्यू मार्केट में टकरा गया था। उसी से रिपुदमन की बीमारी की आधी अधूरी सूचना मिली थी। क्या हुआ है उनको, ठीक–ठीक पता नहीं चल पाया था। उससे ज्यादा बात करते हुए बृजभान भी डर रहा था कि कहीं किसी ने देख लिया तो बैठे–ठाले मुसीबत सर पर आ जाएगी। उसका ऐसा सोचना सही भी था। रिपुदमन को पच्चीस साल से अधिक हो गए थे छाया से सम्बंध तोड़े हुए।

घर लौटते हुए बार–बार रिपुदमन का चेहरा छाया के सामने घूम रहा था। कहीं उसी नामुराद वायरस की चपेट में तो नहीं आ गए रिपुदमन? सोच कर जान सूखने लगी थी। कुछ दिन पहले ही उसने बिसाहू को इस बीमारी से लड़ते देखा था। सारे शरीर को तोड़ कर रख देती है। वह तो नंदन के डॉक्टर दोस्त दीपक ने बहुत मदद की थी जिससे यह बीमारी बिसाहू को निगलते–निगलते रह गई। सभी हॉस्पिटल भरे हुए थे। तमाम कोशिशों के बाद भी उसे एक पलंग तक नहीं मिल पा रहा था। ऐसे कठिन समय में दीपक ने घर पर ऑक्सीजन सिलेण्डर और स्लाइन चढ़ाने की व्यवस्था करवा दी थी। सुबह शाम फोन पर वह जानकारी लेता और आवश्यक सलाह देता रहता था। उसी के कारण आज बिसाहू जिंदा है।

छाया भी जानती थी कि रिपुदमन को उसके नाम से खासी नफरत है, वह उसकी परछाईं भी देखना पसंद नहीं करता लेकिन एक बहिन का दिल है कि मानता ही नहीं। भाई ने भले ही रक्षाबंधन का धर्म न निभाया हो लेकिन बहिन सदा रिपुदमन की खुशी और सुख–समृद्धि के लिए दुआ करती आई है। उसने रक्षाबंधन

को भेजी गई राखियों के वापस आए सभी लिफाफे संभाल कर रखे हैं। अकेले में नंदन से छुपकर रो लेती है तो जी में ठंडक महसूस करने लगती। पर बिसाहू से उसका दुख छुप नहीं पाता। वह उसे समझाता – "हरि इच्छा से ही सब होवे है छोटी मालकिन, आप नाहक परेशान होवे हो।"

उस दिन छाया का किसी काम में मन नहीं लगा। बिसाहू को उसने सब बता दिया था। उत्तर में सदा की तरह बिसाहू ने उसके दिल पर मलहम लगाने की कोशिश की थी – "हिम्मत रखो, बड़के मालिक जल्दी ठीक हुई जैहें।" जब नंदन आया तो वह बिस्तर पर लेटी विचारों के मकड़जाल में उलझी हुई थी।

"क्या हुआ माँ, तबियत तो ठीक है?" नंदन छाया के पास पलंग पर बैठ गया और माथे पर हाथ रखकर देखने लगा – "बुखार तो नहीं लग रहा, पर आप लेटी क्यों हैं, कभी आपको इस तरह लेटे नहीं देखा, दफ्तर में किसी ने कुछ कहा है क्या? मैंने तो कितनी बार कहा है कि अब मैं कमाने लगा हूँ, आप नौकरी छोड़ दीजिए"

"अरे तू नाहक चिंता करता है, मुझे कुछ नहीं हुआ है" – छाया पलंग से उठते हुए बोली – "दफ्तर जाने से मन बहल जाता है। अकेले घर में रहूँगी तो सच में बीमार पड़ जाऊँगी।"

"ठीक है माँ, जिसमें आपको खुशी मिले वह काम कीजिए" – नंदन ने कहा – "पर आप मुझसे कुछ छुपाइएगा नहीं"

"तेरे अलावा मेरा है कौन, जो छुपाऊँगी .. तू फ्रेश हो जा, बिसाहू ने बेसन घोल कर रखा है, मैं जल्दी से पकोड़े तल देती हूँ" – कहते हुए छाया किचिन में आ गई।

रात में छाया को बुरे–बुरे ख्याल आते रहे। ठीक से नींद नहीं आई। सुबह उठी तो सिर भारी था। किसी तरह नंदन का टिफिन तैयार किया। उसके जाते ही फिर लेट गई। ऑफिस जाने का भी मन नहीं हुआ। ऑफिस में बड़े बाबू को फोन कर कह दिया कि तबियत ठीक नहीं है।

"आप परेशान लग रहीं हैं छोटी मालकिन, आपको दुखी देखकर हमाओ मन भी बेचैन हो रओ है" – नंदन के जाते ही बिसाहू, छाया का हाल जानने कमरे में चला आया।

"कल जबसे पता चलो है कि भैया अस्पताल में भर्ती हैं तबई से बुरे–बुरे ख्याल आ रहे हैं" – छाया कातर स्वर में बोली।

"आप काहे चिंता करत हो, बड़के मालिक ने तो सबई संबंध तोड़ दए हैं आपसे" – बिसाहू ने छाया को समझाने के दृष्टिकोण से कहा।

"तोड़वे से कहूँ खून के रिश्ते टूटत हैं बिसाहू .. रिश्ता तो उनने तोड़ो है, हमने नहीं तोड़ो" – छाया पलंग से उठते हुए बोली – "पता चल जाए कि कौन से अस्पताल में भर्ती हैं तो एक बार मिल आएँ उनसे"

"और उनने मिलबो न चाहो तो .. आपको बहुतई दुख हुइए"

"तुम जो कायखों सोचत हो, जो सोचो कि वो हमें देख के कितने खुश हो जैहें .. तुम हमाए साथ चलो बिसाहू, हनुमान टेकरी पे मत्था टेक के आत हैं कि भैया को जल्दी ठीक कर दे"

"आपको प्यार अनोखो है छोटी मालकिन .. हम भी चाहत हैं कि वे जलदी से जलदी से ठीक हो जाएँ"

छाया मंदिर से लौट कर आई तो दिमाग में फिर वही पुरानी फिल्म चलने लगी जो रात से ही दिमाग में चल रहीं थी।

कभी उसके पुरखे जैतपुरा सहित छः–सात गाँवों के जागीरदार हुआ करते थे। जागीर तो रही नहीं पर जागीरदारों वाला मिजाज यथावत पीढ़ी–दर–पीढ़ी चला आ रहा था। रिपुदमन भी इससे अछूता नहीं था। चाल–ढाल में वही ठकुरासी ठसक और हर गाँववासी को जूतियों की नोक पर रखने की मानसिकता। जब रिपुदमन तेरह साल का था तो गाय–बैलों के सार की साफ–सफाई करने वाले हम–उम्र बिसाहू को उसने इतनी बुरी तरह पीट दिया था कि बिचारा जिंदगी भर के लिए लंगड़ा हो गया। उसकी गलती केवल इतनी थी कि वह रिपुदमन के सामने से निकल गया था और "पाँय लागूँ बड़के सरकार" कहना भूल गया था। छाया तो यह देखकर अपने कमरे में दुबक गई थी। इसके बाद अनाथ बिसाहू कहाँ गायब हो गया किसी को पता नहीं लगा। वर्षों बाद वह छाया को एक मंदिर के बाहर बेसुध हालत में पड़ा मिला था जब वह और रूपेंद्र नंदन को पहली बार मंदिर लेकर गए थे। वह उसे अपने साथ लिवा लाई थी, रिपुदमन का ऋण जो उतारना था। तबसे बिसाहू छाया के पास ही रह रहा था और घर–बाहर के कामों में हाथ बंटा देता था। छाया ने उसका घर बसाने की कोशिश भी की थी लेकिन बिसाहू की इच्छा नहीं हुई।

ऐसा निर्मम रिपुदमन छाया को बिल्कुल पिता की तरह चाहता था। उसकी हर छोटी–छोटी बात का ध्यान रखता था। कई बार वह छाया को फटफटी पर बैठाकर स्कूल छोड़ने जाया करता था जबकि घर से स्कूल बमुश्किल आधा किलोमीटर की दूरी पर ही था।

रिपुदमन खुद तो ज्यादा पढ़ा–लिखा नहीं था लेकिन छाया को पढ़ा लिखा कर किसी बड़े अफसर के साथ ब्याहना चाहता था। रिपुदमन ने किसी तरह बारहवीं

पास की थी। दो साल फेल होने के बाद मधुसूदन मास्साब ने उसे राजनगर सेंटर से परीक्षा देने की सलाह दी थी जहाँ से वह सेकेंड डिवीजन पास हो गया था। राजनगर उस समय ऐसे छात्रों को पास कराने की मंडी के रूप में विख्यात था। इस सेंटर से परीक्षा देनेवाले विद्यार्थी शायद ही फेल होते थे।

रिपुदमन भले ही शिक्षा के लिहाज से बारहवीं पास था लेकिन दुनियादारी और राजनीति के मामले में उसका कोई मुकाबला नहीं था। अक्खड़ और रूढ़िवादी तो वह बचपन से ही था, राजनीति में आकर अहंकारी भी हो गया था। छाया ने जब 11वीं पास की तब तक वह खासा राजनीतिक रसूख वाला "बड़के भैया" बन चुका था। गाँव की सरपंची अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित थी लेकिन उसकी मर्जी के बिना सरपंच कोई काम नहीं कर सकता था। यहाँ तक कि सरपंच की सील भी उसके पास रहती थी और वही गाँव में होने वाले हर काम को अनुमोदित करता था – किस पारे में नालियाँ बनेगीं, किस पारे में हैण्डपम्प लगेगा, हरिजन बस्ती में क्या काम होंगे, किसे इंदिरा आवास आवंटित होगा, किसे वृद्धावस्था पेंशन मिलेगी और कौन गरीबी रेखा के नीचे आएगा, सब कुछ उसकी मर्जी से ही होता था। सरपंच का काम केवल दस्तखत करना होता था।

छाया को आगे की पढ़ाई के लिए दमोह जाना जरूरी था। रिपुदमन को कोई आपत्ति नहीं थी, वह स्वयं चाहता था कि उसकी बहिन अपनी पढ़ाई जारी रखे। वह स्वयं छाया का एडमीशन कराने दमोह गया था और छाया के रहने की उचित व्यवस्था होने के बाद ही लौटा था। अगले दिन बृजभान अपनी विधवा बहिन सावित्री के साथ दमोह आया और छाया से बोला था – "मालकिन, बड़के भैया ने कहा है कि सावित्री जिज्जी आपके साथ यहीं रहकर आपकी देखभाल करेंगी।"

छाया से इतना प्रेम करने वाला रिपुदमन, छाया और रूपेंद्र के प्रेम को स्वीकार नहीं कर सका। इस प्रेम सम्बंध के बारे में पता चलते ही वह आपे से बाहर हो गया। वही जात–पात और ऊँच–नीच की संकीर्ण मानसिकता। ठाकुराइसी अहंकार। एक जागीरदार के घर की लड़की एक आम खेतिहर पटेल के लड़के से प्यार कैसे कर सकती है? खानदान की इज्जत मिट्टी में मिल जाने का खतरा उत्पन्न हो गया। पुरखों की शाख पर बट्टा लगने का अंदेशा मंडराने लगा। रिपुदमन को प्रेम का अर्थ न समझ में आना था न आया। उसे कहाँ पता था कि प्रेम किया नहीं जाता, हो जाता है, रूप–रंग, जात–पात, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब और हिंदु–मुस्लिम के तमाम दायरों से परे जाकर। छाया एक ऐसे खानदान से आई थी जहाँ लड़कों के लिए अलग नियम थे और लड़कियों के लिए अलग। लड़कों को स्वेच्छाचारिता की पूरी आजादी थी लेकिन लड़कियों का किसी लड़के की ओर नजर उठाकर देखना भी गुनाह था। जिस जाति के लड़के से प्यार होने पर छाया को कलंकिनी तक कह

कर पुकारा गया उससे भी नीची जाति की लड़कियों को रिपुदमन और उसके चचेरे भाइयों ने कितनी ही बार अपने दैहिक आनंद के लिए अपनी अंकशायिनी बनाया था। उस समय न खानदान को कलंक लगा था और न ही पुरखों की इज्जत धूल में मिली थी। कैसे मिलती, पीढ़ी दर पीढ़ी यही तो रीति रही है इस खानदान की। परदादा शेर प्रताप सिंह और दादा समर बहादुर सिंह से लेकर पिता रणविजय सिंह तक के कितने किस्से सावित्री चाची ने दबी जुबान से सुनाए थे उसे।

छाया सीधी–सादी लड़की थी। कॉलेज में उसकी छवि छुई–मुई जैसी थी। वह हमेशा कॉलेज में सिर झुका कर चलती थी, कौन क्या कर रहा है इससे उसे कोई सरोकार नही रहता था। उसकी सहेलियाँ उसको लड़कों के किस्से सुनाती पर उसने कभी उन कहानियों को तवज्जो नहीं दी थी। रूपेंद्र पटेल को छोड़ कर क्लास के अन्य लड़कों को वह ठीक से पहिचानती भी नहीं थी। रूपेंद्र को भी वह सिर्फ इसलिए जानती थी कि क्लास में वह सदा फर्स्ट आता था। वह रूपेंद्र की तरफ कब आकर्षित हो गई और यह आकर्षण कब प्यार में बदल गया उसे भी एहसास नहीं हुआ। जब वह सेकेण्ड ईयर में थी तो मलेरिया होने के कारण आठ दिनों तक कॉलेज नहीं जा पाई थी। तब उसने पहली बार रूपेंद्र से डरते–डरते बात की थी – "क्या आपके नोट्स मिल सकते हैं, मैं उन्हें शनिवार, इतवार में कॉपी करके सोमवार को लौटा दूँगी"

रूपेंद्र ने तुरंत अपने नोट्स छाया को दे दिए। नोट्स की कॉपी के बीच में एक कागज भी था जिसमें कुछ फिल्मी गीतों के मुखड़े लिखे हुए थे। छाया ने पढ़ा, सभी प्रेम गीत। एक गीत उसे अधूरा सा लगा – "सौ साल पहले मुझे तुम से प्यार था, आज भी है और कल भी रहेगा।" छाया ने अनजाने में ही उसके आगे जोड़ दिया – "सदियों से तुझसे मिलने जिया बेक़रार था, आज भी है और कल भी रहेगा।" इन दो पंक्तियों का ऐसा असर हुआ कि रूपेंद्र छाया से बात करने का अवसर तलाशने लगा। छाया को भी उससे बातें करना अच्छा लगने लगा। कुछ ही महीनों में दोनों इतना पास आ गए कि उन्हें एहसास होने लगा कि वे एक–दूसरे के लिए ही बने हैं। एक–दूसरे के बिना उनका अस्तित्व अधूरा है। बी.ए. पास करते–करते दोनों ने जीवन भर एक–दूसरे का साथ निभाने का संकल्प कर लिया। एम.ए. में दोनों के विषय अलग–अलग हो गए लेकिन जब मन एक हो चुका था तो मिलना–जुलना निर्बाध चलता रहा। एम.ए. प्रिवियस का एग्जाम देते ही रूपेंद्र को पी.एस.सी. की लिखित परीक्षा पास कर लेने का समाचार मिला। दो माह बाद इंटरव्यू होना था।

रूपेंद्र जनसंपर्क विभाग में सहायक संचालक नियुक्त हो गया। पोस्टिंग मुख्यालय में हुई। उसकी पढ़ाई छूट गई पर छाया से संपर्क बना रहा। शनिवार–इतवार की

छुट्टियों में रूपेंद्र दमोह आ जाता और दो दिन छाया के साथ बिता कर वापस चला जाता। इसी तरह आठ माह गुजर गए। अगली बार जब रूपेंद्र दमोह आया तो उसने छाया के सामने शादी का प्रस्ताव रख दिया। छाया भी उससे विवाह की इच्छुक थी लेकिन एकाएक निर्णय नहीं ले सकी। वह अच्छे से जानती थी कि इस रिश्ते के लिए उसका परिवार खासतौर पर भाई कभी राजी नहीं होगा, यदि उसे इस रिश्ते को मुकम्मल रूप देना है तो उसे ही दिल कड़ा करके कोई निर्णय लेना होगा। और फिर उसने एक दिन निर्णय ले लिया। उस समय सावित्री चाची अपनी भौजी के देहांत की खबर सुनकर कुछ दिनों के लिए नोहटा गई हुईं थी। छाया को यह उपयुक्त समय लगा और वह उसी दिन बिलासपुर–भोपाल ट्रेन पकड़ कर भोपाल पहुँच गई। आर्य समाज मंदिर में दोनों ने शादी कर ली। शादी जैसी बात अधिक दिन छुप नहीं सकती थी। सातवें दिन रिपुदमन अपने दल–बल सहित दरवाजे पर खड़ा था। छाया को जितना भला–बुरा कहना था उसने कहा, लेकिन रूपेंद्र से इसका अंजाम भुगतने के लिए तैयार रहने की धमकी दे गया।

एक साल गुजर गया। छाया और रूपेंद्र के जीवन में नंदन आ गया था। दोनों खुश थे। रिपुदमन से उसके बाद कोई सम्पर्क नहीं रह गया था। उस साल रक्षाबंधन से पहले छाया ने गाँव के पते पर राखी भेजी थी लेकिन "मेरी कोई बहिन नहीं है" लिखकर लिफाफा वापस आ गया था। उस दिन छाया बहुत रोई थी। उसे समझ में आ गया था कि वह अब कभी भाई का प्रेम नहीं पा सकेगी। रूपेंद्र भी छाया के दुख में दुखी था लेकिन वह चाहकर भी सांत्वना के दो बोल नहीं बोल पाया था। वह चाहता था कि छाया रोकर स्वयं ही अपने दिल के दुख को बह जाने दे।

नंदन एक साल का हुआ ही था कि रूपेंद्र का ट्रांसफर मुरैना हो गया। वह ज्वाइन करने मुरैना क्या गया कि वहाँ से वापस नहीं लौट सका। बस और डम्पर की भिड़ंत में उसकी मृत्यु की खबर मिली। छाया की दुनिया उजड़ गई। साल भर का नंदन गोद में था सो मर भी नहीं सकती थी। ऐसे में रूपेंद्र के बॉस ने उसकी बहुत मदद की और विभाग में ही अनुकम्पा नियुक्ति दिलवा दी।

शाम को नंदन जल्दी घर आ गया। उस समय बिसाहू सब्जी काट रहा था और छाया किचिन में बर्तन जमा रही थी। नंदन के हाथ में आज का पेपर था, उसे छाया को दिखाते हुए बोला – "माँ क्या आपको पता है कि मामा पाटीदार हॉस्पिटल में भर्ती हैं .. उनकी तबियत बहुत नाजुक है .. उन्हें प्लाज्मा की तुरंत जरूरत है"

बिसाहू ने चौंक कर नंदन की ओर देखा। नंदन तो कभी रिपुदमन से मिला भी नहीं था, उसकी माँ तक के लिए उसने वर्षों से अपने दरवाजे बंद कर रखे थे। पिछले पच्चीस सालों से जिस व्यक्ति ने माँ की राखी का लिफाफा तक नहीं लिया

था, उस व्यक्ति के लिए नंदन को भी चिंता हो रही है। अजीब माँ–बेटे की जोड़ी है ये। टूटे हुए रिश्ते को दिल से लगाए बैठे हैं। दूसरी ओर वह निर्दयी रिपुदमन है जिसने रिश्तों की कभी कोई फिकर ही नहीं की।

नंदन की बात सुनकर छाया चाहकर भी झूठ नहीं बोल सकी – "हाँ, पता है मुझे, पर क्या हुआ है यह नहीं मालूम .."

"कोविड हुआ है उनको, एडवांस स्टेज में जा पहुँचे हैं वह, अब केवल प्लाज्मा से उनको बचाया जा सकता है .. मैंने हॉस्पिटल फोन कर सारी जानकारी ली है"

"तुम्हारा दोस्त दीपक भी पाटीदार हॉस्पिटल में ही डॉक्टर है न, क्या हम एक बार भैया को देख सकते हैं"

"नहीं माँ, कोविड वार्ड में किसी का जाना एलाऊ नहीं है.."

"ये प्लाज्मा क्या होता है, दीपक से बोलकर दिलवा दे उनको"

"माँ प्लाज्मा किसी दूकान पर नहीं मिलता, इसे वही व्यक्ति दे सकता है जो इस बीमारी से ठीक हो चुका हो"

"राजा भैया, तो का हम भी पलाजमा दे सकत हैं" – बिसाहू बीच में बोल पड़ा। दोनों ने एक साथ उसकी ओर आश्चर्य से देखा।

"बिसाहू तुम .. तुम कैसे दे सकते हो, भैया ने तुम्हारे साथ कैसा सलूक किया था, भूल गए क्या तुम" – छाया ने कहा।

"उनने तो आपके साथ भी ठीक सलूक नहीं करो, आप तो उनकी बहिन हो, हम तो गैर हते .. फिर भी आप .. आपके कारण ही हम जिंदा हैं आज छोटी मालकिन, .. दो बार हमाई जान बचाई है आपने .. बीमारी में दफ्तर से छुट्टी लेकर सगी बहिन जैसी सेवा करी है हमाई, हम कैसे आपको दुखी देख सकत हैं" – बिसाहू की आवाज भर्राने लगी। कुछ देर तक तीनों एक दूसरे को बारी–बारी से देखते रहे। एक अजीब सा सन्नाटा उनके बीच आकर पसर गया था, जिसे भंग बिसाहू ने ही किया – "का सोचत हो राजा भैया, हम कछु आपके काम आ सकत हैं तो हमपे किरपा करो, जो औसर हमसे न छीनो, हम गरीब, चाकर लोगन को जनम ही मालिक लोगन की सेवा के लाने होत है, आपने हमें कबहूं न गरीब समझो और न चाकर, बराबरी पे बैठाओ है सदा"

"ठीक है काका, कल हम दीपक से बात करेंगे" – नंदन ने कहा – "अभी तो चाय पीने की इच्छा हो रही है .. माँ आज चाय नहीं मिलेगी क्या।"

"छोटी मालकिन आप बैठो, आज हम चाय बनावत हैं"

किचिन में चाय बनाते बिसाहू के चेहरे पर दोनों को संतोष की अद्‌भुत दीप्ति दिखाई दे रही थी।

पहले पाठक का मत

छाया अपने भाई रिपुदमन सिंह के कोविड संक्रमित हो जाने की सूचना मिलने के बाद विह्वल हो जाती है। वह उनसे मिलने को व्याकुल हो उठती है जबकि राजशाही प्रवृत्ति के रिपुदमन का पच्चीस वर्षों से उससे कोई सम्बंध नहीं है। छाया के प्रेम विवाह से नाराज रिपुदमन ने उसके इस कदम को खानदान पर कलंक मान कर उसका त्याग कर दिया था। छाया के पति की भी विवाह के कुछ समय पश्चात ही एक दुर्घटना में मृत्यु हो जाती है। छाया और रूपेंद्र जब अपने बेटे नंदन को पहली बार मंदिर ले गए थे तब वहाँ बेसुध हालत में उन्हें बिसाहू मिला था जो वर्षों पहले रिपुदमन के अहंकार और क्रोध का शिकार होकर घर छोड़ कर चला गया था। छाया और रूपेंद्र उसे घर ले आए तथा वह घर के काम काज सम्भालने लगा था। वह छाया के इस उपकार को अपने ऊपर ऋण समझता है और जैसे ही उसे ऋण चुकाने का अवसर सामने दिखता है वह उसे चुका भी देता है।

कहानी के समाहार में जो मर्म है, जो करुणा है, जो प्रेम है, जो संवेदना है, जो शक्ति है वह कहानीकार श्री अरुण अर्णव खरे जी को विशिष्ट बनाती है । छाया का बेटा नंदन कभी अपने मामा रिपुदमन से मिला नहीं है लेकिन ममतामयी छाया से मिले संस्कारों के कारण वह मामा के प्रति भी सहृदय और सहिष्णु है। वह अपने डॉक्टर दोस्त से रिपुदमन के इलाज में सहायता करने को कहता है और सफल होता है। कहानी के सभी पात्रों के मनोभावों का विश्लेषण और भाषा की तरलता कहानी को पठनीय बनाती है।

– नवीन कुमार जैन, युवा कहानीकार, बड़ा मलहरा (म.प्र.)